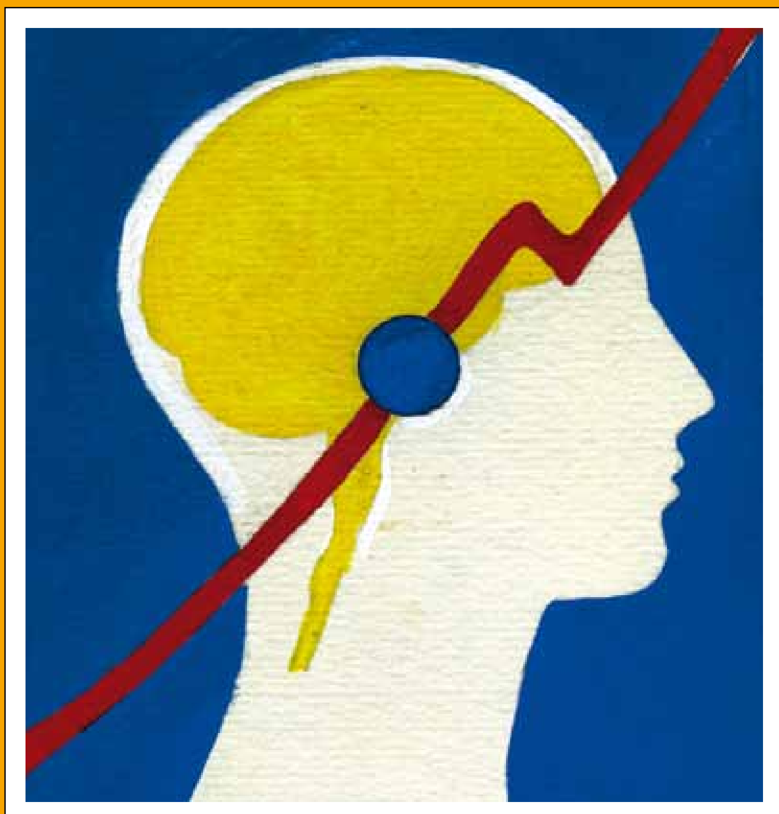
BIHAR YOGA®

उच्च रक्तचाप पर योग का प्रभाव

डॉ. स्वामी शंकरदेवानन्द सरस्वती

प्रत्यक्ष मार्गदर्शन – स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

उच्च रक्तचाप पर योग का प्रभाव

ॐ, प्रेम, मंगलम्

स्वामी निरंजन

उच्च रक्तचाप पर योग का प्रभाव

डॉ. स्वामी शंकरदेवानन्द सरस्वती

प्रत्यक्ष मार्गदर्शन

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती



योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, भारत

उच्च रक्तचाप पर योग का प्रभाव

डॉ. स्वामी शंकरदेवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय द्वारा प्रकाशित
प्रथम संस्करण 1994

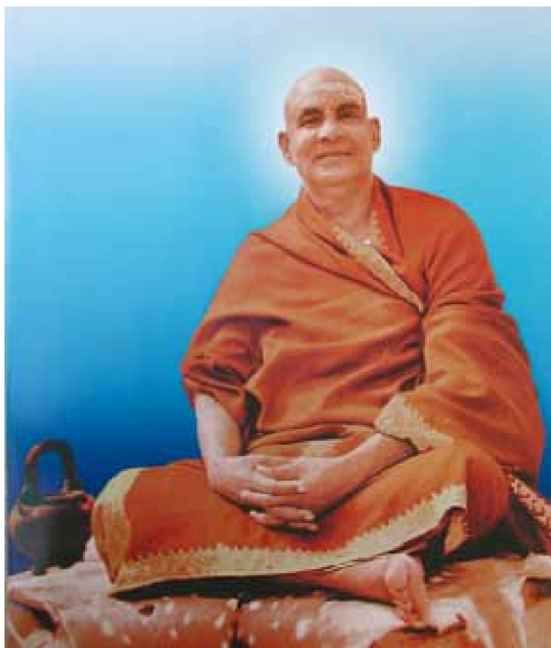
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित
द्वितीय संशोधित संस्करण 2008
पुनर्मुद्रण 2022

प्रकाशक एवं वितरक—योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु,
पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार

वेबसाइट: www.biharyoga.net
www.satyamyogaprasad.net

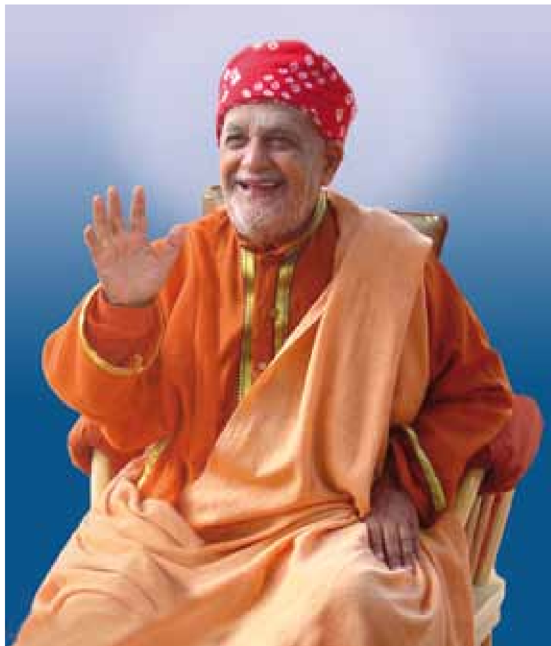
मुद्रक—थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड, नई दिल्ली 110001

ISBN: 978-81-85787-99-2



सविनय समर्पण

स्वामी शिवानन्द सरस्वती के चरणों में
जिन्होंने स्वामी सत्यानन्द सरस्वती को योग के रहस्यों की शिक्षा दी



नमो नारायण

योगविद्या भारतवर्ष की सबसे प्राचीन संस्कृति और जीवन-पद्धति है तथा इसी विद्या के बल पर भारतवासी प्राचीनकाल में सुखी, समृद्ध और स्वस्थ जीवन बिताते थे। जब से भारत में योग विद्या का ह्रास हुआ, तभी से भारतवासी गरीब, दुःखी और अस्वस्थ हैं। पूजा-पाठ, धर्म-कर्म से शान्ति मिलती है और योगाभ्यास से धन-धान्य, समृद्धि और स्वास्थ्य। भारत में सुख, समृद्धि, शक्ति और स्वास्थ्य के लिए हर व्यक्ति को योगाभ्यास करना चाहिए।

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती
रिखियापीठ, 2005

विषय-सूची

प्राक्कथन	*ix*
भूमिका	*xiii*
द्वितीय संस्करण की भूमिका	*xv*
हिन्दी संस्करण की भूमिका	*xviii*
आमुख	*xix*

कारण

रक्त परिसंचरण तंत्र	3
उच्च रक्तचाप	17
चिकित्सीय दृष्टि	26
योग की दृष्टि	33
मानसिक कारण	37
प्राण सम्बन्धी कारण	42
तनाव और व्यक्तित्व	47
जीवन पद्धति	55
आनुवंशिकता और वार्द्धक्य	59
समग्र दृश्य	63

उपचार

योगोपचार	67
मानसिक समस्याओं का निराकरण	73
आसन और प्राणायाम	82
यौगिक जीवन पद्धति	96
विश्रान्ति और सजगता	103
ध्यान	112
समग्रात्मक चिकित्सा	125

अभ्यास

सम्पूर्ण प्रशिक्षण कार्यक्रम 137
आसन 143
सूर्य नमस्कार 150
पवन मुक्तासन 160
प्राणायाम 171
ध्यान के अभ्यास 180
योगनिद्रा 186

परिशिष्ट

निम्न रक्तचाप 197
आहार सम्बन्धी परामर्श 201
जीवन के स्तम्भ 205
ग्रन्थ-सूची 209

रेखाचित्र

रक्त परिसंचरण तंत्र 4
हृदय और आत्मा का अधिष्ठान 10
प्राणिक शरीर 45
अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ 52
चक्रों के स्थान 54
मस्तिष्क 115
स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र 118
आंतरिक अंग 208

प्राक्कथन

*डॉ. श्रीनिवास, एम.डी.**

11 जून 1978

प्राथमिक या अज्ञात हेतुक उच्च रक्तचाप (एसन्शियल हाइपरटेन्शन) अर्जित किया जाता है, अवाप्त होता है, आनुवंशिकता से नहीं आता, पुरखों द्वारा प्रदान नहीं किया जाता। यद्यपि जीन्स इस रोग की उत्पत्ति का कारण बन सकते हैं, किन्तु यह अव्यवस्था अधिकांश रूप से मनोदैहिक है।

उच्च रक्तचाप के रोगियों का उपचार समस्याओं से भरा है। रक्तचाप की असामान्यता की सीमाओं का चिकित्सीय निश्चयन भ्रामक और अस्पष्ट है। इसकी सह्य-सीमा में, जो अभी तक पूर्णतया निर्धारित नहीं है, आश्चर्यजनक व्यक्तिगत एवं जातीय भिन्नताएँ हैं। मेरे रोगियों में एक एंग्लो-इण्डियन महिला 50 वर्ष की अवस्था में 320 मि.मी. पारा प्रकुंचन रक्तदाब (सिस्टोलिक) और 260 मि.मी. पारा अनुशिथिलन रक्तदाब (डायस्टोलिक) के होते हुए भी अपनी देखभाल स्वयं कर लेती थी। वर्षों बाद वह अन्ततोगत्वा रक्ताधिक्य हृत्पात और अलिन्द तन्तु विकम्पन (ऑरिकुलर फिब्रिलेशन) के कारण दिवंगत हो गई।

नेपाल और बिहार में सामान्य रक्तचाप परास के सांख्यिकीय अध्ययन में मैंने पाया कि मांसाहारी, समृद्ध, शहरी, स्वस्थ, 21-30 वर्ष आयु वर्ग

---

* निदेशक-प्रोफेसर– इन्दिरा गाँधी हृदय रोग संस्थान, बिहार पटना, (अवकाश प्राप्त); निदेशक– योग शोध संस्थान, पटना, इला लेमेन केवोट फेलो (हार्वर्ड- सं. रा. अमेरिका), हास्केलो फेलो (कैनसास, अमेरिका), (अवकाश प्राप्त); प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष– औषधि विज्ञान, पटना मेडिकल कॉलेज अस्पताल; सदस्य– अन्तर्राष्ट्रीय योग मित्र मण्डल शोध समन्वय केन्द्र, बिहार योग विद्यालय, बिहार, भारत।

के उत्तरदायी पुरुषों में रक्तचाप का पाठ्यांक उच्चतम लगभग 140–150/ 80–90 मि.मी. पारा था। बिहार के विश्वविद्यालयों के स्नातकोत्तर के छात्रों में तथा नेपाली रेजीमेन्ट के सैनिकों में अनेक अत्यधिक उच्चतम पाठ्याँक भी मिले। रक्तचाप के इस परास को केवल गाँवों के 80 वर्षीय या उससे अधिक उम्र के वृद्धों ने ही पार किया। नेपाल में उच्चतम रक्तचाप (166/101 मि.मी. पारा) व्यापारियों और सरकारी कर्मचारियों में (समृद्ध और आराम तलब राणाओं को छोड़) पाया गया। निम्नतम रक्तचाप (औसत 104/56 मि.मी. पारा) तामांगों, लामाओं तथा भोटियों में पाया गया। प्रकुंचन रक्तचाप 140 मि.मी. पारा और अनुशिथिलन रक्तचाप 90 मि.मी. पारा से अधिक रक्तचाप बिहार के कुल स्वस्थ व्यक्तियों के 20% में तथा नेपाल के कुल स्वस्थ व्यक्तियों के 30% में पाया गया। इस परीक्षण से यह स्पष्ट हुआ कि उच्च रक्तचाप की पृष्ठभूमि में चिन्ता एक प्रमुख कारण है। उम्र, लिंग, शारीरिक गठन, आहार, तम्बाकू सेवन और जलवायु अपेक्षाकृत कम महत्त्व रखते हैं। यह तो प्रत्यक्ष है कि समाज में रक्तचाप की समस्या का निदान काफी शीघ्र होना चाहिए तथा यह कार्य किशोरावस्था से प्रारम्भ किया जाना चाहिए। योग से अधिकतम लाभ हेतु इसे भी युवाओं और किशोरों द्वारा अपनाया जाना चाहिए।

आदर्श उच्च रक्तचाप निरोधी कोई आदर्श औषधि उपलब्ध नहीं है। जो भी औषधियाँ हैं वे सभी अनेक प्रकार के दोषों और प्रतिकूल प्रभावों से युक्त हैं। जिनमें से कुछ अत्यन्त गंभीर प्रभाव डालती हैं। उनके अल्प और दीर्घकालीन प्रभाव अनुमान योग्य भी नहीं हैं। उनकी विषाक्तता चिकित्साजन्य रोग उत्पन्न कर सकती है, भले ही वे स्वयं कष्ट को दूर न कर पायें। उनके घातक प्रभावों में से सबसे बुरा तो यह हो सकता है कि मन, स्वैच्छिक तन्त्रिका-तन्त्र, एन्जाइम और रासायनिक मध्यस्थ प्रभावित हो जायें। गेंग्लियान अवरोधक, अनुकम्पीरोधीसम (सिम्पैथोलिटिक), एन्जाइम निरोधी तथा प्रशामक (डिप्रेसेन्ट) सामान्य शरीर वृत्ति को अपने कब्जे में लेकर तथा उसे जकड़कर पूर्णतया ध्वस्त कर देते हैं, जिससे वह अस्तव्यस्त, क्षतिग्रस्त और जर्जर हो जाता है। इन औषधियों का प्रयोग करने वाला व्यक्ति अपनी शारीरिक प्रक्रियाओं पर नियंत्रण खो देता है। इस प्रकार रोग के प्रकट होने से अपनी स्वतंत्रता से वंचित और निरस्त्र होकर औषधियों पर अनुचित आश्रय जैसी सूक्ष्म गुलामी से बड़ा दुर्भाग्य और क्या होगा?

औषधि सेवन के अतिरिक्त अन्य सुविज्ञात उपाय भी हैं, जो रक्तचाप को निश्चित रूप से कम कर देते हैं। उदाहरणार्थ–वजन में कमी, अल्प लवण लेना, चावल और फलों से युक्त शाकाहारी भोजन, लहसुन का सेवन, उमड़ती चिन्ताओं तथा उग्र उत्तेजनाओं से मुक्ति आदि। योगाभ्यास भी निश्चित रूप से ऐसा ही एक अतिरिक्त उपाय है। यह आसानी से सीखने योग्य, सर्वस्वीकार्य, निरापद और कम खर्चीला है। यह अन्त:करण में छिपे हुए तनावों को समाप्त कर व्यक्ति को उसके शरीर और मन पर पूर्ण नियंत्रण प्रदान करता है।

पटना योग शोध संस्थान द्वारा यह प्रमाणित किया जा चुका है कि सामान्य आराम और प्रशामकों (जैसे डायजेपाम) की अपेक्षा योग द्वारा रक्तचाप को अधिक और चमत्कारी ढंग से कम किया जा सकता है।

योग शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक और अतीन्द्रिय स्वास्थ्य को उन्नत करता है। यह शारीरिक क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं और अनुक्रियाओं को अधिक सूक्ष्म, संवेदनशील और स्वस्फूर्त्त बनाता है। यह शरीर के सभी संस्थानों को व्यायाम करा उन्हें ऊर्जा प्रदान करता है तथा सभी अंगों को परिशुद्ध करता है। आसनों की परिकल्पना इस प्रकार की गई है कि उनका प्रभाव अत्यन्त व्यापक होता है, यहाँ तक कि परिसरीय तंत्रिकाओं के प्रारम्भ से लेकर अंतिम सिरे तक, लघुतम, सूक्ष्मतम और क्षीणतम कोशिकाओं पर, वासा वसोरम पर और पोषक धमनियों पर, जो कठोर अस्थियों में प्रवेश कर भ्रमण एवं मज्जा की आपूर्ति करती हैं तथा शरीर की प्रत्येक कोशिका पर, चाहे वे शरीर के किसी भी भाग में अवस्थित हों, उनका प्रभाव पड़ता है।

योग अभ्यास करने वाले की जीवन शैली बदल देता है। हम परिवर्तनशील जीवन की परिस्थितियों और अवस्थाओं को स्वीकार कर स्वयं को उनके अनुकूल ढालना सीखते हैं, तथा अपने परिवेश को आनन्दपूर्वक विवेक सहित अनासक्त भाव से स्वीकार कर लेते हैं। यह मनुष्य को उसके अस्तित्व की वास्तविकता के प्रति जागृत करता है तथा उत्साह, उमंग, जोश और रस प्रदान करता है। फिर वह अकर्मण्य हो भाग्य या नियति को नहीं स्वीकारता। योगी हतोत्साही, पश्चाताप और शिकायतों से भरा हुआ, छिद्रान्वेषण में लीन तथा निन्दा करने वाला नहीं होता। वह तो प्रसन्नतापूर्वक चुनौतियों को स्वीकार करता है। वह उस ब्रह्माण्डीय जादूगर का अंश है, जो न दबावों से दबता है और न तनावों से हार मानता है।

उच्च रक्तचाप के उपचार और निरोध के लिए योग ने निश्चित और सटीक उपाय दिया है। इसका प्रयोग अकेले अथवा औषधियों एवं अन्य उपायों के साथ किया जा सकता है। औषधि पीड़ा का निवारण करती है और योग उस काँटे को ही निकाल देता है।

इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसकी प्रस्तुति विवेक परक और वस्तु परक है। यह दक्षतापूर्वक अन्तर्ग्रस्त समस्याओं का चित्रण करती है तथा एक अतिरिक्त और वैकल्पिक उपचार पद्धति के रूप में योग के प्रयोग हेतु सटीक तर्क उपस्थित करती है।

विद्वान् लेखक ने विषय का प्रतिपादन अत्यन्त उत्तम ढंग से किया है। उन्होंने मनुष्य जाति को कष्ट दे रही एक अत्यन्त सार्वजनिक बीमारी से सम्बन्धित स्वास्थ्य और स्वास्थ्य विज्ञान पर एक उपयोगी और प्रशंसनीय पुस्तक का प्रकाशन कर मानवता की अति उत्तम सेवा की है।

योग का अभ्यास होना चाहिए। यह हमारे दैनिक जीवन में समाविष्ट होना चाहिए तथा इसे हमारे जीवन शैली और दैनिक कार्यक्रम में अनिवार्य अवयव और अंग के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। इस तकनीक को उत्कण्ठा के साथ जारी रखना चाहिए और मनोयोग से इसका परिपालन करना चाहिए।

प्राणी मात्र को उच्चरक्तचाप के विनाशकारी प्रभाव से बचाना, औषधियों के खतरे से निरापद करना तथा विशेषज्ञों द्वारा उन पर अध्यारोपित कष्टों, सतत् समायोजन के नीरस कार्य, समझौतों और पाबन्दियों की खीझ से मुक्त करना आवश्यक है।

वैकल्पिक उच्च रक्तचाप निरोधी पथ्यापथ्य नियम के रूप में लेखक ने योग की जो इतनी उपयुक्त और खुलेआम वकालत की है, वह अति उत्तम एवं प्रशंसनीय है।

भूमिका

अनेक मनोदैहिक रोगों में उच्च रक्तचाप ही ऐसा रोग है, जिसका उपचार आधुनिक और प्राचीन औषधियों के साथ योग को संयुक्त कर, सरलता से किया जा सकता है। यह रोग तो अन्य सभी रोगों का एक प्रतीक मात्र है, जिनसे आज मनुष्य पीड़ित है तथा जो प्रत्यक्षत: हमारे अगणित कष्टों के कारण हैं। प्रत्येक वैयक्तिक रोग के बाह्य कारणों में भिन्नता हो सकती है, जिसके कारण असंख्य अलग-अलग रोग उत्पन्न होते हुए प्रतीत होते हैं, परन्तु रोगों का यह बाहुल्य एक ही वर्णक्रम उपस्थित करता है तथा प्रत्येक रोग इसी वर्णक्रम का एक अंश होता है। सभी रोगों का मूलकारण एक ही है– अपनी यथार्थ प्रकृति का अज्ञान तथा अपने वास्तविक स्वरूप की चेतना का अभाव।

यह पुस्तक आपको अपने शरीर तथा इसके शारीरिक, प्राणिक, मानसिक, आध्यात्मिक और अतीन्द्रिय परिवर्तनशील संघटकों की जानकारी प्रदान करने में सहायक होगी। जब आप यह समझना प्रारम्भ करेंगे कि आप अपने को जो समझते थे उससे अधिक भी कुछ हैं, तब आप शाश्वत शांति एवं रोग से मुक्ति की ज्योति जलायेंगे। आपको वह शक्ति प्राप्त होगी, जो रोगों को उत्पन्न होने से रोकेगी, चाहे वह रोग उच्च रक्तचाप हो, कैंसर हो, या साधारण जुकाम हो।

उच्च रक्तचाप के निवारण हेतु उपलब्ध साधनों के विकल्प की मांग के फलस्वरूप 'उच्च रक्तचाप का योगोपचार' नामक छोटी पुस्तिका का संवर्द्धित रूप यह प्रस्तुत पुस्तक है। विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों के मध्य सेतु निर्माण हेतु तथा लोगों को यह जानकारी देने के लिए कि उच्च रक्तचाप रोग से मुक्ति संभव है एवं रोग के, चाहे उसे कोई भी नाम दिया

गया हो, उन दुष्चक्रों को भंग करने की विधि की जानकारी देना ही इस पुस्तक का उद्देश्य है।

हम डॉ. स्वामी विवेकानन्द, एम. बी. बी. एस; एम. ए. एन. जेड. सी. पी.; डी. पी. एम. के समीक्षात्मक सम्पादन हेतु तथा डॉ. श्रीनिवास, एम. डी., निदेशक–योग शोध संस्थान, पटना (बिहार) के प्रति आभार प्रदर्शित करते हैं, जिनके मार्गदर्शन और प्रयोगात्मक कार्य से काफी सहायता मिली है।

द्वितीय संस्करण की भूमिका

आज विश्व में उच्च रक्तचाप सामान्य रोगों में से एक है तथा प्रेस और मीडिया के माध्यम से अधिकाधिक व्यक्ति इसके प्रति सजग हो रहे हैं। हृदय रोग तथा उच्च रक्तचाप का भय इतना अधिक है कि कुछ देशों में तो इन भयंकर बीमारियों का नाम लेने मात्र से ही लोगों के हृदय की धड़कन बढ़ जाती है तथा रक्तचाप भी उच्च हो जाता है।

जब से इस पुस्तक का प्रकाशन हुआ है, योग, ध्यान, विश्रान्ति, जैव पुनर्निवेश तथा शरीर पर से तनाव के प्रभावों को कम करने वाली विधियों की जानकारी प्राप्त करने वाले मनुष्यों की संख्या निश्चित रूप से बढ़ती जा रही है। वस्तुत: समुचित व्यायाम, अच्छा आहार और विश्रांति की आवश्यकता विशेष रूप से निरुद्यमी पेशों तथा व्यवसायी वर्गों के लिए है। इन आवश्यकताओं की चेतना के विकास के साथ नवीन मेडिकल पत्रिकाओं में हृदय रोग से मरने वालों की संख्या में कमी होने के समाचार प्राप्त हुए हैं। यह परिणाम बड़ा ही उत्साहवर्द्धक है। यद्यपि जिस प्रकार हम जीवन अवधि को संख्यात्मक रूप से बढ़ाते जा रहे हैं, उसी प्रकार हमें उसकी गुणवत्ता पर भी ध्यान देना चाहिए। इस निमित्त पूर्ण, सक्रिय और सुखी जीवन सुनिश्चित करने हेतु योग एक उत्तम साधन है।

यह पुस्तक अनेक वर्ग के लोगों को ध्यान में रखकर लिखी गई है, जो उच्च रक्तचाप से पीड़ित हैं या चिन्तित हैं या उसके उपचार से सम्बद्ध हैं।

डॉक्टर इस पुस्तक को उच्च रक्तचाप सम्बन्धी शरीर क्रिया विज्ञान की दृष्टि को योग की विचारधारा से समृद्ध किये गये एक सरल विवेचन के रूप में ग्रहण कर सकते हैं। यह डाक्टरों की विशुद्ध शारीरिक दृष्टि को, जो अधिकतर डॉक्टरों को पढ़ायी जाती है तथा जिसके उपयोग के वे अभ्यस्त

होते हैं, तथा रोगों के प्रति उनकी दृष्टि को अधिक सूक्ष्म एवं व्यापक करेगा। डॉक्टर अपने रोगियों को योगाभ्यास का परामर्श भी दे सकते हैं, चाहे वे उन्हें किसी आश्रम में भेजें या किसी निपुण योग शिक्षक के पास भेजें। इससे भी उत्तम यह होगा कि डॉक्टर स्वयं योग का प्रशिक्षण प्राप्त कर दूसरों को इसकी शिक्षा प्रदान करें।

ऐसे योग शिक्षक जो योग को उपचार पद्धति के रूप में अपनाना चाहते हैं, उन्हें रोग के समग्र स्वरूप से, उपचार के दौरान जिन खतरों का सामना करना पड़ सकता है, उनसे तथा अपने विद्यार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुसार योग के आसनों, प्राणायामों एवं विश्रान्ति के अभ्यासों के सही उपयोग और वांछित नियमों से अवश्य परिचित होना चाहिए। इस दिशा में उनके लिए यह अधिक विवेकपूर्ण होगा कि वे सरल साधना करें, किसी समर्थ गुरु के निर्देशन में कुछ दिन कार्य करें एवं किसी उदारमना डॉक्टर के सम्पर्क में रहें, जो उन्हें यह समझने में सहायता करें कि जिस रोग का उपचार वे करना चाहते हैं, वह वस्तुत: क्यों है, उसकी गंभीरता और अवस्था तथा संभावित खतरे क्या हैं।

उच्च रक्तचाप के रोगी को चाहिए कि वह किसी विशेषज्ञ के मार्गदर्शन में इस पुस्तक का उपयोग सैद्धान्तिक ज्ञान एवं व्यावहारिक प्रयोग हेतु करे। यदि हम अपने आपको बदलना, विकसित करना तथा रोग मुक्त करना चाहते हैं, तो उच्च रक्तचाप के विषय में पूर्ण जानकारी हमारे लिए महत्त्वपूर्ण होगी, क्योंकि सर्वप्रथम हमें उन तथ्यों के प्रति सजग होना पड़ेगा, जो हमारे रक्तचाप को बढ़ाते हैं, जैसे, जीवन और स्वयं के प्रति जो अपनी मानसिकता तथा अपनी जीवनशैली है। अंतत: मानसिकता ही सबसे महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यही हमारी मनस् शक्ति को सकारात्मक या नकारात्मक दिशा में संचालित एवं प्रभावित करती है।

एक बार जब योग और विश्रान्ति की प्रक्रिया द्वारा उपचार प्रारम्भ हो गया हो तब रक्त संचरण तन्त्र की संरचना एवं शेष शरीर और मन के साथ इसके सम्बन्ध तथा इसमें कैसे अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है, इसका भी ज्ञान निश्चित रूप से रोग मुक्ति की प्रक्रिया को त्वरित करेगा। उपचार की पूरी प्रक्रिया में, जिसमें कुछ महीनों से लेकर वर्षों तक का समय लग सकता है, यह पुस्तक मार्गदर्शन करेगी।

जनसाधारण, जिन्हें उच्च रक्तचाप नहीं है, परन्तु जो इस रोग के विषय में अधिक जानना चाहते हैं, केवल जिज्ञासावश या फिर वे ऐसी परिस्थिति में

हैं, जिसमें उच्च रक्तचाप हो जाने की संभावना है, उदाहरणार्थ– तनाव तथा व्यस्तता से पूर्ण व्यवसाय या नौकरी में, तो उन्हें ध्यानपूर्वक इस पुस्तक का अध्ययन कर लेना चाहिए। यह न केवल उनका सामान्य ज्ञान बढ़ायेगी, वरन् यदि वे इन परामर्शों का अपने जीवन में उपयोग करेंगे, तो उच्च रक्तचाप होने का खतरा भी उन्हें नहीं रहेगा।

चूँकि उच्च रक्तचाप प्रारम्भ में अपेक्षाकृति लक्षण रहित (विशेषकर पीड़ा रहित) होता है, इसलिए हम इसकी उपेक्षा कर देते हैं अथवा जब तक वह जटिल रूप धारण नहीं कर लेता, या फिर पीड़ा, रोग, असीमित डॉक्टरी बिल के भार से घटती जा रही हमारी आयु इस बात की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट नहीं करती कि हमें अपनी स्थिति को सुधारने के लिए कुछ करना ही है। हम सभी जानते हैं कि उपचार की अपेक्षा रोग का निरोध उत्तम है और जीर्ण एवं अधिक जटिल स्थिति की अपेक्षा प्रारम्भिक अवस्था में रोग मुक्ति सरल है। योग के ही विषय में अनेक भ्रान्तियाँ हैं। फिर भी यह मनुष्य का दुर्भाग्य है कि जब वह जान भी जाता है तो भी उस पर ध्यान नहीं देता।

उच्च रक्तचाप के प्रति योग की दृष्टि के कुछ महत्त्वपूर्ण पक्षों को स्पष्ट करने, और उन पर प्रकाश डालने हेतु इस पुस्तक का संशोधन किया गया है, विशेष रूप से अभ्यास खण्ड का।

प्राय: जब हमें वांछित परिणाम नहीं मिलता, चाहे योग में या अन्य किसी उपचार में, तो हम उस पद्धति को दोष देने लगते हैं, पर यह जानने का प्रयास नहीं करते कि कहीं हमने अभ्यास में कोई भूल तो नहीं की है या फिर और अधिक प्रयास की आवश्यकता तो नहीं है।

हमारा यह अनुरोध है कि जो व्यक्ति इस पुस्तक को पढ़ें और पढ़कर योग मार्ग का अनुसरण आरम्भ करें, वे अपने अन्त:कारण से उच्च रक्तचाप के भय का उन्मूलन कर दें तथा उन व्यक्तियों तक योग का संदेश पहुँचाएँ, जिन्हें दुर्भाग्यवश योग के विषय में जानकारी नहीं है।

हिन्दी संस्करण की भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक 'द इफेक्ट्स ऑफ योग ऑन हाइपरटेन्शन' का अविकल हिन्दी रूपान्तरण है। आज भारत में भी उच्च रक्तचाप एक सामान्य रोग हो गया है। जीवन में जैसे-जैसे उपभोक्ता-संस्कृति का प्रभाव बढ़ता जा रहा है, जीवन में एक आपा-धापी, भागदौड़, पद, यश, ऐश्वर्य और मर्यादा के शिखर पर पहुँचने का एक उन्माद-सा आ गया है। मानव अपनी सीमाओं, क्षमताओं, महत्त्वाकांक्षाओं और अपनी आवश्यकताओं में सन्तुलन लाने की बात भूल-सा गया है। उसके सामने बस एक उन्मादी स्पर्धा है। उसे न अपनी ओर देखने का अवकाश है और न उसमें क्षमता है। वह इतना बहिर्मुखी हो गया है कि वह अपने घर (अपने सच्चिदानन्द स्वरूप, आत्मा) में लौटने का रास्ता भूल गया है।

फलस्वरूप वह व्याधियों की क्रीड़ाभूमि बन गया है। आये दिन कोई-न-कोई व्याधि, जिनमें अधिकांश मनोदैहिक हैं और अपने ही द्वारा, अपने आहार, विहार और विश्राम की उपेक्षा कर आमंत्रित की जाती हैं।

इस परिप्रेक्ष में भारत के हिन्दीभाषी क्षेत्र के मनुष्यों के कल्याण हेतु, उनके प्रति करुणापूर्ण भाव से बिहार योग विद्यालय, मुंगेर के परमाचार्य परमहंस निरंजनानन्द जी की प्रेरणा से इस अत्यन्त उपयोगी पुस्तक का हिन्दी संस्करण प्रस्तुत किया जा रहा है, जो एक साथ ही चिकित्सकों, रोगियों और सामान्य मनुष्य के लिए समान रूप से उपयोगी है।

आमुख

हमारा यह मनौदैहिक-संकुल सृष्टि का एक चमत्कार है, जो परिकल्पना में दुर्बोध और सूक्ष्म, दोनों है। इसमें निवास करने वाला मानव इसके आन्तरिक क्रिया-कलापों के विषय में विस्मयोत्पादक और नये रहस्यों का अनुसंधान करता जा रहा है, जो मानव का अपने ज्ञान, विवेक और चेतना के उद्घाटन में सहायक है। यह ज्ञान उसे रोग और कष्ट के दलदल से निकाल कर उत्तम स्वास्थ और दीर्घजीवन की ओर अग्रसर कर रहा है।

सृष्टि का यह प्रत्यक्ष चमत्कार उच्च रक्तचाप जैसे रोगों के प्रति इतना प्रवण क्यों है? रोग का आखिर कारण क्या है? अपनी महती प्रौद्योगिक प्रगति के बाद भी आधुनिक विज्ञान आज इन प्रश्नों का उत्तर देने में असमर्थ है। परन्तु योग इन समस्याओं की पूरी जानकारी दे सकता है– उच्चतर चेतना के आयामों में ध्यान के अनुभवों द्वारा निष्कर्षों तक पहुँचने में सहायता कर सकता है।

शरीर और मन की गतिविधियों और रोग की अवस्था में उनके क्रिया-कलापों में उत्पन्न अव्यवस्था की एक सैद्धान्तिक रूपरेखा तथा उसके इस असन्तुलन को सुधारने एवं अधिक सुन्दर स्वास्थ्य तथा विवेक प्राप्त करने के निमित्त परिकल्पित सटीक अभ्यासों की सही रूपरेखा योग विज्ञान प्रस्तुत कर सकता है। योग उच्च रक्तचाप से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कर सकता है, परन्तु उस पथ पर चलना तो आपको ही होगा। रोग मुक्ति के इच्छुकों को ही चलना होगा। शरीर, उसके ऊर्जा तन्त्र, मन, आत्मा एवं उनके पारस्परिक सम्बन्धों के वर्द्धित ज्ञान के द्वारा हम अधिक सुव्यवस्थित, अधिक समन्वित जीवन जीना सीख सकते हैं। स्वास्थ्य तो उसकी स्वाभाविक परिणति है ही।

शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के निमित्त मनुष्य को अपने मनोदैहिक-संकुल, उसकी आकांक्षाओं और आवश्यकताओं का ज्ञान प्राप्त

करना आवश्यक है, जिस प्रकार मोटर कार के लिए अच्छे चालक, सफाई-धुलाई, स्नेहन, पेट्रोल, ग्रीज, टायर समायोजन इत्यादि की आवश्यकताओं को उसका मालिक जानता है। मनुष्य इसीलिए बीमार है कि उसे अपने शरीर और मन का, उनकी आवश्यकताओं का ज्ञान नहीं है तथा वह उन्हें सुचारु रूप से क्रियाशील रखना नहीं जानता। इस मनोदैहिक वाहन को पूर्ण चालू हालत में रखने के लिए योग की परिकल्पना की गई है, जिससे जीवन आनन्दमय, उन्मुक्त और तृप्तिदायक हो जाय।

योग इसकी प्राप्ति हेतु एक उदात्त दर्शन एवं व्यावहारिक साधन प्रस्तुत करता है तथा अब डॉक्टर भी उन वर्तमान दुविधाओं का समाधान योग दर्शन की विस्तृत सम्भावनाओं में प्राप्त कर रहे हैं, जो डॉक्टर और रोगी दोनों के समक्ष थी। आधुनिक चिकित्सा ने योग जैसे रत्न का अनुसंधान कर लिया है और वह औषधोपचार के साथ योग को समन्वित कर रहा है। योग और औषधि का परिणय पूर्ण है, अब दोनों को एक-दूसरे की महत्ता को समझना होगा।

योग का अर्थ है मिलन तथा उपचार के संदर्भ में योग का तात्पर्य है सभी चिकित्सा पद्धतियों का एकजुट होना–एलोपैथी, होमियोपैथी, कीरोपैथी, आयुर्वेद, पोलीपैथी, इत्यादि। डॉक्टर अथवा उपचारकर्त्ता को सभी पद्धतियों का अनुभव होना चाहिए, जिससे वह प्रत्येक में से समुचित बिन्दुओं को चयन कर ले और पुन: उनके मिश्रण का सार तत्त्व निकाले, जो दार्शनिकों का रत्न कहा जाता है। अतएव योग वह ढाँचा है जिस पर प्राचीन पद्धति को सुलझाया और नवीन रीति को विकसित किया जा सकता है। आधुनिक युग की समस्याओं का जिनमें उच्च रक्तचाप भी एक है, सामना करने हेतु अधिक अभीष्ट पद्धति का विकास किया जा सकता है। औषधि और योग के संयोग से डॉक्टर और रोगी दोनों उच्च रक्तचाप में व्याधि-प्रक्रिया की अधिक अच्छी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, जिससे प्राप्त अनुभव के आधार पर अपने भीतर परिपक्व और विकसित अवस्था को संवर्द्धित कर सकते हैं। इस प्रकार हम न केवल शारीरिक रूप से स्वस्थ होंगे, वरन् एक गतिशील व्यक्तित्व, मानसिक और भावनात्मक स्थिरता तथा गूढ़ ज्ञान एवं अन्तर्दृष्टि भी प्राप्त करेंगे। यही होगी वास्तविक रोगमुक्ति, जिसमें डॉक्टर के दायित्व का पालन निहित है तथा जो रोगी को उच्चतर क्षेत्रों एवं परमचेतना से सायुज्य की ओर अग्रसर करेगी।

कारण

रक्त परिसंचरण तंत्र

हृदय और रक्त परिसंचरण तंत्र के इस सरल विवरण के बाद आप अपनी कल्पना में एक चित्र बना सकेंगे कि वस्तुत: आपके शरीर के अन्दर क्या घट रहा है। इस ज्ञान के बाद आप शारीरिक प्रक्रिया के प्रति अपनी चेतना को और अधिक संवेदनशील बना सकते हैं। उच्च रक्तचाप से मुक्ति की उत्कट इच्छा या आपकी चेतना को अधिक उच्चतर स्तरों पर ले जाने वाली योग की विधियों में गहरी अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने की इच्छा शरीर के ऐसे ही ज्ञान के बाद प्रारम्भ होती है। शारीरिक और मानसिक संरचना की चेतना के विकास में यह ज्ञान सहायक होता है। उत्तम स्वास्थ्य लाभ और योग के उच्चतर अभ्यासों में सफलता के निमित्त इन आन्तरिक क्रियाशीलनों का विस्तृत मानसदर्शन आवश्यक है। आगे चल कर स्वस्थ रहने एवं मन को शक्तिशाली बनाकर भावी रोगों का निरोध करने में ये समर्थ बनाते हैं।

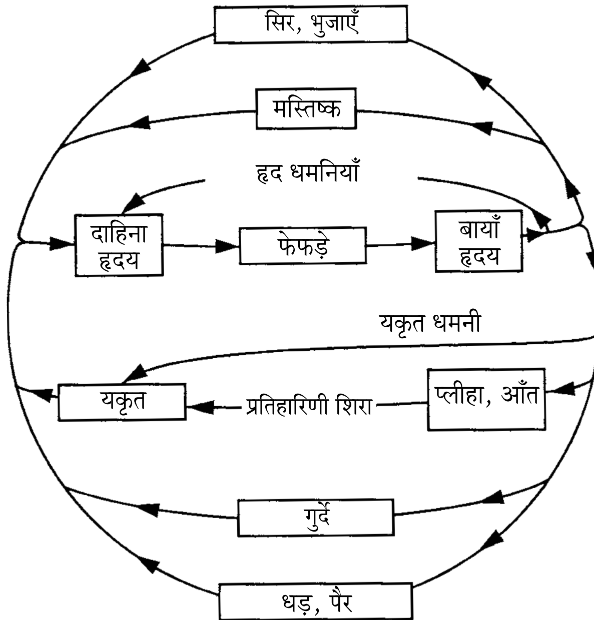
योग आत्मानुसन्धान, आत्मरक्षा और आत्मोपचार की एक वैज्ञानिक पद्धति है। शरीर के आन्तरिक कार्यों को यौगिक और चिकित्सीय, दोनों दृष्टि से जानने का सैद्धान्तिक लाभ है। परन्तु इस ज्ञान के व्यावहारिक परिणामों का अनुभव तो योग की विधियों के नियमित अभ्यास का प्रतिफल है। आपके शरीर तन्त्र में असीमित आश्चर्य भरे पड़े हैं। योग तो उनके अन्वेषण का साधन है।

सामान्य अवधारणा

रक्त परिसंचरण तन्त्र की शरीर-वृत्ति अत्यन्त जटिल है। यह तन्त्र शरीर की प्रत्येक कोशिका को ऑक्सीजन एवं पोषण-समृद्ध जीवन-प्रदायी-तरल की आपूर्ति करता है। यह आवश्यक नहीं कि आप इसकी समस्त जटिलताओं को

जान ही लें। आवश्यक है कि आपकी मानसिक आँखों के समक्ष उस रचना का एक चित्र रहे, चाहे वास्तविक या प्रतीकात्मक, जो सम्पूर्ण शरीर में रक्त आपूर्ति करता है तथा जिसके अव्यवस्थित हो जाने पर उच्च रक्तचाप उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार आप अपने शरीर का अधिक अच्छा संचालन करने में समर्थ हो सकेंगे तथा उपचार को भी प्रभावी बना सकेंगे।

रक्त परिसंचरण तन्त्र में हृदय, रक्तवाहिकाएँ और स्वयं रक्त सम्मिलित हैं। हृदय वृक्ष की जड़ के सदृश है। इसी केन्द्रीय बिन्दु से शाखाएँ सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त होती हैं। पुन: प्रत्येक शाखा विभाजित हो क्रमश: सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होती चली जाती है, जब तक उन्हीं कोशिकाओं में विलीन नहीं हो जाती, जिनमें वे रक्त की आपूर्ति करती है। फिर वे क्रमश: बड़ी होती जाती हैं और उसी समानान्तर पथ से हृदय की ओर वापस लौटती हैं। इस प्रकार एक ही मूल से उत्पन्न एक-दूसरे को आच्छादित करते दो वृक्ष हैं। आकृति तो समान होती है, पर संरचना में अन्तर होता है। मुख्य अन्तर उनमें प्रवाहित रक्त की दिशा में होता है।



रक्त परिसंचरण तन्त्र

इस तरह शरीर की मूल इकाइयों कोशिकाओं को आहार आपूर्ति तथा उनसे अपशिष्ट पदार्थों और अशुद्धियों का निष्कासन करने हेतु यह तन्त्र संस्थापित है। शरीर के जीवन हेतु यह एक महत्त्वपूर्ण संस्थान है। यदि किसी कारणवश शरीर के किसी अंग विशेष को रक्त आपूर्ति न हो, तो वह मृत हो जाता है। अत: रक्त परिसंचरण तन्त्र का पूर्ण स्वस्थ स्थिति में रहना नितान्त आवश्यक है।

यदि एक अंग में खराबी आ जाय तो वह सम्पूर्ण शरीर के कार्यों में बाधक बन जाता है, पूरी व्यवस्था अस्तव्यस्त हो जाती है। उसके सन्तुलन और नियमन की समस्वरता भंग हो जाती है तथा शरीर की यात्रा रोगों की दिशा में होने लगती है। उच्च रक्तचाप में यही तो होता है कि सूक्ष्मतर होती धमनिकायें संकीर्ण हो जाती हैं और अंगों का पर्याप्त पोषण अवरुद्ध हो जाता है।

रक्त

रक्त एक अति संश्लिष्ट द्रव है। यह मूलत: जल ही है, जो उसमें तैरती कोशिकाओं से भरा हुआ है। वयस्क व्यक्ति के शरीर भार का लगभग 8% भार रक्त का होता है। इसकी मात्रा भी सामान्यतया 5-6 लीटर होती है। इसके संघटक निम्नलिखित हैं–

- *प्लाज्मा*– इसी तरल में कोशिकायें परिवाहित होती हैं। इसमें 90% जल और जैव ठोस (जैसे, प्रोटीन), हार्मोन, प्रतिपिण्ड और एन्जाइम होते हैं। इसके ही साथ लवण, अपशिष्ट पदार्थ, खाद्य पदार्थ और श्वसन गैसें रहती हैं।
- *कोशिकायें*– इनके दो वर्ग हैं, लाल रक्त कोशिकायें एवं श्वेत रक्त कोशिकायें। लाल कोशिकायें ऑक्सीजन का परिवहन करती है। श्वेत कोशिकायें मवाद बनाने वाले जीवाणुओं, एलर्जी तथा तीव्र और जीर्ण संक्रमणों के विरुद्ध सुरक्षा की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। ये उन विजातीय पदार्थों पर आक्रमण करती हैं, जो किसी प्रकार शरीर सुरक्षा की प्रथम पंक्ति का भेदन कर अन्दर प्रवेश कर जाते हैं। अन्य कोशिका है प्लेटलेट्स, जो रक्त के जमने की प्रक्रिया में सहायक होती है।

रक्त वाहिकाओं में प्रवाहमान रक्त दाब के कारण प्रवाहित होता है। इस दाब को ही रक्तचाप कहते हैं। यह दाब चार प्रक्रियाओं के कारण बढ़ता है–

1. *हृद निकास*– हृदय अधिक बड़ी वाहिकाओं में रक्त पम्प करता है, जो लचीली होती हैं। प्रवाह में पम्प किये गये रक्त की मात्रा कुछ सीमा तक वाहिकाओं में दाब निर्धारित करती है।
2. *परिसरीय प्रतिरोध*– शरीर के अन्तिम दूरस्थ छोरों तक फैली लघु वाहिकाओं में पहुँचने वाले पम्प किये गये रक्त के प्रति जो प्रतिरोध की मात्रा होती है वही है परिसरीय प्रतिरोध। ये वाहिकायें यदि संकीर्ण हो जाती हैं, तो प्रतिरोध की मात्रा सामान्य अवस्था की अपेक्षा अधिक हो जाती है। यही उच्च रक्तचाप का आधारभूत कारण है।
3. *रक्त का गाढ़ापन*– गाढ़े रक्त को पम्प करना कठिन है। इसका अर्थ है कि रक्त जितना अधिक गाढ़ा होगा, रक्तचाप उतना ही बढ़ेगा।
4. *रक्त परिमाण*– वाहिकाओं की सीमा में रक्त की मात्रा जितनी अधिक होगी, रक्तचाप उतना ही अधिक होगा।

रक्त, जो छोटी वाहिकाओं में निरन्तर आगे बढ़ता रहता है, सदैव दबाव की अवस्था में रहता है, क्योंकि हृदय इस बन्द तन्त्र में लगातार रक्त पम्प करता रहता है। दाब में वृद्धि वाहिका दीवालों पर तनाव बढ़ाती है तथा इस दाब का आधिक्य उच्च रक्तचाप उत्पन्न करता है।

रक्त निरन्तर प्रवाहित होता रहता है। रक्तवाहिकाओं में यह तेज गति से आगे बढ़ता रहता है। यदि आप इस गति पर तन्मयता से एकाग्र हों, तो आप क्रमश: इस रक्त के प्रवाह की चेतना विकसित कर लेंगे। कुछ क्षणों के लिए अपनी त्वचा के नीचे होने वाली विभिन्न गतियों के प्रति चैतन्य होना एक अच्छा अनुभव रहेगा। रक्तवाहिका तन्त्र ऑक्सीजन लाकर ऊतकों को सम्पोषित करता है। अपनी आँखें बन्द कर लें। विश्रान्त हो जायें। अपनी चेतना को रक्तप्रवाह के साथ बहने दें।

रक्त वाहिकायें

ये वही नलिकायें हैं, जो रक्त को हृदय से बाहर ले जाती हैं तथा पुन: वापस लाती हैं। वे रक्त के प्रवाह की ऐसी व्यवस्था करती हैं कि प्रत्येक अंग चाहे वह हृदय से कितना भी दूर हो, अपना हिस्सा प्राप्त कर लेता है, अन्यथा हृदय के समीपस्थ अंग उत्तम और शुद्ध रक्त पा जाते और उसे अशुद्ध कर दूरस्थ अंगों को भेजते। इस प्रकार शरीर सुचारु रूप से काम नहीं करता। रक्तवाहिकाओं को धमनियाँ, शिरायें और कोशिकायें कहते हैं।

1. *धमनियाँ*– लचीली या पेशीय भित्ति वाली तीन प्रकार की नलिकाकार संरचनायें हैं।

क) लचीली धमनियाँ हृदय के समीप की बड़ी रक्तवाहिकायें हैं। जब हृदय संकुचित होता है, तो ये फैलती है, क्योंकि इनकी दीवारें लचीले ऊतकों से निर्मित हैं। इस प्रकार ये ऊर्जा संचय करती हैं, और जब तक हृदय पुनः रक्त से भरता है, तब तक रक्तवाहिकायें परावर्त हो रक्त को आगे बढ़ाती हैं। इस प्रकार रक्त एक समान रूप से सतत प्रवाहित होता रहता है। ऐसा नहीं कि कभी रुके, कभी बढ़े, वह सहज प्रवाह सुनिश्चित करता है। लचीली धमनी का सुन्दर उदाहरण है महाधमनी, शरीर की सबसे बड़ी धमनी, जो हृदय से निकलती है।

ख) पेशीय धमनियाँ वितरक धमनियाँ हैं, जो विभिन्न अंगों तक जाती हैं। लचीली धमनियाँ, जो क्रमशः छोटी होती जाती हैं एक विशेष स्तर पर अपना लचीलापन खो देती हैं और पेशीय बन जाती हैं। किसी धमनी की भित्तियाँ जितनी अधिक पेशीय होती हैं उतनी ही अधिक उसकी परिवहन क्षमता तन्त्रिका तन्त्र के सीधे नियन्त्रण में आ जाती है।

ग) धमनिकायें लघुतर पेशीय वाहिकायें हैं, जो स्वयं अंगों की केशिकाशय्या में रक्त प्रवाह को नियन्त्रित करती हैं। इन रक्तवाहिकाओं में प्रवाह बन्द कर देने की भी क्षमता है और आवश्यकतानुसार रक्त को उन क्षेत्रों में प्रेषित भी कर सकती हैं, जहाँ उसकी आवश्यकता अधिक हो। यहीं पर रक्त को अधिकतम परिसरीय प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है।

धमनियों में स्पन्द होता है, जिसे आप अनुभव कर सकते हैं। इनमें सर्वोत्तम स्पन्द कलाई पर अँगूठे की ओर रेडियल धमनी में होता है। प्रत्येक बार जब हृदय संकुचित होता है, स्पन्द होता है। सामान्य वयस्क व्यक्ति में यह प्रति मिनट 60 से 90 बार होता है। वार्द्धक्य या धमनियों के समय से पूर्व कठोर हो जाने से उनकी भित्तियों की फैलने और परावर्त्तित होने की क्षमता कम हो जाती है, जिससे रक्तवाहिकाओं के अन्दर दबाव बढ़ जाता है।

2. *कोशिकायें*– रक्त वाहिकाओं में लघुतम हैं। इनकी दीवारें अत्यधिक पतली होती हैं। इनकी मोटाई एक कोशिका जितनी ही होती है, जिससे ऑक्सीजन और रक्त अपने चतुर्दिक कोशिकाओं में फैल सकते हैं और अपशिष्ट पदार्थ निष्कासित किये जा सकते हैं।

3. *शिरायें*– कोशिकायें मिलकर शिरिकायें बनाती हैं, जो बड़ी शिराओं को रक्त पहुँचाती हैं और तत्पश्चात् रक्त हृदय में पहुँचता है। इन बड़ी शिराओं में इनकी लम्बाई के अनुदिश कपाट (वॉल्व) होते हैं, जो रक्त को पीछे नहीं लौटने देते। परन्तु महाशिराओं में, जो सीधे हृदय में रक्त पहुँचाती हैं, कपाट नहीं होते। इन बड़ी शिराओं का नाम ऊर्ध्व महाशिरा और अधो महाशिरा है।

रक्त प्रवाह

पैर के तलवों से लेकर हृदय तक, अर्थात् जमीन से लगभग 5 फीट ऊँचाई तक रक्त पहुँचाने में शरीर को बहुत अधिक श्रम करना पड़ता है। ऐसा करने के लिए अनेक रचना तन्त्रों की आवश्यकता पड़ती है।

- गुरुत्वाकर्षण शक्ति, जो रक्त को सिर से नीचे की ओर प्रवाहित होने में सहायता करती है।
- श्वसन पम्प, जो रक्त को छाती तक खींचता है। यह क्रिया उदर गुहा और वक्ष गुहा के बीच दाबान्तर के कारण चूषण द्वारा प्रतिफलित होती है।
- पेशी पम्प, पैरों और शरीर की पेशियाँ संकुचित होकर रक्त को ऊपर हृदय की दिशा में बढ़ाती हैं।
- हृदय पम्प, रक्त को हृदय से बाहर भेजने में जो दाब लगता है उसके कारण काम करता है तथा रक्त को वापस लाने में योगदान देता है, क्योंकि यह एक बन्द तन्त्र है।
- प्रत्यावर्त्त दाब शिराओं में अवस्थित कपाटों पर पड़ता है तथा उन्हें बन्द कर देता है, जिससे रक्त केवल हृदय की ओर गतिमान होता है।
- रक्त का परिमाण एवं वाहिकाओं का स्वास्थ्य महत्त्वपूर्ण है। यह स्वास्थ्य लघु वाहिकाओं के संकुचन और विस्फारण की मात्रा पर निर्भर है। यदि वाहिकायें अधिक विस्फारित हैं, तो रक्त मस्तिष्क से दूर शरीर के निचले भागों में एकत्र हो जायेगा तथा बेहोशी की अवस्था आ जायेगी। व्यक्ति जब बेहोश होकर गिरता है, तो शरीर के क्षैतिज हो जाने से रक्त मस्तिष्क में पहुँच जाता है। इससे पुन: ऑक्सीकरण होता है और बेहोशी शीघ्र दूर हो जाती है।

बड़ी रक्त वाहिकाओं में प्रवाह की गति तीव्रतम होती है तथा लघु रक्तवाहिकाओं में न्यूनतम होती है। इसका कारण है कि बड़ी रक्त वाहिकायें असंख्य लघु वाहिकाओं में विभाजित हो जाती हैं और इस प्रकार एक विशाल

क्षेत्र में रक्त वितरित करती हैं। यह प्रक्रिया सागर की ओर तेजी से प्रवाहमान नदी के समान है। सागर कोशिकाओं का जाल है। कोशिकाओं में रक्त प्रवाह मन्द होने से पोषक पदार्थों और अपशिष्ट पदार्थों की अदला-बदली करने में सुविधा होती है, जो शरीर के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है।

वाहिका तन्त्र

शरीर में रक्तवाहिकाओं के दो मुख्य तन्त्र हैं। एक है दैहिक परिसंचरण और दूसरा है फुफ्फुसीय परिसंचरण। प्रथम तंत्र समस्त शरीर को और द्वितीय फुफ्फुसों को रक्तापूर्ति करता है। दैहिक परिसंचरण फुफ्फुसों से ऑक्सीजनयुक्त रक्त लेता है और शरीर में वितरित करता है। फुफ्फुसीय संचरण शरीर से ऑक्सीजन रहित रक्त लेता है और फुफ्फुस में ऑक्सीजनयुक्त होने के निमित्त भेजता है।

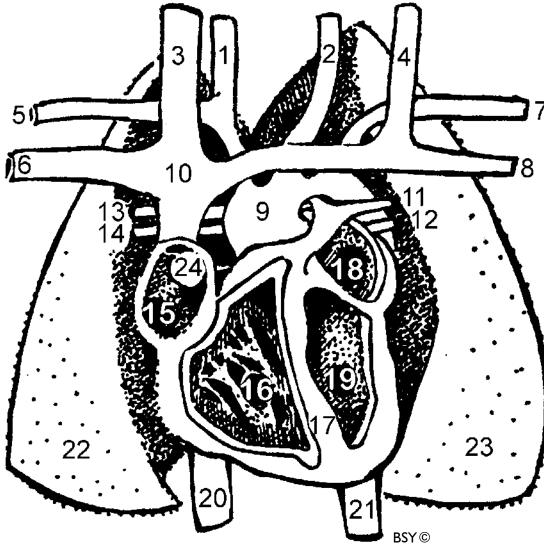
हृदय

योग साहित्य में हृदय न केवल रक्त संचरण तन्त्र का ही केन्द्र है, वरन् वह करुणा का भी केन्द्र है। यह अनाहत चक्र के नाम से ज्ञात आध्यात्मिक केन्द्र की स्थूल अभिव्यक्ति है। हमारे अस्तित्व का सूक्ष्म हृदय है– अनाहत चक्र।

योग मन के विज्ञान की शिक्षा देता है, पर उसके विपरीत आधुनिक चिकित्सा विज्ञान अभी भी मन की खोज में है, और मानता है कि उसका वास मस्तिष्क में है। तथापि प्राचीन ऋषियों और योगियों ने मन या उच्चतर मन का स्थान हृदय में ही माना है। यह जीवात्मा का, स्वयं चेतना का वास स्थान है। स्थूल हृदय में साइनस नोड है, जिस स्थान से ऊर्जा स्फुल्लिंग निकलते हैं, जो हृदय के संकुचनों को प्रारम्भ करते हैं तथा इसकी गतिविधियों को समन्वित करते हैं। यह बिन्दु प्राचीन शास्त्रों में उल्लिखित जीवात्मा का अधिष्ठान बिन्दु (शरीर के मध्य बिन्दु से कुछ इन्च दायें) है। अभी तक साइनस नोड के चमत्कार के विषय में किसी वैज्ञानिक को ज्ञान नहीं है कि हमारे सम्पूर्ण जीवन काल में यह किस तरह बिना विश्राम लिए कार्य करता रहता है। यह पहेली अभी भी समाधान की प्रतीक्षा में है।

स्थूल स्तर पर हृदय मुख्यत: पेशियों से निर्मित है। यह पेशी दोनों ओर से झिल्ली से आच्छादित है, जिसका स्नेहन होता रहता है, ताकि हृदय सरलता से गतिमान रहे। वस्तुत: हृदय-पेशी एक ही साथ दो पम्प है। मध्य की दीवार द्वारा यह दो भागों में विभक्त है। दोनों भाग एक दूसरे से बिल्कुल अलग हैं।

दायाँ भाग शरीर से ऑक्सीजन रहित रक्त प्राप्त करता है तथा उसे फुफ्फुसों में भेजता है। बायाँ भाग फुफ्फुसों से ऑक्सीजनयुक्त रक्त प्राप्त करता है और शरीर में प्रेषित करता है। दोनों ही भाग पुन: दो खण्डों में विभक्त हो जाते हैं। ऊपरी प्रकोष्ठ क्रमश: दायें और बायें अलिन्द कहलाते हैं तथा निचले प्रकोष्ठ क्रमश: दायें और बायें निलय कहलाते हैं।



हृदय और आत्मा का अधिष्ठान

1. दाहिनी कैरोटिड धमनी (सिर को)
2. बायीं कैरोटिड (सिर को)
3. दाहिनी ग्रीवा शिरा (सिर से)
4. बायीं ग्रीवा शिरा (सिर से)
5. दाहिनी अधोजत्रुक धमनी (भुजा को)
6. दाहिनी अधोजत्रुक शिरा (भुजा से)
7. बायीं अधोजत्रुक धमनी (भुजा को)
8. बायीं अधोजत्रुक शिरा (भुजा से)
9. महाधमनी
10. ऊर्ध्व महाशिरा
11. बायीं फुफ्फुस धमनी (फुफ्फुस को)
12. बायीं फुफ्फुस शिरा (फुफ्फुस से)
13. दाहिनी फुफ्फुस धमनी (फुफ्फुस को)
14. दाहिनी फुफ्फुस शिरा (फुफ्फुस से)
15. दाहिना अलिन्द
16. दाहिना निलय
17. अन्तरानिलय पट
18. बायाँ अलिन्द
19. बायाँ निलय
20. अधो महाशिरा
21. महाधमनी
22. दाहिना फुफ्फुस
23. बायाँ फुफ्फुस
24. साइनस नोड एवं आत्मा का अधिष्ठान

हृदय इन्हीं चार विभिन्न प्रकोष्ठों द्वारा कार्य करता है तथा द्विप्रावस्थित चक्र उत्पन्न करता है। एक सक्रिय संकुचन प्रावस्था है, जिसे सिस्टोल या प्रकुंचन कहते हैं तथा एक निष्क्रिय आपूरण प्रावस्था है, जिसे डायस्टोल या अनुशिथिलन कहते हैं। ये दो अर्धक मिलकर एक हृदस्पन्द बनाते हैं। ये हृदस्पन्द प्रति मिनट 60 से 90 तक होते हैं।

एक विच्छेदित हृदय कोशिका लगभग 40 चक्र प्रति मिनट की दर से स्पन्दित होती है। जब दो कोशिकाओं को एक साथ रखा जाता है, तो वे दोनों लगभग एक ही दर से स्पन्दित होती हैं, पर एक प्रावस्था में नहीं, जब तक कि वे एक दूसरे का स्पर्श नहीं करती। प्रयोगों द्वारा यह पता चला है कि जब दो कोशिकायें सम्पर्क में होती हैं, तो वे एक कोशिका के समान कार्य करती हैं तथा समकालिक स्पन्द करती हैं। यही प्रक्रिया हृदय में भी होती है। साइनस नोड या पेसमेकर, जो हृदय का संकुचन प्रवर्तित करता है, तीव्रतर गति से स्पन्दित होता है तथा ऊर्जा तरंग प्रेषित करता है, जो अन्य सभी हृदय कोशिकाओं को समवेत रूप से संकुचित करती है। इस प्रकार साइनस नोड हृदय से एक इकाई के रूप में कार्य सम्पादन कराता है जिससे यह समुचित ढंग से काम करता है। मस्तिष्क तथा हृदय से उसका संयोजन केवल गति को नियमित करता है और आवश्यकतानुसार शेष शरीर से समायोजित करता है।

हृदय एक अति विलक्षण अंग है। जब यह ठीक से काम करता है तब यह एक सौम्य, सुन्दर, दक्ष, शक्तिशाली और कार्य में लयबद्ध पम्प है। जब दाब की आवश्यकता होती है, यह अपनी संकुचन शक्ति और गति को बढ़ा देता है, उसी प्रकार आवश्यकता पड़ने पर यह अपनी गति को मन्द भी कर लेता है, मानो इसका अपना ही जीवन है। यह शरीर के मध्य में अवस्थित, सहज, अविराम, अनवरत स्पन्दनशील, सप्ताह के प्रत्येक दिन, वर्ष के प्रत्येक सप्ताह और जीवन के प्रत्येक वर्ष एक शक्तिशाली और सच्चा कर्म योगी है, जिसे न थकान है, न अवकाश।

हृदय चक्र

हृदय आवर्ती रूप से रक्त पम्प करता है। यह चक्र दो प्रावस्थाओं में विभक्त हैं। एक सक्रिय प्रावस्था है प्रकुंचन और यह जिस रक्त दाब की प्रावस्था को उत्पन्न करता है, वह प्रकुंचन (सिस्टोलिक) रक्तचाप कहलाता है।

इस प्रावस्था में हृदय संकुचित होता है तथा रक्तचाप को बढ़ाता है। दूसरी प्रावस्था निष्क्रिय या आपूरक है, जो अनुशिथिलन (डायस्टोल) कहलाती है। इस प्रावस्था में रक्तवाहिका में दाब अपने निम्नतम स्तर पर रहता है, तथा आधाररेखा की तरह विद्यमान रहने वाले दाब को प्रकट करता है। यह आधारभूत तनाव, वह तनाव है, जो रक्तवाहिकाओं में होता है, जब हृदय संकुचित नहीं हो रहा होता। रक्तचाप मापते समय डॉक्टर के लिए दोनों स्तरों में से यह अधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह तंत्रिका-तन्त्र की स्थिति को उत्तम रूप से प्रकट करता है। यह तन्त्र आपकी रक्तवाहिकाओं का स्वास्थ्य बनाये रखने के लिए उत्तरदायी है।

हृदय रक्त पम्प करता है। जब वह वस्तुतः पम्प करता है, तो इसे सिस्टोल या प्रकुंचन कहा जाता है। प्रत्येक प्रकुंचन पम्प क्रिया के पश्चात् हृदय रिक्त हो जाता है तथा रक्त धमनियों में प्रवाहित हो जाता है, जो पूर्व प्रेषित रक्त को रक्तवाहिकाओं में और भी आगे धकेलता है। अब विश्राम की अवस्था प्रारम्भ होती है। इस अवस्था में रक्त को आगे बढ़ाने का काम बड़ी धमनियों के लचीले परावर्त्तन द्वारा होता है। रक्त को पुनः हृदय में वापस प्रवाहित होने से रोकने हेतु विशेष कपाट होते हैं, जो रक्त को एक ही दिशा में बहने को बाध्य करते हैं। विश्राम की अनुशिथिलन अवधि में ऊपरी प्रकोष्ठ पुनः रक्त से भर जाते हैं। जब वे पूर्णतया भर जाते हैं, तो संकुचित होते हैं और रक्त को निचले प्रकोष्ठों में प्रवाहित कर देते हैं, जिन्हें निलय कहते हैं। जब निलय भर जाते हैं, तो पेशियाँ संकुचित हो जाती हैं, और रक्त को बाहर भेजती हैं। यह लचीली धमनियों की दीवारों को फैलाता है।

हृदय का तन्त्रिका नियन्त्रण

हृदय का संकुचन रूपान्तरित पेशीय ऊतक के एक छोटे टुकड़े के कारण होता है, जिसे साइनस पर्व (साइनस नोड) कहते हैं। यह नोड दायें अलिन्द के अन्दर तन्त्रिका ऊतक का एक छोटा-सा अंश है। यह एक आवेग प्रेषित करता है, जिससे पेशी ऊतक संकुचित होते हैं। यह आवेग अलिन्दों में नीचे की ओर निलय के सम्पर्क बिन्दु तक जाता है। इस अवस्था में अलिन्द संकुचित हो चुके होते हैं।

अलिन्दों और निलयों की इस सन्धि पर एक अन्य रूपान्तरित पेशी ऊतक का अंश होता है, जो आवेग को मन्द कर देता है। इसे अलिन्द निलय पर्व

(ए. वी. नोड) कहते हैं। इस अवरोध से निलय को रक्त से पूर्णतया भरने के लिए पर्याप्त समय मिल जाता है। इसके पश्चात् आवेग एक विशेष वाहिका तन्त्र द्वारा नीचे की ओर जाता है, जो आवेग को शीघ्रता से हृदय की सभी कोशिकाओं में सुव्यवस्थित और सुनियोजित ढंग से ले जाने के लिए रचित है। ऊपर की कोशिकायें नीचे की कोशिकाओं की अपेक्षा थोड़ा पहले संकुचित होती हैं। इस प्रकार रक्त आगे बढ़ता और निष्कासित किया जाता है। जब हृदस्पन्द 75 स्पन्द प्रति मिनट होता है, तो इस पूरे एक चक्र में लगभग 0.8 सेकण्ड का समय लगता है।

संकुचन की दर स्वसंचालित तन्त्रिका तन्त्र द्वारा नियंत्रित होती है, यह प्रक्रिया दो भागों में होती हैं। अनुकम्पी घटक हृदय गति को तीव्र करता है, जबकि परानुकम्पी घटक इसे मन्द करता है। अनुकम्पी तन्त्र शरीर को बाह्य परिवेश या किसी दबावग्रस्त स्थिति का सामना करने के लिए तैयार करता है, जबकि परानुकम्पी तन्त्र शरीर को विश्रान्त करता है। हम आवश्यकतानुसार इन दो घटकों के बीच डोलते रहते हैं। यदि आप तनाव ग्रस्त हैं, तो आपकी हृदय-गति तीव्र हो जाती है, रक्तवाहिकायें संकुचित हो जाती हैं तथा हृदय का कार्यभार बढ़ जाता है। इससे रक्तचाप ऊँचा हो जाता है। अधिक ऑक्सीजन की आवश्यकता की पूर्ति हेतु श्वसन क्रिया भी तीव्र हो जाती है, तथा सूक्ष्मता से जाँच करने पर अधिकतर व्यक्तियों को पता चलेगा कि वे तनावग्रस्त हैं तथा उनकी उदर पेशियों में भी तनाव है। हृदय और फुफ्फुसों के मध्य स्पष्ट सम्बन्ध हैं, फिर यह मानसिक अवस्था से भी जुड़ा है, जिसमें स्वैच्छिक तन्त्रिका तन्त्र के द्वारा मध्यस्थ की भूमिका निभायी जाती है।

जब मन तनावग्रस्त होता है, तो अनुकम्पी तन्त्र को उद्दीप्त कर देता है। इससे हृदय और फुफ्फुस एक साथ काम करने लग जाते हैं, एक शरीर में अधिक ऑक्सीजन लाता है, जिससे दूसरा उस ऑक्सीजन को रक्त प्रवाह के माध्यम से कोशिकाओं में ले जाय। भावनात्मक और मानसिक कारक हृदय के नियंत्रण में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भय और उत्तेजना मस्तिष्क पर अपने प्रभावों द्वारा हृदय गति को तीव्र कर देते हैं, जो स्वैच्छिक तंत्रिका-तंत्र के नियंत्रक हाइपोथैलमस को आवेग प्रेषित करता है। अन्य तत्त्व, जैसे, ऊतकों की ऑक्सीजन आवश्यकता, कार्बन डाय-ऑक्साइड का अधिक जमाव और व्यायाम भी हृदय गति को बढ़ा देते हैं।

रक्तवाहिकाओं का तन्त्रिका नियंत्रण

धमनियाँ भी स्वसंचालित तन्त्रिका तन्त्र द्वारा, जो दबाव और विश्रान्ति या रक्त दाब और रासायनिक संगठन में परिवर्तन पर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है, नियंत्रित होती हैं। अधिकतम नियंत्रण मस्तिष्क में स्थित प्रान्तस्था (कॉरटेक्स) द्वारा होता है। यही वह भाग है, जो बौद्धिक और मोटर कार्यों से सम्बन्धित है। हाइपोथैलमस पर, जो सम्पूर्ण शरीर के आन्तरिक परिवेश के लिए उत्तरदायी है, सीधा प्रभाव पड़ताहै।

जब दबाव प्रान्तस्था को उद्दीप्त करता है, तो वह हाइपोथैलमस को संकेत भेजता है ताकि वह अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र को उद्दीप्त करे, जिसके कारण शरीर या तो उस दबाव का सामना करे या पलायन कर जाय। यह हृदय की ओर जाने वाली रक्तवाहिकाओं को तथा पेशियों को विस्फारित कर (जिससे वे अधिक मात्रा में ऑक्सीजन ग्रहण कर सकें) तथा शरीर के अधिकांश अन्य अंगों की रक्तवाहिकाओं को संकुचित कर शरीर को तैयार होने के लिए बाध्य करता है। इस प्रकार हम पेशी शक्ति का उपयोग कर प्रहार या पलायन कर सकते हैं। विस्फारित होने वाली वाहिकाओं की अपेक्षा अधिक रक्तवाहिकायें संकुचित होती हैं, जिससे समग्रता में वाहिका संकुचन ही कुल प्रभाव होता है। यह शरीर का परिसरीय प्रतिरोध बढ़ा देता है, रक्तचाप उच्च कर देता है और हृदय को करने हेतु अधिक कार्य दे देता है। जब दबाव समाप्त हो जाता है, तब अनुकम्पी उद्दीपन मन्द हो जाता है और रक्तवाहिकायें विश्रान्त और विस्फारित हो सामान्य अवस्था में आ जाती है।

धमनिकाओं का अन्तर्व्यास कई चीजों पर निर्भर करता है। अन्तर्व्यास में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है, जिससे शरीर के विभिन्न भागों में रक्त की मात्रा समान रूप से वितरित हो सके। कुछ अंग थोड़ी देर के लिए रक्त आपूर्ति रोक देते हैं, जब अन्य अंग अपनी आपूर्ति प्रारम्भ करते हैं। मानसिक और भावनात्मक कारक, ऑक्सीजन की आवश्यकता, दिन का काल विशेष, भोजन, मानसिक और शारीरिक प्रक्रियाएँ, अपशिष्ट पदार्थों (जैसे, लैक्टिक एसिड) का जमाव और ताप आदि सभी रक्त प्रवाह को प्रभावित करते हैं।

जब अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र का अत्यधिक उद्दीपन होता है, जैसा कि आधुनिक शहरी जीवन की तेज और दबावपूर्ण गति में आसानी से होता है, तो रक्तवाहिकायें अत्यधिक दीर्घ अवधि तक संकुचित रह जाती हैं। अन्ततोगत्वा संकुचन को विनियमित करने वाली पेशियों में ऐंठन होने लगती

हैं। रक्तचाप का स्तर उच्च बना रहता है, जिससे शरीर के अंगों में पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन और पोषक तत्त्व नहीं पहुँच पाते और हानिकारक अपशिष्ट पदार्थों का जमाव हो जाता है। पूरा शरीर कमजोर हो जाता है, मनुष्य थकावट और तनाव का अनुभव करता है।

रक्तचाप

रक्त सदैव दबाव की अवस्था में रहता है। जब प्रकुंचन में हृदय संकुचित होता है तो दाब बढ़ जाता है। यह अधिकतम रक्तचाप है, जो प्रकुंचन रक्तचाप कहलाता है। जब अनुशिथिलन प्रावस्था में हृदय विश्रान्त होता है, तो रक्तचाप न्यूनतम होता है तथा इसे अनुशिथिलन रक्तचाप कहते हैं। शारीरिक स्वास्थ्य की स्थिति को समुचित रूप से जानने के निमित्त इन दोनों रक्त स्तरों को जानना आवश्यक है। उच्च रक्तचाप के रोग में, इन दोनों में से अनुशिथिलन रक्तचाप अधिक महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह स्वसंचालित तन्त्रिका तन्त्र और रक्तवाहिकाओं की अवस्था को प्रकट करता है। प्रकुंचन दाब हृदय की स्थिति प्रकट करता है, तथा यह उच्च रक्तचाप वाले व्यक्तियों के लिए तब अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है, जब रोग ने हृदय को भी अपनी लपेट में ले लिया हो तथा हृदयघात की संभावना हो।

रक्तचाप इस प्रकार लिखा जाता है कि प्रकुंचन दाब अनुशिथिलन दाब के पहले या ऊपर लिखा जाता है। माँसाहारी उच्च प्रौद्योगिकी समाज में सामान्य रक्तचाप 120/80 मि.मी. पारा होता है। यह एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भिन्न होता है तथा यह कोई एक सुनिश्चित दाब नहीं है। दिन का काल-विशेष, तापमान, सक्रियता, दबाव, मानसिक अवस्था, उम्र, आहार (शाकाहारी या मांसाहारी) और मौसम सभी तत्त्व रक्तचाप को प्रभावित करते हैं तथा हम सभी में वह क्षण-क्षण बदलता रहता है। उदाहरण के लिए, आप जितने अधिक वृद्ध हैं, आपका रक्तचाप सामान्य से अधिक रहने की उतनी ही अधिक संभावना है। बच्चे में यह परास 75-90 मि.मी. पारा है, जबकि वयस्क मनुष्यों में प्रकुंचन दाब का परास 130-150 मि.मी. पारा होता है। मोटापा भी रक्तचाप को बढ़ाता है, जबकि विश्राम इसे कम करता है।

डॉक्टरों के दृष्टिकोण से रक्तचाप के क्रम का लेखा-जोखा कुछ दिनों या कुछ सप्ताह तक रखना आवश्यक है। केवल एक पठन से यह जान लेना कठिन है कि वस्तुतः शरीर में क्या हो रहा है। ठीक-ठीक रक्तचाप लेने के

लिए तथा साथ ही उसकी व्याख्या में भी कि पठन का क्या अर्थ हो सकता है, काफी निपुणता चाहिए। अत: रक्तचाप मापने हेतु रक्तचाप मापक यंत्र खरीद लेने का परामर्श हम आपको नहीं देते। ऐसा करने वाले अधिकतर व्यक्ति उसके पठन और व्याख्या में भूल करते हैं, फिर अकारण चिन्ता और कष्ट में पड़ते हैं। अच्छा हो कि डॉक्टर से ही अपना काम करायें। रक्तचाप मापन के अनेक वर्षों का उनका अनुभव सापेक्ष महत्त्व का होता है।

असामान्य रक्तचाप

सामान्यता और असामान्यता के मध्य विभाजक रेखा क्या है? इस प्रश्न पर अधिकांश डॉक्टर दीर्घकाल से तर्क-वितर्क कर रहे हैं, क्योंकि जैसे ही आप उच्च रक्तचाप को परिभाषित करते हैं, आप एक ढाँचे से आबद्ध हो जाते हैं, जो लचीलेपन की अनुमति नहीं देता। काफी मनुष्य उच्च रक्तचाप की सीमा रेखा पर हो सकते हैं, जिनमें रोग का न तो कोई लक्षण है और न ही मापने योग्य कोई संकेत, सिवाय इस तथ्य के कि उनका रक्तचाप अगले व्यक्ति से थोड़ा अधिक है। यदि कोई कठोर अवसीमा रेखा निर्धारित कर दी जाय, तो ऐसे व्यक्ति अपने शेष जीवन भर उच्च रक्तचाप के रोगी के समान औषधि और पथ्यापथ्य में बंध जायेंगे।

वास्तविकता तो यही है कि कोई नहीं जानता कि उच्च रक्तचाप वस्तुत: है क्या? बढ़े हुए रक्तचाप वाली शारीरिक और मानसिक अवस्था को नाम दे दिया गया है, उच्च रक्तचाप। अधिकतर डॉक्टरों द्वारा स्वीकृत मनमानी सीमा रेखा, जो औषधोपचार या रक्तचाप कम करने के अन्य उपायों के प्रयोग हेतु मान्य है, वह है 140/90 मि.मी. पारा। यह अपेक्षाकृत युवा लोगों पर लागू होती है, जबकि वृद्ध मनुष्यों में परिवर्तनशील उच्च चाप को भी सह्य मान लेते हैं। ऐसा इसलिए कि युवा लोगों में वृद्धों की अपेक्षा गंभीर जटिलताओं के बढ़ने की संभावना अधिक रहती है तथा युवा व्यक्ति में बढ़ते रक्तचाप का संकेत गंभीर होता है। अत: इसका अवलोकन सतर्कता से होना चाहिए।

उच्च रक्तचाप

उच्च रक्तचाप चाहे वह किसी भी प्रकार का हो, एक गंभीर रोग है। नितान्त अल्प लक्षणों वाला रोग भी आयु क्षीण करता है तथा शेष जीवन की गुणवत्ता को कम कर देता है।

उच्च रक्तचाप के जिस रूप से हमारा तात्पर्य है वह है अज्ञात हेतुक उच्च रक्तचाप, जो लगभग 80% रोगियों को होता है। इस रूप का कोई चिकित्सीय कारण ज्ञात नहीं है। शेष 20% का चिकित्सीय या शल्यक्रिया विधि द्वारा अभिज्ञात कारण होता है। हमारा परामर्श है कि प्रथम संकेत मिलते ही आप अपने डॉक्टर से यह जानने हेतु परामर्श करें कि आपका रोग अज्ञात हेतुक है या सुधार योग्य है। अज्ञात हेतुक रक्तचाप भी प्रतिवर्त्य होता है, परन्तु केवल औषधि सेवन द्वारा नहीं। उच्च रक्तचाप की लड़ाई केवल औषधि और योग के सन्तुलित और संयुक्त उपयोग से ही जीती जा सकती है।

उच्च रक्तचाप इस अर्थ में घातक है कि यह प्रच्छन्न व्याधि है। अधिकतर व्यक्तियों में, जिन्हें उच्च रक्तचाप है, वर्षों तक कोई लक्षण प्रकट नहीं होता, फिर भी इसका परिणाम प्राणघातक और जटिलतायें उत्पन्न करने वाला तो हो ही सकता है। उच्च रक्तचाप के रोग के, लक्षणों की दृष्टि से, अनेक स्वरूप हो सकते हैं। यह प्रत्यक्षत: दीर्घसूत्री या तीव्रगति से बढ़ने वाला तथा अकस्मात घातक हो सकता है।

मन्द रूप में यह जिन कारणों से जटिल हो जाता है, वे हैं– धमनी काठिन्य, मस्तिष्क में रक्तवाहिकाओं के रोग, जिसमें धमनी फट जाती है (घात या प्रमस्तिष्क-वाहिका दुर्घटना), हृत्पात (मायोकार्डियल इन्फार्क्शन), वृक्क रोग, महाधमनी का तनाव (ऐन्यूरिस्म) तथा शरीर की बाह्य सतह पर लघु वाहिका का रोग, जिसके कारण ऊतक क्षय होता है।

रोग के गंभीर रूप में दोनों वृक्क बुरी तरह प्रभावित हो जाते हैं और अन्ततोगत्वा अपने कार्य सम्पादन में अक्षम हो जाते हैं। इससे कुछ ही महीनों या कुछ सप्ताहों में मृत्यु हो जाती है।

मन्द तथा गंभीर दोनों ही अवस्थाओं में धमनियाँ संकुचित हो जाती हैं, जिससे परिसरीय प्रतिरोध बढ़ जाता है। रक्तचाप उच्च बना रहता है, शरीर के अवयव क्षतिग्रस्त हो जाते हैं और अपना कार्य सम्पादन नहीं कर पाते हैं।

वस्तुत: उच्च रक्तचाप अपने आप में कोई रोग नहीं है, वरन् यह एक संकेत है कि शारीरिक, भावनात्मक और मानसिक स्तरों पर शरीर के आन्तरिक परिवेश और सन्तुलन व्यवस्था में कुछ अन्तर्निहित समस्यायें हैं। चिकित्सा विज्ञान ने उच्च रक्तचाप (हाइपरटेन्शन) शब्द गढ़ लिया है, और वस्तुत: रोग भी यही है, अर्थात् शरीर में अधिक तनाव का होना। मनौदैहिक संकुल का तनाव ही तन्त्रिका तन्त्र के असन्तुलन के रूप में परिलक्षित होता है। शारीरिक क्रियाओं का समन्वय भंग हो जाता है, फिर हृदयवाहिका तन्त्र सहित सभी शारीरिक तन्त्र इसका फल भोगते हैं। जो व्यक्ति शरीर के इस तन्त्र की दुर्बलता के कारण रोग-प्रवण हैं, उनको यह रोग शारीरिक स्तर पर परिलक्षित होता है। निस्संदेह यदि हम व्यक्ति का, उसकी समग्रता में, ध्यान से अवलोकन करें, तो पता चलेगा कि समस्यायें अधिक गहरे स्तरों पर भी विद्यमान हैं।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ने अब स्वीकार कर लिया है कि 80% बीमारियों में मन की कुछ-न-कुछ भूमिका रहती ही है। ऐसी बीमारियों को मनोदैहिक रोगों की कोटि में रखा गया है। तथापि इस गहन जानकारी का पूर्ण निहितार्थ अभी भी एलोपैथी को खोजना ही है। वह अभी भी शारीरिक बीमारियों में मन की भूमिका को टटोल ही रहा है। मनोदैहिक रोगों में मन की भूमिका सम्बन्धी योग का परिज्ञान उन विधियों में ही व्यावहारिक रूप से अभिव्यक्त है, जो मनोवैज्ञानिक दबाव और शारीरिक प्रभावों को दूर करने हेतु प्रकल्पित हैं। इन्हें ध्यान, आसन एवं प्राणायाम के अभ्यास तथा अन्य उपायों से पाया जा सकता है, जिनका भविष्य में रोगोपचार में महत्त्वपूर्ण योगदान होगा।

हृदय एवं रक्तवाहिकायें मन और भावनाओं की अस्थिरता के प्रति तत्काल प्रतिक्रिया करती हैं। अत: योग का ज्ञान उच्च रक्तचाप के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक होगा। चंचल मन शरीर को चंचल करता है, तथा मानसिक और भावनात्मक उत्तेजना हृद्वाहिका तन्त्र में विभिन्न लक्षणों के रूप में परिलक्षित होती है, जिनमें रक्तचाप में वृद्धि भी एक है।

उच्च रक्तचाप है क्या?

यह जानने के पूर्व की उच्च रक्तचाप का कारण क्या है, यह जानना आवश्यक है कि रक्तचाप क्या है? संकुचित धमनिकाओं के पीछे रुका हुआ रक्त हृदय एवं उसकी वाहिकाओं का सन्तुलन अस्तव्यस्त कर देता है और उच्च रक्तचाप उत्पन्न करता है। शरीर की कोशिकाओं के निमित्त हृदय से चले हुए रक्त को राह में अत्यधिक प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है और संकीर्ण हो गई इन रक्तवाहिकाओं में रक्त पम्प करने में हृदय को अधिक श्रम करना पड़ता है।

विश्रामावस्था में हृदय अधिक श्रम नहीं करता, क्योंकि उसे कोशिकाओं को उतना अधिक ऑक्सीजन नहीं देना पड़ता, जितना व्यायाम या दबाव के समय देना पड़ता है। किन्तु जैसे ही शरीर पर दबाव बढ़ता है, चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक, ऑक्सीजन की माँग बढ़ जाती है और उसी अनुपात में हृदय का कार्य भी बढ़ जाता है। जब ऐसा दीर्घकाल तक होता रहता है, तो हृदय स्थायी रूप से क्लांत हो जाता है और अन्ततोगत्वा ठीक से कार्य सम्पादन नहीं कर पाता। इसका गंभीर और घातक परिणाम होता है।

उच्च रक्तचाप में शरीर आन्तरिक एवं बाह्य परिवेश से समायोजन स्थापित नहीं कर पाता। जब धमनिकायें दीर्घकाल तक संकुचित अवस्था में रहती हैं, तब उनके आस-पास की पेशियाँ अकड़ जाती हैं। रक्त आवश्यक ऑक्सीजन नहीं पहुँचा पाता, जिसके फलस्वरूप थकावट और क्लान्ति आती है। हाल के वैज्ञानिक शोध कार्यों में प्रमाणित हुआ है कि निद्रा से भी आवश्यक विश्राम नहीं मिल सकता। यह तो केवल ध्यान से ही मिल सकता है।

ऑक्सीजन की आपूर्ति शरीर की ऑक्सीजन सम्बन्धी आवश्यकता से कम होने पर तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिस कारण पेशियों के ऊतकों में लैक्टिक अम्ल नामक रसायन बनने लगता है। यह स्वास्थ्यकर स्थिति नहीं है। विश्राम की स्थिति में लैक्टिक अम्ल का निष्कासन होना ही चाहिए, विशेष रूप से निद्रावस्था में। शारीरिक परीक्षण दर्शाते हैं कि ध्यान के अभ्यास की अवधि में अनुकम्पी तंत्रिका तन्त्र की सक्रियता कम हो जाती है, जिससे रक्तवाहिकाओं का संकुचन कम हो जाता है। इससे रक्तचाप शीघ्र ही कम हो जाता है तथा पेशियों में रक्त प्रवाह बढ़कर लैक्टिक अम्ल के निष्कासन हेतु आवश्यक ऑक्सीजन की आपूर्ति करता है। शोधकर्त्ता वालेस और बेन्सन ने दर्शाया है कि ध्यान की अवधि में सामान्य कामकाज की अवस्था की अपेक्षा चार गुनी और निद्रा की अवस्था की अपेक्षा तीन गुनी

तेज गति से लैक्टिक अम्ल का स्तर गिरता है।[1] यह प्रकट करता है कि उच्च रक्तचाप से हुई शारीरिक क्षति की पूर्ति करने में ध्यान अधिक समर्थ है।

आज से लाखों वर्ष पूर्व जब हमारे तथाकथित पशुपूर्वजों को प्रतिकूल परिवेश में जीना पड़ता था, तो यही अनुकम्पी तन्त्र उनका रक्षक था। वैज्ञानिक हैन्स सेली ने जैसी व्याख्या की है, यह तन्त्र दबाव-प्रतिक्रिया-संरचना से सम्बन्धित है। उन्होंने बताया है कि दबाव संरचना के तीन आधारभूत तत्त्व हैं–

1. संकट-संकेत अनुकम्पी तंत्रिका तन्त्र द्वारा ग्रहण किया जाता है, जो एड्रीनल ग्रन्थि को एड्रीनलीन स्त्रावित करने हेतु तथा पिट्युटरी ग्रन्थि को अन्य हार्मोन स्त्रावित करने हेतु प्रेरित करता है।
2. दूसरा चरण है, जब तक दबाव की स्थिति समाप्त न हो जाय, तंत्रिका एवं अन्त:स्त्रावी प्रतिक्रिया का चालू रहना।
3. तीसरा चरण है क्लान्ति, क्योंकि सन्तुलन लाने हेतु मानव शरीर विश्राम चाहता है। यदि विश्राम नहीं मिला तो तनाव के कारण उत्पन्न हुई हानिकर प्रतिक्रियायें बढ़ती जाती हैं तथा हानिकर हार्मोन एकत्र हो शरीर का क्षय करते हैं।

अभी भी तनावपूर्ण अवस्थाओं में शरीर और मन के द्वारा यह दबाव प्रतिवर्त्त सक्रिय हो जाता है। यह एक मौलिक, स्वाभाविक प्रतिक्रिया है, जो हमारे तन्त्रिका तन्त्र के पुरातन भागों में गहरे बद्धमूल है। मानव के विकास के प्रारम्भिक दिनों में हमारे पूर्वजों की उत्तरजीविता हेतु यह नितान्त अनिवार्य था। अब इसकी अनिवार्यता कम हो गई है। वस्तुत: यह प्राय: नियंत्रण के बाहर हो जाती है, तथा उपयोगी होने की अपेक्षा अधिक विनाशकारी हो जाती है। आज हम जिन मनोदैहिक तथा तनाव सम्बन्धी रोगों से आक्रांत हैं, उनमें से अधिकांश का कारण यही प्रतिक्रिया है।

कुछ परिस्थितियों में तनाव प्रतिक्रिया आवश्यक है, परन्तु यदि मनुष्य और समाज के प्रति इसकी उपयोगिता रखनी है, तो इसे समुचित रूप से नियंत्रित भी करना चाहिए। उदाहरणार्थ, जब हमारा जीवन संकट में हो, तब तनाव-प्रतिक्रिया का क्रियाशील होना शरीर क्रिया विज्ञान के अनुसार मान्य है। किन्तु यदि हम यातायात की भीड़ में फँस गये हों या हमें अपने काम पर पहुँचने में विलम्ब हो रहा हो, तब इसका क्रियाशील होना कोई अर्थ नहीं रखता। पहली स्थिति में प्रतिक्रिया हमारी पेशियों को शक्ति देती है, हमें प्रहार या पलायन के लिए तैयार करती है। दूसरी स्थिति में यह सभी हार्मोनों

और तन्त्रिका परिपथों को उत्तेजित कर देती है, परन्तु इससे जो ऊर्जा उत्पन्न होती है, उसका कोई उपयोग नहीं होता। हार्मोन जमा होते हैं और जैव विष उत्पन्न करते हैं, जो शरीर को क्लान्त कर देते हैं। इसके साथ ही अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र कोशिका-नलियों को बन्द कर देता है, जिससे ऊतकों में पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं पहुँच पाता है। इससे नैराश्य, तनाव और चिन्ता उत्पन्न होती है और मानसिक स्पष्टता का अभाव हो जाता है। शरीर क्षमता में उत्कर्ष के स्थान पर सर्वश: ह्रास होता है।

इन तनावपूर्ण परिस्थितियों, यथा, यातायात में फँस जाना या काम पर पहुँचने में विलम्ब होना आदि को विश्रान्त और सकारात्मक मानसिकता से स्वीकार कर लेना ही स्थिति को सम्हालने का सहज और स्वाभाविक तरीका है। जब हम सजग रहते हैं कि अनावश्यक चिन्ता से कुछ होने वाला नहीं है, तब ऐसा होता है। आज उत्तरजीविता और सुख प्राप्ति के लिए इस बात की आवश्यकता है कि हम अपने को उलझाने वाली सभी स्थितियों, अपने चतुर्दिक रहने वाले मनुष्यों और सभी परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित कर लें। आज के विश्व में उत्तरजीविता और प्रभावी कर्म के लिए अनुभूति-क्षमता, विवेक और एकता ही सहायक हैं। हमें अपनी चेतना को सहज पाशविक बौद्धिकता से ऊपर उठाकर, और अधिक सच्चाई से मानवीय गुणों से पूर्ण बनाना चाहिए। इसके लिए अपनी आन्तरिक गतिविधियों के प्रति वर्द्धित चेतना तथा स्वयं पर नियंत्रण प्राप्त करना आवश्यक है।

विश्व के प्रति हमारी विवेकपूर्ण मनोवृत्ति एड्रीनलिन स्राव एवं अनुकम्पी तन्त्रिका-तन्त्र के अति उद्दीपन को, जो अधिकांश दबावपूर्ण परिस्थितियाँ निर्मित करते हैं, नियंत्रित करने में सहायक होती है। मन और मस्तिष्क के आन्तरिक क्रियाकलापों के वर्द्धित ज्ञान से इसकी प्राप्ति होती है, जिसका विकास ध्यान के माध्यम से होता है। जब मन अधिक विश्रान्त हो जाता है, तो वह तनावपूर्ण परिस्थितियों को भिन्न रूप में देखता है। जीवन की छोटी-छोटी बातों से निराश होने के बदले एक विस्तृत दृष्टिकोण हमारे समक्ष उपस्थित होता है और एक अन्तर्जगत् उभरता है, जो अधिक नहीं तो उतना महत्त्वपूर्ण तो है ही जितना बाह्य जगत्। यह अन्तर्ज्ञान और विवेक की दुनिया है तथा इस दुनिया से तालमेल बैठा लेने पर हम रोगोत्पत्ति को रोक सकते हैं, और अपने जीवन से उच्च रक्तचाप का निवारण कर सकते हैं।

क्या आपको रक्तचाप है?

बहुत से लोगों का रक्तचाप उच्च रहता है, किन्तु उन्हें इसका ज्ञान नहीं होता। अधिकतर व्यक्तियों में उच्च रक्तचाप स्थायी नहीं होता, वरन् लक्षणों द्वारा ही सुस्पष्ट होता है। जब तनाव या भावावेश कुछ क्षणों के लिए दूर हो जाता है, तो रक्तचाप कम हो जाता है। यह अस्थायी उच्च रक्तचाप कहलाता है तथा इसे अज्ञात हेतुक रक्तचाप का अग्रदूत या प्रारंभिक अवस्था माना जाता है।

आधुनिक जीवन शैली के तनावों के कारण ही उच्च रक्तचाप उत्पन्न होता है। यदि आप भी इन तनावों के अधीन हैं और अनुभव करते हैं कि ये आपको प्रभावित कर रहे हैं, तो आपको उच्च रक्तचाप हो जाने की संभावना है। अब यह होगा कि नहीं, यह आपकी शारीरिक संरचना पर निर्भर रहता है कि आप वर्द्धित रक्तचाप, अल्सर या अन्य रोगों से आक्रान्त होने के प्रति प्रवण हैं अथवा नहीं। प्रत्येक व्यक्ति के अपने दुर्बल स्थल होते हैं।

यह जानने के लिए कि आपको उच्च रक्तचाप है अथवा नहीं आपको स्वयं से वे प्रश्न पूछने चाहिए, जो डॉक्टर आपसे उच्च रक्तचाप के परीक्षण के दौरान पूछते हैं। इसे चिकित्सीय इतिवृत्त लेना कहते हैं। डॉक्टर जब सम्पूर्ण शरीर का परीक्षण करता है, तथा आवश्यकतानुसार प्रयोगशाला प्रक्रिया भी अपनाता है, तो उसके मन में ये प्रश्न ही सर्वोपरि रहते हैं–

इसके पूर्व कितने दिनों पहले आपका शारीरिक परीक्षण हुआ था?

इस प्रकार डॉक्टर आपके रक्तचाप के विगत पठनांक और तत्काल लिए गए पठनांक में तुलना कर जाँच करता है कि क्या कोई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है।

क्या परिवार में किसी को उच्च रक्तचाप रहा है?

यदि परिवार के किसी व्यक्ति या निकट सम्बन्धी को उच्च रक्तचाप रहा होगा तो आपकी भी उस अवस्था से गुजरने की संभावना अधिक होगी।

क्या आपके वृक्क सम्बन्धी रोग, मूत्र में प्रोटीन आना या मूत्र सम्बन्धी कोई अन्य रोग कभी हुआ है?

वृक्क सम्बन्धी रोगों के कारण होने वाला उच्च रक्तचाप उपचार योग्य तथा प्रतिवर्त्य है तथा अज्ञात हेतुक रक्तचाप का उपचार आरम्भ करने के पूर्व संभावित कारणों की सूची से इस कारण को अवश्य ही दूर कर लेना चाहिए।

क्या आपमें निम्नांकित में से कोई लक्षण हैं, जो उच्च रक्तचाप का संकेत करते हैं?

सिर के पिछले भाग में दर्द, विशेष रूप से प्रात:काल में; अकस्मात् एवं स्पष्ट रूप से अवगम्य धड़कन; वर्द्धित हृदय गति, जैसे– छाती में धक्-धक् की आवाज होना; अवसाद, विरक्ति, विषाद, चिन्ता, अन्दर में व्याकुलता का अनुभव, जो व्यक्त न किया जा सके, चिड़चिड़ेपन में वृद्धि और भावनात्मक अशान्ति ही ऐसे लक्षण हैं।

क्या आपमें इनमें से कोई लक्षण है?

उच्च रक्तचाप की गम्भीर स्थिति के द्योतक लक्षण हैं– सरदर्द, दम फूलना, हृदय की धड़कन बढ़ना, क्लान्ति, सिर का भारी रहना, दृष्टि दोष, अनिद्रा, आरक्त मुखमंडल, भूख में कमी, स्मृतिह्रास, एकाग्रता में कमी, वमन की प्रवृत्ति और चक्कर आना।

क्या आप में हृदय रोग, वृक्क रोग, थायरायड सम्बन्धी रोग या एड्रीनल अति सक्रियता का कोई लक्षण विद्यमान है?

इन प्रश्नों का उत्तर एक योग्य डॉक्टर ही दे सकता है। यदि इनमें से किसी भी प्रश्न का उत्तर 'हाँ' में है, तो आपको डॉक्टर और समर्थ योग-शिक्षक से सम्पर्क करना चाहिए, जो इन कष्टकर लक्षणों के निराकरण में आपकी सहायता कर सकते हैं। यदि आप थोड़ी-सी भी अस्वस्थता का अनुभव करते हैं, तो यह आन्तरिक गड़बड़ी का प्रथम संकेत है, जो आगे चलकर अधिक गम्भीर रोग में परिणत हो सकता है। अतएव आप ऐसे संकेतों को गम्भीरता से लें, तथा इनके सम्बन्ध में कोई रचनात्मक कदम उठायें। वह कदम है योगाभ्यास, क्योंकि वह न केवल लक्षणों को दूर करेगा, वरन् रोग को भी आगे बढ़ने से रोक देगा।

यदि आप चिन्ताओं और उद्विग्नताओं, जो आपको क्रोधित, तनावग्रस्त और दु:खी कर देती हों एवं भाग दौड़ वाला जीवन जी रहे हैं, तो आप उच्च रक्तचाप के संभावित रोगी हो सकते हैं। अत: आपको इसके प्रति सजग रहना चाहिए। यदि आप जीवन के किसी पक्ष से दु:खी हैं, तो यह आपके भावी रोग का संभावित प्रारम्भ है।

रूपरेखा

यद्यपि विभिन्न प्रकृति और व्यक्तित्व वाले मनुष्य उच्च रक्तचाप से पीड़ित हैं, उनमें से एक विशेष प्रकार के व्यक्ति ही अपेक्षाकृत अधिक संख्या में हैं। ये हैं युवा या मध्यायु वाले पदाधिकारी एवं व्यवसायी। फ्राइडमैन और रोजेनमैन, जो कि हृदय रोग विशेषज्ञ हैं तथा हृदवाहिका तंत्र पर ही विशेष रूप से कार्य करते हैं, कहते हैं कि अपने चिकित्सक जीवन में (अमरीकी संदर्भ) उन्होंने जो हृदयरोगी देखे हैं, वे सभी समान रूप से प्रतिस्पर्धी, आक्रामक, महत्त्वाकांक्षी और तनावपूर्ण जीवन पद्धति वाले व्यक्तित्व थे।[2] उन्होंने बताया कि उनके अधिकतर रोगी ऐसे स्वार्थजीवी मनुष्य थे, जो सफलता की सीढ़ियाँ तूफानी रफ्तार से चढ़कर शिखर पर पहुँचने को बेताब थे। इस बात को ध्यान में रखना चाहिए। सन् 1976 में जो 7,00,000 अमरीकी हृदय रोग से मरे, वे अधिकतर जूझारू जीवन वाले मध्य आयु के व्यवसायी थे। ऐसा अनुमान है कि उसी वर्ष 240 लाख अमरीकी उच्च रक्तचाप से आक्रान्त हुए और यह संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। उच्च रक्तचाप के रोगियों की संख्या निरन्तर बढ़ने के कारण डॉक्टरों ने अपने शब्दकोश में एक नया शब्द 'रक्तचाप महामारी' जोड़ लिया है।

यदि उपर्युक्त विवरण आप पर ठीक बैठता है, तो आप को इस ओर ध्यान देना चाहिए और सावधान हो जाना चाहिए। जो व्यक्ति इस रोग के भय से अपनी जीवन शैली बदलने के लिए तैयार नहीं हैं, उन्हें योग और ध्यान का आश्रय लेना चाहिए। इस प्रकार वे तनाव के हानिकारक प्रभावों को कम कर सकेंगे तथा अधिक विश्रान्त और पूर्णता से भरा जीवन जी सकेंगे।

संभावित परिणाम

उच्च रक्तचाप का प्रधान खतरा यह नहीं है कि इससे रक्तचाप बढ़ जाता है, वरन् बढ़े हुए रक्तचाप के हानिकारक परिणाम हैं। शरीर में अनेक अव्यवस्थायें उत्पन्न हो सकती हैं, क्योंकि रक्तवाहिकायें शरीर के प्रत्येक अंग में रक्त पहुँचाती हैं। जब वे संकीर्ण हो जाती हैं, तो रक्त के अन्तर्प्रवाह को बाधित करती हैं। इससे ऑक्सीजन वितरण और अपशिष्ट निष्कासन बाधित हो जाता है तथा ऊतक नष्ट होने लगते हैं। यह अंगों के कार्यों में बाधा पहुँचाती है। यदि मस्तिष्क, वृक्क, हृदय आदि के कार्यों में बाधा उत्पन्न हुई, तो वह घातक होगी। इसकी कुछ अभिव्यक्तियाँ निम्नवत् हैं–

- *हृदय रोग*– हृदय पर जितना अधिक दबाव पड़ता है, उसके आकार में उतनी ही वृद्धि होती जाती है, जिससे उसके आन्तरिक अंग, जैसे, कपाट आदि क्षतिग्रस्त हो जाते हैं और इस प्रकार उसकी समस्त कार्यक्षमता कम हो जाती है। उच्च रक्तचाप धमनी काठिन्य से सम्बन्धित है, अत: हृदय भी हृत्पात प्रवण हो जाता है।
- *मस्तिष्क*– मस्तिष्क को ऑक्सीजन आपूर्ति घट जाती है, जिससे वह श्रेष्ठतम स्तर का कार्य सम्पादन नहीं कर पाता। प्रारम्भ में इसका परिणाम सिर दर्द, चक्कर आना, सारी पृथ्वी घूमती हुई लगना आदि के रूप में परिलक्षित हो सकता है तथा बाद में भावनात्मक असन्तुलन, एकाग्रता और स्मृति ह्रास एवं तत्पश्चात अधिक गंभीर रोग, जैसे, जैव-मस्तिष्क ह्रास (मस्तिष्क शोथ), धमनियों का फटना, जिससे लकवा हो सकता है और मृत्यु भी हो सकती है।
- *आँखें*– दृष्टि का धुँधला हो जाना तथा अकस्मात् या धीरे-धीरे आँखों की रोशनी समाप्त हो जाना। दृष्टि का द्विविधात्मक (डिप्लोपिया) हो जाना या उसमें अन्य दोषों का उत्पन्न होना।
- *वृक्क*– दुष्क्रिया प्रारम्भ होगी, जिससे मूत्र उत्पादन की क्षमता समाप्त हो सकती है। इससे शरीर में विषाक्त तत्त्व बढ़ेगा और फलस्वरूप मृत्यु हो जायेगी।
- *संघातिक या असाध्य उच्च रक्तचाप*– यह रोग का गंभीर रूप है। रक्तचाप अत्यधिक उच्च होने लगता है, जिससे किसी भी क्षण मृत्यु हो सकती है।

कम-से-कम कहने में तो उच्च रक्तचाप के परिणाम अप्रीतिकर ही लगेंगे, परन्तु संभावनाओं का ज्ञान रोगमुक्ति की सफल विधियों की तलाश में आपकी इच्छा को प्रोत्साहन देगा। आपकी वर्तमान चिकित्सा व्यवस्था में तत्काल योग को जोड़ देने से जटिलताओं से बचने की संभावना बढ़ जायेगी। शरीर और मन को विश्रान्त कर योग रक्त वाहिकाओं को विश्रान्त कर देता है तथा ऊतकों में रक्त, ऑक्सीजन और पोषक तत्त्वों की उत्तम आपूर्ति सुनिश्चित करता है। प्राण के वर्द्धित प्रवाह से बढ़ी हुई आपूर्ति आपके उत्तकों को संजीवनी शक्ति से भर देगी तथा पुनर्नवीनीकरण एवं पुनरोत्पादन क्रिया में सहायता करेगी।

चिकित्सीय दृष्टि

समाज में जीवन-यापन की शैली भी उत्तम या निम्न स्वास्थ्य में योगदान देती है। उच्च रक्तचाप या अन्य किसी रोग की उत्पत्ति के कारणों में जीवन के अनेक पक्ष सम्मिलित हैं। उच्च रक्तचाप आधुनिक सामाजिक जीवन के तनाव जनित रोग का एक अच्छा उदाहरण है।

चिकित्सा विज्ञान के अनुसार उच्च रक्तचाप के अनेक विशिष्ट कारण हैं। ऐसा माना जाता है कि इन उत्तरदायी कारणों के सम्मिलित प्रभाव से पिछले दशक में उच्च रक्तचाप के रोगियों में वृद्धि हुई है। ये कारण हैं– आनुवंशिकता, उम्र, धूम्रपान, वसा बहुल भोजन, निरुद्यमी जीवन शैली, व्यक्तित्व की विशेषतायें, स्वभाव तथा भावनायें।

आनुवंशिकता

यदि आपके माता-पिता, दोनों को उच्च रक्तचाप रहा है, तो आपको उच्च रक्तचाप होने की संभावना सामान्य से 45% अधिक है। यदि दोनों में से किसी एक को उच्च रक्तचाप था, तो संभावना सामान्य से 30% अधिक होगी। अत: उच्च रक्तचाप के कारणों में आनुवंशिकता की भी भूमिका है, क्योंकि इसके द्वारा आधारभूत विशिष्टताओं की नींव पड़ती है, जो परिवेश और अधिगृहीत आचरण द्वारा परिवर्तित होती है। इनमें से कुछ कारण वंशानुगत हो सकते हैं, पर अधिकतर माता-पिता की वृत्तियों के फलस्वरूप होते हैं। उच्च रक्तचाप होने के कारण चाहे जो भी रहे हों, सभी उपचार योग्य हैं।

उम्र

चालीस से साठ वर्ष आयु समूह में उच्च रक्तचाप का प्रादुर्भाव अधिकतम होता है, यद्यपि उच्च रक्तचाप से पीड़ित युवा व्यक्तियों की संख्या बढ़ती जा रही है। अधिकतर व्यक्तियों में उम्र बढ़ने के साथ रक्तचाप भी सामान्य रूप से बढ़ता है, जिसे उच्च रक्तचाप के परास में नहीं माना जाता। तथापि बढ़ते समय के साथ रक्तचाप उच्च करने वाले तत्त्वों के जमा होने की संभावना अधिकाधिक है। अन्ततोगत्वा जिन व्यक्तियों का रक्त परिसंचरण तन्त्र अधिक संवेदनशील है तथा जिनकी जीवन शैली भी रोग उत्पन्न करने में सहायक है, वे उस अस्पष्ट सीमा को पार कर जाते हैं, जो सामान्य और उच्च रक्तचाप के मध्य है।

यह तो स्पष्ट ही है कि वार्द्धक्य और उसके परिणामस्वरूप शरीर का क्षीण होना रोग प्रक्रिया को सुगम बना देता है। इसके साथ ही विष संचय, दबाव से उत्पन्न हार्मोन और तनाव, वार्द्धक्य की प्रक्रिया को तीव्रतर कर देते हैं। उच्च रक्तचाप के समान क्षयकारक रोग वयस्कों में अधिक होते हैं, परन्तु बच्चों में शायद ही कभी होते हैं। आयु वृद्धि के साथ धमनियों की कठोरता बढ़ जाने की अधिक संभावना रहती है और इसी के साथ उच्च रक्तचाप की भी।

धूम्रपान

अब तो इसके अकाट्य प्रमाण उपलब्ध हैं कि धूम्रपान स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। यह ज्ञात है कि सामान्य रूप से धूम्रपान का फुफ्फुसीय कैंसर एवं फुफ्फुस रोगों के अतिरिक्त हृदय की रक्तवाहिकाओं के कठोर होने में (अरक्ताजन्य हृदय रोग), परिसरीय वाहिकाओं की विकृति (परिसरीय वाहिका रोग) से उत्पन्न परिसरीय प्रतिरोध क्षमता की अधिकाधिक वृद्धि में तथा दृष्टि तन्त्रिका शोथ में पर्याप्त योगदान है। यह पाया गया है कि ये सभी रोग धूम्रपान करने वालों में धूम्रपान नहीं करने वालों की अपेक्षा अधिक प्रचलित है।

कोलेस्ट्राल एवं वसा-बहुल आहार

कोलेस्ट्राल तथा रक्तवसा में वृद्धि एवं रक्तवाहिका अव्यवस्था के बढ़ते प्रभाव क्षेत्र में सह-सम्बन्ध पाया गया है। जब वाहिकायें रुग्ण रहती हैं, तब उच्च रक्तचाप होने की संभावना अधिक हो जाती है। जिस आहार में वसा की मात्रा अधिक होती है, वह स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं होता। अत: आपका

रक्तचाप यदि सामान्य है, तो आपके लिए परामर्श है कि आप अपने आहार में वसा की मात्रा सीमित ही रखें, जिससे आपका स्वास्थ्य उत्तम बना रहे। उच्च रक्तचाप के साथ अत्यधिक वसायुक्त आहार वाहिकाओं की दीवारों में शीघ्रतापूर्वक वसा का जमाव करता है एवं धमनियों के कठोर होने की क्रिया को भी तीव्र कर देता है।

निरुद्यमी जीवन पद्धति

सभ्यता के यन्त्रीकरण और शहरी जीवन ने ऐसे व्यक्तियों की संख्या कम कर दी है, जो उत्साहपूर्वक व्यायाम करते थे। प्रौद्योगिकीय प्रगति से कारों, सिनेमा, टेलीविजन, पुस्तकों तथा सभी यांत्रिक उपकरणों का उपयोग व्यापक हो गया है। घर, कार्यालय और मनोरंजन हेतु हमको न्यूनतम शारीरिक गतिशीलता की आवश्यकता है। जो वस्तुयें कभी विलासिता मानी जाती थीं, आज वे आवश्यकताओं का रूप ग्रहण करती जा रही हैं। यही है प्रगति।

निरुद्यमी कर्मियों और व्यवसायियों का, जो अधिक उच्च रक्तचाप प्रवण हैं, अनुपात भी बढ़ा है। यह वृद्धि उच्च रक्तचाप आक्रान्त मनुष्यों की बढ़ती जा रही संख्या के ही समानान्तर चल रही है। सांख्यिकी तथा परीक्षणों द्वारा यह प्रमाणित हो गया है कि अपर्याप्त शारीरिक व्यायाम के कारण शरीर और दुर्बल हो जाता है तथा अधिक उच्च रक्तचाप प्रवृत्त हो जाता है, विशेष रूप से तब जब मानसिक तनाव भी इसके साथ जुड़ जाय।

व्यक्तित्व, तनाव और भावना

मनोचिकित्सक थॉमस होम्स के नवीनतम शोधों से शोध कर्त्तागण विश्वास करने पर बाध्य हो गये हैं कि निरन्तर बना रहने वाला तनाव, चाहे वह मानसिक हो या भावनात्मक, शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास कर देता है। एक अध्ययन में होम्स एवं उनके सहयोगी रिचर्ड राहे ने पाया है कि ऐसे व्यक्ति जो अपने जीवन में बड़े परिवर्तनों से गुजरे हैं, जैसे, आजीविका का नया साधन अपनाना, तलाक, परिवार के किसी सदस्य की मृत्यु आदि, उनमें से 79% लोग परिवर्तन के दो वर्ष के भीतर ही किसी-न-किसी रोग से ग्रस्त हो गये, जबकि छोटे-छोटे परिवर्तनों को झेलने वाले लोगों में से केवल 37% लोग ही इन रोगों से पीड़ित हुए।

शोधकर्त्ता तीस वर्षों से प्रायोगिक-जीवों पर उच्च रक्तचाप बढ़ाने वाले भावनात्मक तनाव आरोपित कर अनेक प्रयोग करते आ रहे हैं।

हृदय रोग के बढ़ते प्रभाव के अपने अध्ययन में हृदय रोग विशेषज्ञ मेयर फ्राइडमैन और आर. एच. रोजेनमैन ने आहार, व्यायाम और रक्तवर्ग जैसे कारकों की अपेक्षा व्यक्तित्व तथा कार्य-सम्बद्ध-तथ्यों को अधिक प्रभावी पाया है।[3] उन्होंने अपनी यह दृष्टि तब बदली जब उनके प्रतीक्षा-कक्ष में उपस्करों की मरम्मत करने वाले ने बताया कि कक्ष की सभी कुर्सियों के गद्दे आगे की ही ओर से अधिक घिसे हैं। उन दोनों विशेषज्ञों ने समान रूप से पाया कि उनके यहाँ आने वाले प्राय: सभी रोगियों में कुछ गुण समान थे– आक्रामकता, प्रतिस्पर्धा, महत्त्वाकांक्षा और तनावपूर्ण जीवन शैली। उन्होंने सिद्ध किया कि प्रतिष्ठा के सोपानों पर तूफानी वेग से चढ़ने वाले, स्वार्थजीवी व्यक्तियों के रक्त प्रवाह में वसा एवं तनाव हार्मोन की मात्रा काफी ऊँची रहती है। यह इस बात का संकेत है कि ऐसे लोगों में ये हार्मोन अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं। इस समूह को उन्होंने 'अ' श्रेणी व्यक्तित्व में रखा एवं पाया कि ये लोग अधिक हृदय रोग प्रवृत्त हैं।

श्रेणी 'आ' व्यक्तित्व के व्यक्ति, जो मस्तमौला जीव होते हैं, अपेक्षाकृत कम हृदय रोग प्रवण होते हैं। फ्राइडमैन और रोजेनमैन ने परामर्श दिया है कि श्रेणी 'अ' के व्यक्ति यदि अधिक उन्मुक्त और विश्रान्त हो जायें, तो वे अपने व्यक्तित्व को बदल सकते हैं और हृदय रोग की संभावनाओं को कम कर सकते हैं।

अनेक मनोवैज्ञानिकों और मनोचिकित्सकों का शास्त्रीय मत है कि अज्ञात हेतुक उच्च रक्तचाप में व्यक्तित्व की भूमिका बाह्य रूप से स्नेहपूर्ण और नियंत्रित रहती है, पर उसकी तह में घोर आक्रामकता और चिन्ता छिपी रहती है। अपनी आक्रामकता की अभिव्यक्ति के सम्बन्ध में रोगी का भय, उसकी चिन्ता को अधिक बढ़ा देता है और उसमें निरन्तर द्वन्द्व की स्थिति पैदा हो जाती है।

हम अपने व्यक्तित्व के स्वरूप के अनुसार ही आन्तरिक, भावनात्मक और मानसिक तनावों तथा परिवेशीय परिस्थितियों पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। यह आत्मपरक तथ्य है। अर्थात् आन्तरिक या बाह्य उद्दीपकों को हम किस रूप में ग्रहण करते हैं, इसी पर उनका प्रभाव निर्भर करता है। कोई वस्तु या कोई स्थिति तनावोत्पादक हो सकती है, यह उसके प्रति हमारी

मनोवृत्ति पर निर्भर करता है। यहाँ तक कि मनोरंजन और मनोरंजनात्मक क्रियायें भी हमारी अन्तरात्मा में नकारात्मक प्रतिक्रिया उत्पन्न कर सकती हैं। यदि हम आन्तरिक रूप से सबल हैं, तो ऐसी परिस्थितियों को निपुणता से सम्हाल लेते हैं तथा तनाव-जनक समस्या का समाधान कर लेते हैं। व्यक्तित्व की नकारात्मक दृष्टि तनाव उत्पन्न करती है। यदि हम उसमें उलझ गये, तो यह हमारी ऊर्जा को नष्ट एवं हमें कमजोर करेगी और रोग उत्पन्न करेगी।

कारण

उच्च रक्तचाप के मामलों में 80% का तो कोई ज्ञात चिकित्सीय कारण भी नहीं होता तथा इन्हें अज्ञात-हेतुक उच्च रक्तचाप कहते हैं। इस अज्ञात हेतुक उच्च रक्तचाप की प्रकृति के सम्बन्ध में विवाद है। एक वैज्ञानिक सिद्धान्त के अनुसार यह एक सुस्पष्ट रोग है। दूसरा मत यह मानता है कि व्यक्ति की लम्बाई या भार के समान उच्च रक्तचाप भी जन समुदाय की क्रमिक विशिष्टता है। अनेक सिद्धान्त हैं तथा सभी यही प्रतिपादित करते हैं कि चिकित्सा विज्ञान इस रोग को पूर्णरूपेण समझ नहीं सका है। स्पष्टत: अनेक ऐसे तथ्य हैं, जो अभी तक उद्घाटित नहीं हुए हैं तथा संभवत: कुछ प्राथमिकतायें बदलने की आवश्यकता है।

सम्पूर्ण रोग को समझने हेतु सभी तथ्यों का पुनर्मूल्यांकन होना आवश्यक है। जब हम सभी ज्ञात और अनिश्चित संभावित कारणों को एकत्र करते हैं, तब हम अज्ञातहेतुक उच्च रक्तचाप के आवरण को भेदना प्रारम्भ करते हैं। अज्ञात हेतुक शब्द ही प्रतिबिम्बित करता है कि अभी तक चिकित्साशास्त्री और शोधकर्त्ताओं के मन में यह अनिश्चय है कि वस्तुत: उच्च रक्तचाप है क्या? जब सम्पूर्ण चित्र स्पष्ट हो जायेगा तब इस अज्ञातहेतुक शब्द की कोई आवश्यकता नहीं रह जायेगी।

इस अध्याय में चर्चित विषय वे ही हैं, जो चिकित्सा विज्ञान द्वारा प्रायोगिक प्रमाणों के आधार पर उच्च रक्तचाप में भूमिका निभाने वाले तथ्यों के रूप में मान्य हैं। पाँच या छ: विषय, जो सूची में हैं, शुद्ध रूप से स्थूल शरीर से सम्बन्धित हैं। फिर भी डॉक्टरों की राय में अनेक खोयी हुई कड़ियाँ हैं, जिन्हें अधिक लोगों ने स्पष्टतया स्वीकारा है। अत: कारण और उपचार के सम्बन्ध में एक नयी दृष्टि की आवश्यकता है।

उपचार

अज्ञात हेतुक उच्च रक्तचाप का कोई सुनिश्चित उपचार नहीं है, क्योंकि चिकित्सा विज्ञान ने इस अव्यवस्था का कोई सुनिश्चित कारण पाया नहीं है। उपचार का उद्देश्य है विश्राम, आहार, तनाव से बचाव और औषधि के उपयोग द्वारा रक्तचाप को कम करना।

सामान्य चिकित्सीय परामर्श– स्वस्थ जीवन-यापन के परामर्श में रक्तचाप तथा धमनी काठिन्य की संभावनाओं को कम करने हेतु कम वसा और कम लवण ग्रहण करने के निमित्त आहार में परिवर्तन करना भी है। आहार-संयम से मोटापा कम होता है। धूम्रपान का निषेध और भावनात्मक तनाव से बचाव होना चाहिए। शरीर सामर्थ्य के अनुसार व्यायाम की अनुशंसा भी की जाती है।

उच्च रक्तचाप निरोधी औषधियाँ– डॉक्टरों के चयन हेतु अनेक प्रकार की औषधियाँ उपलब्ध हैं। एक बार आप औषधोपचार प्रारम्भ कर देते हैं, तो आप उससे बंध जाते हैं, अर्थात् सामान्य चिकित्सीय व्यवस्था के अनुसार आजीवन औषधि लेते रहना पड़ेगा। अधिकांश मामलों में बिना किसी पार्श्व प्रभाव के औषधियाँ रक्तचाप कम करती हैं, तथापि आपको औषधि तो लेते ही रहना पड़ेगा, लक्षणों में सुधार के बाद भी।

सतही तौर पर ऐसा प्रतीत भी होगा कि रक्तचाप का निवारण हो गया है, पर यदि इस अवस्था में आप औषधि सेवन बन्द कर देते हैं, तो इतना खतरा तो आप उठाते ही हैं कि रक्तचाप पुनः पूर्व स्तर पर या उससे भी अधिक उच्च स्तर पर पहुँच जाये और ऊपर से झेलना पड़े इसका दुःखद प्रभाव। इसे प्रतिक्षेपी घटना कहते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि औषधि उच्च रक्तचाप के मूल कारणों को दूर नहीं करती, केवल उनका शमन कर देती है। पर औषधियों के अप्रिय पार्श्व प्रभाव भी हो सकते हैं।

योग ही उच्च रक्तचाप के मूल कारणों का निरापद और दक्ष तरीके से उन्मूलन कर सकता है। तथापि दीर्घकालीन योगोपचार की प्रारंभिक तैयारी के रूप में उच्च रक्तचाप को औषधि प्रभावी ढंग से खतरे के स्तर से कम करती है, फिर बाद में उसका प्रयोग बन्द किया जा सकता है।

इस तरह चिकित्सीय उपचार औषधि एवं सामान्य परामर्श पर निर्भर करता है। इसके साथ ही निपुण डॉक्टर रोगी के व्यक्तिगत एवं पारिवारिक समस्याओं से अवगत हो जाता है, ताकि वह रोगी की आन्तरिक अवस्था को उत्तेजित करने वाली समस्याओं से मुक्ति दिला सके।

डॉक्टर और रोगी में हार्दिक संवादशीलता, विश्वास और आस्था सफल उपचार सुनिश्चित तो करती ही है, सफल रोग मुक्ति की संभावनाओं को भी बढ़ा देती है।

पूर्वानुमान (दूरगामी दृष्टिकोण)

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान द्वारा प्रस्तुत चित्र सुखद नहीं है। यह ज्ञात है कि उच्च रक्तचाप घातक रोग है। यह भी ज्ञात है कि एक बार जब आप औषधि सेवन प्रारम्भ कर देते हैं और यदि योगाभ्यास नहीं करते हैं, तो शेष जीवन भर आपको औषधि पर आश्रित रहना होगा। योग की विधियों से लाभान्वित योग अभ्यासियों के साथ अपने अनुभवों के आधार पर हम जानते हैं कि योगाभ्यास न केवल औषधि की तरह रोग के लक्षणों को दूर करेगा, वरन् शरीर और मन, दोनों का रूपान्तरण कर उच्च रक्तचाप का मूलोच्छेद कर देगा। योग तो सदा से उपलब्ध है, पर अभी तक चिकित्सा करने वाले डाक्टरों की वहाँ तक पहुँच नहीं थी। अब तो वैज्ञानिक आँकड़े उपलब्ध हैं, तथा उन्होंने प्रमाणित भी कर दिया है कि योग उच्च रक्तचाप के उपचार में औषधि को विस्थापित कर सकता है।

योग की दृष्टि

योग की दृष्टि में उच्च रक्तचाप के कारणों में मन एक अति महत्त्वपूर्ण संघटक है। चिकित्सा विज्ञान द्वारा सुचिन्तित सभी पहलुओं में यह सर्वनिष्ठ और अन्तर्निहित तथ्य है। चिकित्सा विज्ञान द्वारा प्रस्तुत रोगोत्पादक कारणों की सूची सही है, तथापि उच्च रक्तचाप के पूर्ण और गहन ज्ञान हेतु सूची को संवर्द्धित करने एवं प्राथमिकताओं के पुनर्वर्गीकरण की आवश्यकता है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि योग की शब्दावली में 'अज्ञातहेतुक' शब्द नहीं है।

अतएव योग द्वारा किया गया वर्गीकरण निम्नवत् है–

1. *मानसिक कारण*– उच्च रक्तचाप सम्बन्धी रोगों का सार या मूल मन में है।
2. *प्राणिक कारण*– उच्च रक्तचाप शरीर के ऊर्जा-तन्त्र की गड़बड़ी से भी सम्बन्धित है।
3. *व्यक्तित्व में तनाव*– ये घटक तो मन द्वारा ही निर्धारित होते हैं, अत: मानसिक कारण के अन्तर्गत आने चाहिए, पर स्पष्टता की दृष्टि से अलग दिये जा रहे हैं।
4. *शारीरिक कारण*– चिकित्सीय कारणों में से 5 इसी पक्ष में आ जाते हैं। इनमें से महत्त्वपूर्ण कारक निम्नांकित हैं–

   क) जीवन शैली– आधुनिक जीवन, सोने की आदतें, धूम्रपान, आहार

   ख) आनुवंशिकता

   ग) आयु और वार्द्धक्य (बुढ़ापा)

योग चिकित्सा विज्ञान से सहमत है, परन्तु मानव शरीर रचना के समग्र गहन ज्ञान और अनुभव के द्वारा योग ने यह भी पाया है कि मानव शरीर के कार्यों में मन व्यापक और महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह स्वास्थ्य की रक्षा

कर सकता है, उसे उन्नत कर सकता है या फिर उच्च रक्तचाप जैसे रोग भी उत्पन्न कर सकता है। उच्च रक्तचाप के सम्पूर्ण कारण-प्रक्रिया में शारीरिक पक्ष की भी भूमिका है, पर अत्यल्प।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी मानसिक पक्ष को महत्त्व देता है तथा इधर नवीनतम शोध कार्य मानसिक तनाव और व्यक्तित्व के घटकों की ओर संकेत कर रहे हैं। तथापि अभी नवीनतम शोध कार्यों को चिकित्सीय चिन्तन से पूर्णतया समन्वित होना है तथा वे व्यवहारिक उपयोग से अभी कुछ दूर हैं। इस क्षेत्र में योग अधिक सहायक हो सकता है। यह रोगोत्पत्ति के कारणों की व्याख्या करता है तथा मानव जीवन के अन्य आयामों के संदर्भ में मन की कार्यशैली को तथा साथ-ही-साथ क्रमिक रूप से प्रायोगिक प्रक्रियायें भी प्रस्तुत करता है। ये विधियाँ मानसिक तनावों को परत दर परत दूर करती हैं, जब तक उच्च रक्तचाप के कष्टों से मुक्त तनावरहित, आनन्दपूर्ण जीवन की अनुभूति न होने लगे।

मन और शरीर तो एक ही हैं। वे केवल सम्बद्ध ही नहीं हैं, वरन् इनमें अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है, तथा वे परस्पर एक-दूसरे को प्रतिबिम्बित भी करते हैं। हम जिसे शारीरिक स्तर पर उच्च रक्तचाप के रूप में देखते हैं, वह मानसिक स्तरों से चल कर मस्तिष्क और शरीर में परिलक्षित होता है।

भगवद् गीता के पन्द्रहवें अध्याय में कहा गया है कि एक अक्षयवट की जड़ें ऊपर की ओर और शाखायें नीचे की ओर हैं।

ऊर्ध्वमूलमध:शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।
छंदांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥ 1 ॥

आज विज्ञान भी इसे सम्पुष्ट कर रहा है। चिकित्सा विज्ञान ने शरीर का विच्छेदन किया है तथा गीता में वर्णित उस उल्टे वृक्ष को मस्तिष्क एवं मेरुरज्जु के रूप में पाया है। उसकी धड़ है मेरुरज्जु, शाखायें हैं सम्पूर्ण शरीर में फैली परिसरीय तन्त्रिकायें तथा जड़े हैं मस्तिष्क की भूमि में गहरे बैठा हुआ मन।

शरीर मन से सीधे प्रभावित होता है। यदि मन की सकारात्मक मनोवृत्तियाँ, शक्ति एवं स्वास्थ्य सुरक्षित रहें, तो शरीर अच्छी तरह पोषित एवं समृद्ध होता रहेगा। यदि मानसिक समस्यायें हैं, विक्षिप्तता है, नकारात्मकता है, बद्धमूल कुंठायें हैं और मानसिक तनाव हैं, तो वृक्ष मुरझा जाता है। उच्च रक्तचाप जैसी

बीमारियाँ प्रकट होकर संकेत देती हैं कि शरीर का कोई अंग ठीक से काम नहीं कर रहा है। यह संकेत है कि शरीर और मन पर ध्यान देने की आवश्यकता है, नहीं तो परिणामस्वरूप मृत्यु भी हो सकती है।

पंचकोश

योग शास्त्र मन पर उसके समुचित संदर्भ में विचार करता है। हम भी जब उस संदर्भ को प्राप्त कर लेते हैं, तो उन योगियों के समान ही, जिन्होंने प्राचीन शास्त्रों की रचना की है, मन और उच्च रक्तचाप से प्रभावशाली ढंग से निपट सकते हैं। वे कहते हैं कि हमारे शरीर के पाँच संघटक या कोश हैं।

भौतिक शरीर के दो भाग हैं– अन्नमय कोश, वास्तविक भौतिक शरीर और प्राणमय कोश, जैव ऊर्जा आवरण, जिसे वैज्ञानिकों द्वारा, जिन्होंने वैद्युतिक क्षेत्र में इसके प्रतिबिम्ब का फोटोग्राफ (किर्लियन फोटोग्राफी विधि से) लिया है, जैव प्लाज्मिक या जैव ऊर्जा शरीर कहा जाता है। यह एक सूक्ष्म संरचना प्रस्तुत करता है, जो स्थूल शरीर का संघटन करता है और चयापचय एवं अंगों की गति हेतु ऊर्जा की आपूर्ति करता है।

मन के, जिसे सूक्ष्म शरीर भी कहते हैं, दो भाग हैं– मनोमय कोश या निम्न मानसिक आवरण, जो बौद्धिक और तार्किक क्रियाशीलनों से सम्बद्ध तथा स्थूल शरीर से कहीं अधिक सूक्ष्म है, और विज्ञानमय कोश या उच्चतर मानसिक आवरण, जो अधिकाधिक सूक्ष्म होता है। यह अन्तर्ज्ञान, प्रेरक और रचनात्मक चिन्तन एवं कर्मों से सम्बद्ध है। यह आध्यात्मिक क्षेत्र से भी सम्बन्ध रखता है। पाँचवाँ तथा अपेक्षाकृत और भी अधिक सूक्ष्म शरीर आनन्दमय कोश या कारण शरीर कहा जाता है। यह प्रकाशमय शरीर है। ये पाँचों कोश, जीवात्मा या व्यष्टि आत्मा को आवृत्त किये रहते हैं।

इन सभी शरीरों का समुचित जीवन पद्धति और आहार से सम्पोषण होना चाहिए। स्थूल शरीर के लिए आहार, निद्रा और सामान्य जीवन पद्धति में नियमन आवश्यक है, जिससे उच्च रक्तचाप न हो। मन स्थूल शरीर के साथ संतुलन में रहना चाहिए तथा उसे चिन्ता एवं तनाव से मुक्त रखना चाहिए। मानसिक तनाव शरीर में परिलक्षित होता है तथा इसके ठीक विपरीत भी होता है। समग्र शरीर का प्रत्येक संघटक अपने सम्पोषण एवं प्रभावशाली क्रियाशीलन के लिए अन्य संघटकों पर आश्रित है। निम्न उदाहरण से हम मन और शरीर के सम्बन्ध का अनुमान लगा सकते हैं। चपाती बनाने हेतु पहले

हम आटे और पानी को मिलाते हैं तथा कुछ अन्य चीजों को भी मिलाते हैं। अपने स्थूल शरीर को आटा और मन को पानी मान लें, तो गुंथा हुआ आटा जीव है। अब यह गुंथा हुआ आटा खाने योग्य भी हो जाय और अपना प्रयोजन सिद्ध कर सके, इस निमित्त उसे आग और हवा का सामना करना होगा और एक निश्चित तापमान तक ठीक से और समुचित समय तक पकना होगा। यदि हम तनाव का सामना करने के उपायों के बिना सामान्य, भागदौड़ से भरा और तनावपूर्ण जीवन-यापन करते हैं, तब तो हमारी चपाती या तो कच्ची रह जायेगी या जल जायेगी। योग जीवन रूपी चपाती को ठीक ढंग से पकाने का एवं स्वादिष्ट और जीवनदायी बनाने का साधन है।

मानसिक कारण

प्रत्येक मनुष्य में कुछ विशिष्ट प्रवृत्तियाँ या मानसिक समस्यायें रहती हैं, जो दु:खद क्षणों, तनावों, अवसादों तथा चिन्ताओं को जन्म देती हैं। शायद ही कोई मनुष्य हो, जो इन प्रभावों से मुक्त हो। हम अपने स्वास्थ्य और परिवेश पर अपनी व्यक्तिगत समस्याओं और नकारात्मक वृत्तियों का प्रभाव देख सकते हैं। मानसिक दुर्बलताओं से स्वास्थ्य खराब होता है, पारस्परिक सम्बन्ध जटिल हो जाते हैं तथा विशेष रूप से अन्य अनेक दुष्प्रभाव भी अस्तव्यस्त और प्रदूषित परिवेश में उत्पन्न होते हैं। हाँ, हमारे स्वभाव का सकारात्मक पक्ष भी है, जिसे हमें नहीं भूलना चाहिए। तथापि अधिक सकारात्मक होने एवं उच्च रक्तचाप के कारणों को दूर करने के लिए तथा साथ-ही-साथ सम्भावित बीमारियों का निरोध करने के लिए हमको उनके कारकों के प्रति अधिक सजग होना चाहिए, जो रोग के वास्तविक कारण हैं। हमें जानना चाहिए कि यह किस प्रकार उत्पन्न हुआ है और तत्पश्चात् उसका निराकरण करना चाहिए।

जब हमें प्रदूषित परिवेश में तथा आधुनिक समाज के भाग-दौड़ से भरे जीवन में रहना पड़ता है, तब मानसिक, भावनात्मक और शारीरिक तनाव बढ़ते हैं। मन शरीर से अधिक सूक्ष्म संघटक है तथा शीघ्रता से रूपान्तरित होता है। यह बाह्य घटनाओं के प्रति हमारी आन्तरिक प्रतिक्रियाओं से प्रभावित एवं क्षत-विक्षत हो जाता है और इसी कारण मानसिक आदतें बनती हैं। आदतें अच्छे या खराब स्वास्थ्य में सहायक हो सकती हैं। शरीर, जो मन की अपेक्षा अधिक स्थूल और कम लचीला है, परिवर्तित होने में अधिक समय लेता है, पर परिवर्तन तो उसमें भी होता ही है। यदि हम सजगता के अभाव में मन के भीतर तनावों को जमा होने देते हैं, तो वे पहले तो अवसाद, चिन्ता और भय जैसी मानसिक समस्यायें उत्पन्न करते हैं, और अन्ततोगत्वा ये मानसिक प्रक्रियायें

शरीर को इस प्रकार क्षतिग्रस्त कर देती हैं, जैसे सागर की तूफानी लहरें तट को अपने लगातार प्रहार से काट कर खाड़ियों और गुफाओं में बदल देती हैं।

मानसिक तनाव प्राणिक संरचनाओं के माध्यम से शरीर में उतरते हैं। सर्वप्रथम वे मस्तिष्क के माध्यम से प्रवेश करते हैं, जो मन और शरीर की देहरी है। मस्तिष्क है तो स्थूल शरीर का अंग, तथापि यह मन के साथ भी घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। मन अन्त: और बाह्य जगत का संगम है, व्यक्तित्व का संगम है, जो हमें अन्त: अनुभवों को बाह्य जगत में सम्प्रेषण की तथा प्रत्येक क्षण बाह्य जगत की घटनाओं के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करने की क्षमता प्रदान करता है। यह बाह्य सम्प्रेषण और आत्माभिव्यक्ति का साधन है। यदि यह स्वस्थ रहे, तो हमारे जीवन की गुणवत्ता अत्यधिक बढ़ जाती है।

मस्तिष्क स्वसंचालित तन्त्रिका तन्त्र का नियमन करता है, जो रक्तचाप नियंत्रित करता है। जब यह उच्चतर या सूक्ष्म उत्तेजनाओं से आन्दोलित हो जाता है, तब अत्यधिक अनुकम्पी उद्दीपन के कारण हम उच्च रक्तचाप से आक्रान्त हो जाते हैं। हमारा मस्तिष्क हमारे परिवेश और जीवन पद्धति को भी प्रभावित करता है।

विज्ञान की नई शाखा परामनोविज्ञान के प्रादुर्भाव के साथ ही मन पर अनेक शोध कार्य हुए हैं। विज्ञान शरीर पर मन के प्रभावों की खोज करना चाहता है तथा कतिपय परासामान्य अनुभवों यथा– टेलीपैथी (विचार सम्प्रेषण), साइकोकाइनेसिस, साइकोट्रोनिक्स, आस्था चिकित्सा आदि का आधार भी जानना चाहता है।

अमेरीका में परामनोविज्ञान और चिकित्सा अकादमी की स्थापना हुई है, जो अन्य क्षेत्रों के अतिरिक्त अपरम्परागत चिकित्सा विधियों, यथा– अतीन्द्रिय चिकित्सा, रेडियोनिक्स, एक्यूपंक्चर और योग पर शोध कर रही है। उसका तथा अन्य शोधकर्त्ताओं का चेतना का मानचित्र बनाने का, मन का रेखांकन करने का और शरीर पर मन के प्रभावों की रूपरेखा तैयार करने का प्रयास है। इन शोध कार्यों द्वारा मनोदैहिक बीमारियों के विषय में, जिसमें उच्च रक्तचाप भी एक है, एवं सभी बीमारियों में मन की भूमिका के विषय में अधिक तथ्य सामने आयेंगे।

अमेरीका के मैनिंजर फाउन्डेशन के शोध विभाग की मनोकायिक प्रयोगशाला के प्रधान डॉ. एल्मर ग्रीन कहते हैं, कि 80% बीमारियों के मूल में मनोकायिक घटक होते हैं। उनकी यह धारणा जैव पुनर्निवेश (बायोफीडबैक)

सम्बन्धी उनके अध्ययन पर आधारित है। शरीर तन्त्र में आन्तरिक परिवर्तनों को जाँचने वाले यन्त्र के द्वारा तथाकथित 'अनैच्छिक' क्रियाओं को सीधे नियंत्रित करने हेतु शरीर का प्रशिक्षण ही जैव पुनर्निवेश है। यह यन्त्र अभ्यास करने वाले व्यक्ति को शरीर के सूक्ष्म परिवर्तनों की, जो सामान्य रूप से इन्द्रियगोचर नहीं होते, सूचना देकर सजग करता है। उदाहरण के लिए, उच्च रक्तचाप के रोगी इस यन्त्र की सहायता से रक्तवाहिकाओं के अन्तर्व्यास का नियमन करना सीखते हैं। रक्तवाहिकाओं के अधिक विस्फारित या संकीर्ण होने की सूचना यह यन्त्र प्रकाश के जलने-बुझने के माध्यम से देता है, जिसके प्रत्युत्तर में रोगी उनका नियमन करता है। जैव पुनर्निवेश असंदिग्ध रूप से स्पष्ट करता है कि प्राणिक शरीर से ऊर्जा को निर्दिष्ट कर शरीर में परिवर्तन लाने की क्षमता मन में है।

मनोदैहिक बीमारियों से हमारा तात्पर्य असन्तुलित एवं अव्यवस्थित मानसिक प्रक्रियाओं से है, जो इस प्रकार होती हैं, मानो उन पर हमारा नियन्त्रण ही न हो। मस्तिष्क शरीर के कतिपय क्षेत्रों में उद्दीपक या निरोधी आवेग भेजकर तथा तंत्रिका तन्त्र के स्वसंचालित एवं संवेदी-प्रेरक (सेन्सरी-मोटर) घटकों का सन्तुलन कर शरीर की सामान्य कार्य प्रणाली को सुनिश्चित करता है। जब उच्चत्तर क्षेत्रों में अव्यवस्था एवं अस्तव्यस्तता उत्पन्न होती है, तब मस्तिष्क के परिपथ परिवर्तित हो जाते हैं और मस्तिष्क की कोशिकायें (न्यूरॉन) असम्बद्ध हो, नये क्षेत्रों से सम्बद्ध हो जाती हैं, जिसका शेष शरीर पर प्रतिकूल और विनाशकारी प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार रक्तचाप नियमन तन्त्र में अनियमितता उत्पन्न हो जाती है।

शरीर की विशिष्ट संरचनाओं के माध्यम से मन कार्य करता है तथा हमारी ऊर्जा अपने लिए खुलने या बन्द होने वाली वाहिकाओं से होकर प्रवाहित होती है। आनुवांशिकता और जीवन पद्धति, आदतों और जीवन प्रारूप का विकास कर मानसिक ऊर्जा के प्रवाह मार्ग का बहुत हद तक निर्धारण करती हैं। ये आदतें मस्तिष्क के परिपथों को प्रभावित करती हैं तथा ऊर्जा के प्रवाह के निमित्त न्यूनतम अवरोध वाली वाहिकायें निर्मित करती हैं।

मन के स्तर

मनोदैहिक बीमारियों में समग्र मन शरीर को प्रभावित करता है। मन में लम्बाई, चौड़ाई और गहराई तीनों आयाम होते हैं। व्यष्टि मन तो समष्टि मन के सागर

का एक बिन्दुमात्र है। व्यष्टि मन एक बून्द है, पर हमारे परिप्रेक्ष्य में वह भी विशाल है, जिसे अधिकांश सभ्यतायें अच्छी तरह नहीं समझ पायी हैं।

आधुनिक मनोविज्ञान ने मन को तीन मूल इकाइयों में विभक्त किया है– चेतन, अवचेतन और अचेतन पक्ष। चेतन पक्ष तो मन रूपी हिमशैल के शीर्ष की नोक भर है। अवचेतन और अचेतन इसके प्रच्छन्न विशाल भाग हैं। इनके अन्य नाम भी हैं, पर ये तीनों ही मुख्य हैं। नवीनतम मनोवैज्ञानिक विकास ने इस वृक्ष की एक नई शाखा का नामकरण किया है– परावैयक्तिक मनोविज्ञान जो समष्टि मन के सागर में व्यष्टि मनों के सम्बन्धों पर अधिक कार्य कर रहा है।

सही अर्थों में इसका कोई महत्त्व नहीं है कि मन को आप कितने अधिक स्तरों में विभक्त करते हैं, क्योंकि वे सभी एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। आपस में पारस्परिक क्रिया करने वाले ये सभी स्तर उच्च रक्तचाप उत्पन्न करते हैं। चेतन या स्थूल मन जानता है कि मुझे उच्च रक्तचाप है। रोग के लक्षणों के रूप में शरीर में होने वाले परिवर्तनों से हमको सावधान करता है कि हमको सम्भवतया उच्च रक्तचाप है।

अवचेतन सूक्ष्म क्षेत्र है, चेतन स्तर से ठीक नीचे का अस्पष्ट क्षेत्र, जो चेतन और अचेतन के मध्य के अन्तराल को प्रस्तुत करता है। हममें से अधिकांश के लिए यह एक धुँधला आभास भर है, तथापि ध्यान की अवधि में यह चेतन के समान ही स्पष्ट क्षेत्र हो जाता है। उस समय इसमें गोता लगा सकते हैं, अपनी सजगता के साथ इसका अनुभव प्राप्त कर सकते हैं, जैसा सामान्य जाग्रत अवस्था में होता है।

अचेतन विशाल शक्ति-भंडार का लोकोत्तर या कारण क्षेत्र हैं। यदि अचेतन की शक्ति के समक्ष अवचेतन की मध्यवर्त्ती दीवार न रहे, तो वह शक्ति चेतन क्षेत्र में वेगपूर्वक आकर उसे ऐसे मनोभावों की बाढ़ में डुबा देगी कि हम उनको सम्हाल भी नहीं सकेंगे। इस अवचेतन में हमारे अस्तित्व का आदि रूप है, अपार ऊर्जा एवं शक्तियाँ हैं, जिन्होंने हमारे जीवन की अधिकांश मूल प्रेरणाओं और मूल प्रवृत्तियों का रूप ग्रहण किया है। उदाहरण के लिए, माता-पिता का मूल रूप सन्तान के अस्तित्व की गहराइयों में रहता है। इस जीवन में जब हममें अपने माता-पिता के प्रति कभी नकारात्मक विचार आते हैं, तो हमारे अपने मूल आदर्शों और वास्तविकता में द्वन्द्व छिड़ जाता है। इस द्वन्द्व को हम दमित भले ही कर लें, मन के अचेतन क्षेत्रों में उन्हें भले ही ढकेल दें, फिर भी ये हमारे जीवन को प्रभावित तो करते ही हैं। तथापि हम

उनके प्रति सजग नहीं रहते। ऊर्जा की इन्हीं जटिल पारस्परिक क्रियाओं के द्वारा विक्षिप्तता एवं मानसिक वेदना उत्पन्न होती है।

अचेतन शक्तियाँ आगे चलकर अवचेतन मन में प्रतिबिम्बित होती हैं, जिनका प्रतिबिम्ब हम शारीरिक कार्यों में देखते हैं। मन और मस्तिष्क का दसवाँ भाग ही स्वेच्छापूर्वक नियंत्रित होता है। शेष तो सुषुप्त है, अवचेतन है तथा हृदयगति, श्वसन, रक्तवाहिका नियमन आदि को नियंत्रित करता है। यदि आप रक्तचाप-नियंत्रण संरचना के असन्तुलन के प्रति पूर्वानुकूलित हैं, तो नकारात्मक ऊर्जा स्थूल शरीर के कमजोर स्थलों में अभिव्यक्त होगी एवं वर्द्धित परिसरीय अवरोध उत्पन्न करेगी।

उच्च रक्तचाप मन की गहराइयों में संचित संवेदी प्रभावों, विचारों, भय, हर्ष, स्मृतियों, भावों, ज्ञान, चिन्ताओं आदि का परिणाम है। यदि नकारात्मक पक्ष सकारात्मक से प्रबल हो जाय, तो उन्मुक्त ऊर्जा अवचेतन से उमड़ पड़ती है और अवचेतन मन द्वारा विनियमित मस्तिष्क क्षेत्रों को प्रभावित करती है। उच्च रक्तचाप के प्रति हमारे सजग होने के पूर्व यही होता है और शरीर में बीमारी की पूर्ण अभिव्यक्ति के पूर्व कुछ समय लेता है।

मन और जीवन पद्धति

मन उच्च रक्तचाप का मूल कारण है, क्योंकि यही हमारे व्यक्तित्व, भावनाओं, जीवन पद्धति और आदतों को नियंत्रित करता है। जीवन पद्धति के पक्ष, जैसे–धूम्रपान, वसा-बहुल भोजन, अनुवांशिकता और वार्द्धक्य सभी मन से प्रभावित हो जाते हैं, क्योंकि मन हमारे अस्तित्व का अधिक सूक्ष्म एवं शक्तिशाली पक्ष है। मन वस्तुनिष्ठ वास्तविकताओं की, हमारी आत्मनिष्ठ और वैयक्तिक व्याख्या प्रस्तुत करता है। मनुष्य जीवन का यही पक्ष विलक्षण है। मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जो अपनी इच्छा और क्षमता के अनुरूप अपने परिवेश का निर्माण कर लेता है। इस संदर्भ में वह अपने जीवन को भी बदल सकता है और उसके द्वारा अपने चतुर्दिक फैले जगत् को सकारात्मक या नकारात्मक ढंग से प्रभावित करता है। यदि प्रभाव सकारात्मक है, तो वह स्वस्थ रहता है, और जीवन को पूर्ण बनाता है। किन्तु यदि यह नकारात्मक हो जाय, तो वह स्वयं के लिए उच्च रक्तचाप से आक्रांत होने की सहायक स्थितियाँ भी उत्पन्न कर लेता है।

प्राण सम्बन्धी कारण

जब मन तनावग्रस्त हो जाता है, तो उस तनाव की शाखाएँ, प्रशाखाएँ सम्पूर्ण शरीर में फैल जाती हैं, तथा हमारे जीवन को अनेक स्थूल और सूक्ष्म स्तरों पर प्रभावित करती हैं। चूँकि मन स्थूल शरीर को प्राण-शरीर के माध्यम से प्रभावित करता है, अत: मानसिक तनाव से पहला परिवर्तन प्राण-शरीर में ही होता है। प्राणशरीर वह ऊर्जा कोश है, जो स्थूल कोश में अन्तर्व्याप्त होता है तथा उसे अनुप्राणित करता है। मन में उत्पन्न होने वाले विचार ऊर्जा से आविष्ट रहते हैं, जिसकी शक्ति शरीर पर प्रभाव डालती है। मानसिक ऊर्जा (चित्त) एवं शारीरिक ओज (प्राण) दोनों घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध हैं। जब हम एक चिन्ताग्रस्त मनुष्य को दस्त, तीव्र नाड़ी स्पन्दन या तीव्र श्वसन से अथवा एक उदास व्यक्ति को कब्ज से प्रभावित देखते हैं, तो ये उदाहरण स्पष्ट करते हैं कि विचारों द्वारा ऊर्जा का अनुप्रेषण स्थूल शरीर में होता है। इस प्रकार शरीर की ऊर्जा दिशानिर्देश हेतु मन पर निर्भर रहती है, पर जब मन ही समस्याग्रस्त हो, तो निम्न अंगों में ऊर्जा का समुचित निर्देशन कैसे हो पायेगा। यह प्राण-शरीर और स्थूल शरीर की संरचना को परिवर्तित कर देता है तथा जो क्षेत्र दुर्बल है वह इस असन्तुलन से अधिक कष्ट भोगता है। उच्च रक्तचाप के रोगी में रक्तवाहिका तन्त्र प्रभावित होता है।

प्राण शरीर

योग पाचन, श्वसन, उत्सर्जन, तन्त्रिका आवेगों के सम्प्रेषण, रक्त संचरण आदि अत्यावश्यक शारीरिक क्रियाओं के लिए प्राण को उत्तरदायी मानता है। अवस्थिति और कार्यों के अनुसार प्राण को पाँच विशेष रूपों में विभक्त किया गया है।

अपान विकारों को निष्कासित करता है एवं शक्ति उत्पन्न करता है। यह पृथ्वी तत्त्व से सम्बद्ध है, अत: इसकी गति नीचे की ओर है। यह नाभि प्रदेश

के नीचे काम करता है। अत: मल, वीर्य, गर्भाशय से भ्रूण एवं वृक्क से जल को बाहर निकालता है।

समान नाभि से ऊपर मध्यछद तक रहता है, तथा जल तत्त्व से सम्बन्धित है, पाचन प्रणाली में यह पाचक रस का स्राव करता है, तथा वृक्क, प्लीहा और मूत्र तन्त्र की सहायता करता है। हृदय, मस्तिष्क और शरीर के पोषण हेतु यह रक्त में आहार का वितरण करता है।

प्राण अग्नि तत्त्व से सम्बन्धित है तथा आहार और वायु से ओज प्राप्त करता है। यह सम्पूर्ण शरीर-ऊर्जा का अंश है, पर प्राण ही कहा जाता है। यह मध्यच्छद से मुख तक की ऊर्जा को नियंत्रित करता है। अधिकांश व्यक्ति जब प्राण की चर्चा करते हैं, तो उनका तात्पर्य सम्पूर्ण शरीर-ऊर्जा से होता है, पर वे उसे सम्पूर्ण प्राण के इस विशिष्ट अभिव्यक्ति से सम्बद्ध करते हैं। प्राण ऊर्ध्वगामी होता है, तथा ध्वनि उत्पादन, अमाशय में आहार के अभिसरण, पसीना उत्पादन, शरीर ताप का संधारण, रक्त का संचरण और ऑक्सीकरण करता है तथा क्षुधा और प्यास लगने में सहायक होता है।

उदान प्राण का वह पक्ष है, जो शरीर को खड़ी या बैठी हुई अवस्था में सन्तुलित रखता है और गिरने नहीं देता है। यह वमन को नियंत्रित करता है। यह वायु तत्त्व से सम्बद्ध है तथा ध्वनि उत्पादन और गायन में सहायता करता है। इसका क्षेत्र गले से लघु मस्तिष्क तक है।

व्यान पूरे शरीर में व्याप्त रहता है तथा शरीर के कार्यों और पाँचों प्राणों को समन्वित करता है। यह संवेदी तंत्रिकाओं, हृदय के स्पन्दन रक्त संचरण तथा समस्त शरीर में फैली क्षमताओं, यथा– रक्त, तंत्रिका और लसिका को सहायता देता है। प्राण के लघु विभाजन में यह आँखों, मुँह, नाक और पलकों में तथा जँभाई लेने, छींकने, डकार लेने और हिचकी आदि क्रियाओं में कार्य करता है।

प्राणमय कोश या प्राण-शरीर के ये पाँच परस्पर सम्बन्धित और आश्रित पक्ष हैं। किसी एक में असन्तुलन होने से, विशेष रूप से व्यान या समान में, शरीर को विशेष रूप से उच्च रक्तचाप तथा रक्तसंचरण तन्त्र और तन्त्रिका-संचरण तन्त्र के असन्तुलन के प्रति विशेष प्रवण बना देता है।

नाड़ियाँ

प्राण और चित्त नाड़ी कहे जाने वाले प्रवाह पथों के जाल में भ्रमण करते हैं। शरीर में 72000 नाड़ियाँ या ऊर्जा पथ हैं। ये नाड़ियाँ रक्तवाहिकाओं के सदृश

ही व्यवस्थित हैं। इनकी तीन प्रमुख वाहिकायें हैं– इड़ा (मानसिक वाहिका), पिंगला (प्राण वाहिका) और सुषुम्ना (अध्यात्म वाहिका)। नाड़ियों की शाखायें तथा उसकी सूक्ष्म से सूक्ष्मतर होती प्रशाखायें शरीर की प्रत्येक कोशिका में पहुँचती हैं। स्थूल शरीर की प्रत्येक कोशिका, ऊतक और अंग में ये नाड़ियाँ एक ओजस्वी आन्तरिक संरचना बनाती हैं। इन नाड़ियों में कोई भी अवरोध या विकार रोग उत्पन्न करता है। ये अवरोध उत्तेजित चिन्तन या तनावपूर्ण जीवन पद्धति के कारण उत्पन्न होते हैं।

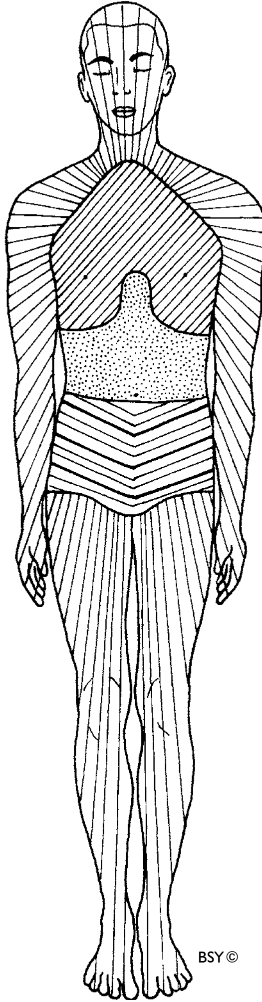
प्राण-शरीर अपने नाड़ी-जाल के माध्यम से रक्तवाहिकाओं के फैलाव के लिए ढाँचे का कार्य करता है। उच्च रक्तचाप में यही ढाँचा धीरे-धीरे दुर्बल हो जाता है और ऐसी विशेषतायें प्राप्त कर लेता है, जो रक्त वाहिकाओं को संकीर्ण कर देती हैं। ऐसा मन के असन्तुलन के कारण होता है। मन का यह असन्तुलन मस्तिष्क और हाइपोथैलमस के माध्यम से अत्यधिक अनुकम्पी क्रियाशीलन और वर्द्धित परिसरीय-प्रतिरोध उत्पन्न करता है।

स्थूल स्तर पर धमनियाँ, जो रक्त-संचरण-तन्त्र की गत्यात्मक घटक हैं, पिंगला नाड़ी को प्रस्तुत करती है। शिरायें, जो निष्क्रिय ग्राही घटक हैं, इड़ा को प्रतिबिम्बित करती है। सुषुम्ना नाड़ी, जो मेरुदण्ड के मध्य में स्थित है, वह विशाल रक्तकोशिका जाल के रूप में प्रतिबिम्बित होती है, जिसका विस्तार सम्पूर्ण शरीर में है।

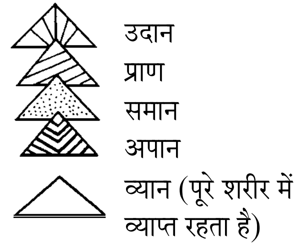
नाड़ियों में असन्तुलन के फलस्वरूप जब पिंगला प्रबल हो जाती है तब उच्च रक्तचाप उत्पन्न होता है। पिंगला उष्मा, लाल रंग, बहिर्मुखता और गत्यात्मकता से सम्बद्ध है। उच्च रक्तचाप पिंगला नाड़ी से सम्बन्धित है, क्योंकि धमनी-वृक्ष, जिसकी शाखाएँ संपूर्ण शरीर में व्याप्त होती हैं, अधिक गत्यात्मक प्रकृति की है। इसमें प्रवाहित होने वाले रक्त का रंग ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा के कारण लाल है।

यह रोग बहिर्मुखता, महत्त्वाकांक्षा तथा जीवन की दौड़ में सबसे आगे बढ़ने की इच्छा के कारण भी होता है। मन की यह प्रवृत्ति होती है कि मनुष्य अपने आन्तरिक पक्ष की अपेक्षा इन्द्रिय पक्ष की ओर अधिक प्रवृत्त होता है। मानव अस्तित्व के इन्द्रिय पक्ष में कोई दोष नहीं है, किन्तु उसे आन्तरिक दृष्टि से भी सन्तुलन में रहना चाहिए। इस प्रकार मध्यम मार्ग अर्थात् सुषुम्ना मार्ग अपनाकर इन सभी में सन्तुलन प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है।

जब पिंगला प्रबल होती है, तो अनुकम्पी तन्त्रिका-तन्त्र अत्यधिक क्रियाशील हो जाता है, जिसके कारण उच्च रक्तचाप तथा तनाव से



प्राणिक शरीर



सम्बन्धित अन्य रोग उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार प्राणतन्त्र शरीर और मन में प्रतिबिम्बित होता है।

आपको अपने प्राण शरीर के प्रति अधिक सजग रहना चाहिए, जिससे स्थूल शरीर सही परिप्रेक्ष्य में देखा जा सके। सजगता योग से प्राप्त होती है और वह अपने आप में एक उपचारात्मक घटक है, क्योंकि जब सजगता आती है तब व्यक्ति अनायास ही अपनी चिन्तन प्रक्रिया और जीवन पद्धति को समंजित

कर लेता है। अब स्वास्थ्य को तो सुधरना ही है। उच्च रक्तचाप को आपने किस प्रकार आमंत्रित किया है, इस जानकारी से ही यह समंजन भी प्राप्त होता है। निष्कर्ष यह है कि आपका आरोग्य आपके ही हाथों में है। यही आत्मोपचार है। आप समझ गये होंगे कि यह स्थूल शरीर तो मात्र एक अंश है। अत: सम्पूर्ण को जानने के लिए अपने शरीर की सावधानी से देखभाल करनी चाहिए। जितनी सावधानी से अपने कार या अपने किसी अन्य यंत्र की देखभाल करते हैं, उससे थोड़ी अधिक ही मात्रा में इसकी देखभाल होनी चाहिए।

नाड़ियों का पुनर्सन्तुलन

आसन, प्राणायाम और ध्यान के योजनाबद्ध अभ्यास द्वारा योग नाड़ियों को पुनर्व्यवस्थित करता है। प्राणशक्ति और चित्तशक्ति का विकास कर, ये सभी अभ्यास मन और शरीर, इड़ा और पिंगला को प्रभावित करते हैं।

आसन नाड़ियों को तानते हैं, खोलते हैं, तथा प्राण का अबाध प्रवाह सुनिश्चित करते हैं। प्राणायाम प्राण का संचार करता है, शरीर के विकारों को शुद्ध करता है, तथा ऊतक और मस्तिष्क में जीवन शक्ति का संचार करता है।

शरीर और मन में सुषुप्त क्षमतायें और शक्तियाँ हैं, जो ऊर्जा आपूर्ति के अभाव में काम करने में असमर्थ हो जाती हैं। जिस प्रकार कोई विद्युतीय उपकरण केवल तभी तक कार्य कर सकता है, जबतक बिजली की आपूर्ति होती रहती है, उसी प्रकार शरीर में पहले निष्क्रिय पड़े चक्र क्रियाशील बनते हैं। ध्यान के अभ्यास से चित्त शुद्धि और ज्ञान का परिष्कार होता है।

सम्पूर्ण योग-साधना पुनर्सन्तुलन की एक प्रक्रिया है, परन्तु यह तभी संभव है जब शारीरिक ऊर्जा या जीवनी-शक्ति विद्यमान हो। यदि जीवनी शक्ति है पर सजगता नहीं है, तो प्राण निरर्थक और उपेक्षित हो जाता है। अतएव समन्वय, सन्तुलन, वास्तविक विश्रांति तथा प्रफुल्ल स्वास्थ्य (पिंगला) एवं आनन्दानुभूति (इड़ा) की प्राप्ति हेतु प्राण और चित्त, दोनों का विद्यमान रहना आवश्यक है। तभी उच्च रक्तचाप पानी के बुलबुले के सदृश छूते ही समाप्त हो जायेगा।

जब शरीर एवं मन की शक्तियाँ परिशुद्ध एवं शक्तिशाली होकर सन्तुलित लय में रहती हैं तभी सुषुम्ना नाड़ी और शान्ति, ज्ञान एवं आलोक से परिपूर्ण आध्यात्मिक चेतना का सक्रिय स्वरूप प्रस्फुटित होते हैं और हमारे अस्तित्व में एक नया अति सजग ऐक्य प्रदायी आयाम जोड़ देते हैं।

तनाव और व्यक्तित्व

इसमें संदेह नहीं है कि कुछ रोगों की उत्पत्ति में हमारे व्यक्तित्व की महत्त्वपूर्ण भूमिका है, क्योंकि तनावों का सामना करने की हमारी क्षमता का निर्धारण हमारे व्यक्तित्व से होता है। बाह्य या आन्तरिक परिस्थितियों के प्रति यह व्यक्तिनिष्ठ प्रतिक्रिया है। कोई भी परिस्थिति चाहे उसका उद्देश्य विश्रान्ति ही क्यों न हो, तनाव उत्पन्न कर सकती है, जैसे– तैरना या खेलना। सभी कुछ हमारे व्यक्तिगत दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। हम कैसी प्रतिक्रिया व्यक्त करेंगे, यह हमारे अतीत के अनुभवों और हमारे व्यक्तित्व के स्वरूप द्वारा निश्चित होता है।

अन्त:स्रावी तन्त्र और तन्त्रिका तन्त्र मस्तिष्क और मन से सीधे सम्बद्ध हैं और वे उससे प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। दोनों ही व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं, जो हमारे अतीत के अनुभवों पर निर्मित होता है। हमारा व्यक्तित्व हमारे व्यवहार को सुनिश्चित करता है तथा आदतें निर्मित करता है। ये हमें कर्म और विचारों की अनन्त भूल-भूलैया में डाल देती हैं। आप अपने मस्तिष्क की संरचना, व्यक्तित्व और आदतों में परिवर्तन लाकर इस परिस्थिति को उपयोगी दिशा में मोड़ सकते हैं। इस प्रकार आप स्वयं को अतीत की स्मृतियों और भविष्य की चिन्ताओं से मुक्त कर अबाधित जीवनानुभूति प्राप्त कर सकते हैं। यही है सहज स्वाभाविक रचनात्मकता।

चिकित्सा विज्ञान ने मनुष्यों को दो वर्गों में रखा, धैर्यवान (धीर) और अधैर्यवान (अधीर)। धीर व्यक्ति अधिक स्वतंत्र, अधिक प्रेरक-नियंत्रण वाले, शोर और इन्द्रिय-वंचन के प्रति अधिक सहिष्णु, उन्नत मानसिक स्वास्थ्य वाले तथा अनुकूलन के प्रति कम संवेदनशील होते हैं।

अधीर व्यक्तित्व वाले मनोदैहिक रोगों और मानसिक व्याधियों के प्रति अधिक प्रवण होते हैं। इस वर्ग के व्यक्ति व्यर्थ की अनुकूलन क्रियाओं में

अधिक ऊर्जा व्यय करते हैं तथा रचनात्मक क्रियाशीलनों या तनाव का सामना करने हेतु अत्यल्प ऊर्जा बचा पाते हैं।

अधीर व्यक्तियों के उच्च रक्तचाप ग्रस्त होने की अधिक संभावना रहती है। ऐसे व्यक्ति अस्थिर उच्च रक्तचाप से पीड़ित हो सकते हैं। जब वे अधिक तनाव में रहते हैं, तब उनका रक्तचाप उच्च रक्तचाप की सीमा तक बढ़ जाता है, परन्तु जैसे ही तनावपूर्ण परिस्थिति समाप्त होती है, वे सामान्य हो जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि उनका मन समस्वरित नहीं है, अत: इतना सशक्त नहीं है कि प्राण और स्वैच्छिक तन्त्रिका तन्त्र को नियंत्रित कर सके। इसी कारण किसी भी तनावपूर्ण स्थिति में वे असन्तुलित हो जाते हैं।

गेलहॉर्न और केली ने प्रमाणित किया है कि स्वैच्छिक तंत्रिका-तंत्र की अस्थिरता द्वारा वर्द्धित अनुकम्पी क्रियाशीलन के माध्यम से उच्च रक्तचाप उत्पन्न होता है।[4]

डेविड ऑरमे-जॉनसन ने, जो अमेरिका के टेक्सास विश्व विद्यालय में मनोवैज्ञानिक हैं, ध्यान के अभ्यासी व्यक्तियों में अनुकम्पी स्थिरता में सुधार और चिन्ता में कमी (फलस्वरूप तनाव के प्रति अधिक प्रतिरोधी शक्ति) को प्रदर्शित किया है।[5] वालेस एवं बेन्सन ने भी इस बात पर बल दिया है कि ध्यानाभ्यासियों का व्यक्तित्व अधिक सन्तुलित होता है और वे कम रोग प्रवण होते हैं।

अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियाँ और व्यक्तित्व

अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियाँ किस प्रकार उच्च रक्तचाप को प्रभावित करती हैं, इसे स्पष्ट करने के पहले यह आवश्यक है कि कुछ अन्य छोटी-छोटी मौलिक बातों को समझ लिया जाय। अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियाँ हार्मोन कहे जाने वाले रसायनों को सीधे रक्त में ही स्रावित कर देती हैं। ये उन बहिर्स्रावी ग्रन्थियों से सर्वथा भिन्न हैं, जो नलिकाओं के माध्यम से शरीर की ऊपरी सतह अर्थात् त्वचा, आंत आदि अंगों में ही रसायनों का स्त्राव करती हैं। हार्मोनों का चयापचय और शरीर के कुछ अंगों पर विशेष प्रभाव पड़ता है। सात मुख्य अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ हैं– पिट्युटरी (पीयूष ग्रन्थि), पीनियल, थायरायड (अवटुग्रन्थि), पैराथायरायड (परावटु ग्रन्थि), थाइमस (बाल्य ग्रन्थि), पैंक्रियाज (अग्नाशय), एड्रीनल (अधि-वृक्क ग्रन्थि) तथा गोनैड्स (यौन ग्रन्थि)। थायमस को अन्त:स्रावी ग्रन्थियों की कोटि में रखना विवादास्पद है, परन्तु समग्रता की दृष्टि से इसे भी इस कोटि में सम्मिलित किया जा रहा है।

अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ चिकित्सा जगत् का एक अत्यन्त रोचक विषय हैं, क्योंकि इनका मनुष्य के व्यक्तित्व एवं चरित्र से सीधा सम्बन्ध है तथा आध्यात्मिक केन्द्रों (चक्रों), जो हमारे अस्तित्व के उच्च स्तरों पर अवस्थित हैं, से भी इनका सम्बन्ध है।

सन्तुलित और स्वस्थ व्यक्तित्व के लिए अन्त:स्रावी ग्रन्थियों का स्वयं में और शेष शरीर के साथ सन्तुलन में रहना आवश्यक है। ऐसी धारणा है कि इनमें से अधिकांश ग्रन्थियाँ मुख्य ग्रन्थि पिट्युटरी के नियंत्रण में रहती हैं, तथापि इस क्षेत्र में नवीनतम शोधों के अनुसार पीनियल ग्रन्थि पिट्युटरी को भी नियंत्रित करती है। पिट्युटरी और पीनियल का मस्तिष्क से सीधा सम्बन्ध है। अत: शरीर के और भी अच्छे नियंत्रण एवं समन्वय हेतु एक अन्त:स्रावी-तन्त्रिका तन्त्र पारस्परिक क्रिया होती है। जब अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ सन्तुलन में नहीं रहतीं, तो रोग उत्पन्न होते हैं, क्योंकि उस समय शरीर एवं व्यक्तित्व दोनों ही प्रतिकूल ढंग से प्रभावित होते हैं। उच्च रक्तचाप सम्बन्धी रोगों में विशेष रूप से एड्रीनल और थायरायड ग्रन्थियों का असन्तुलन और इनके कारण तन्त्रिका तन्त्र का असन्तुलन अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

स्थूल स्तर पर अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ शरीर-स्रावों को नियंत्रित करती हैं, तथा रक्त में हार्मोन की सही मात्रा को सुनिश्चित करती हैं। एड्रीनलीन का मात्र एक अणु सम्पूर्ण शरीर को प्रभावित कर सकता है। ऐसा अनुमान है कि एक तालाब में यदि एक औंस (लगभग 30 ग्राम) एड्रीनलीन अच्छी तरह मिला दिया जाय और उस जल की सूई किसी को दे दी जाय तो शरीर में एड्रीनल ग्रन्थि से स्रावित एड्रीनलीन की जो प्रतिक्रिया होती है, ठीक वैसी ही प्रतिक्रिया उस व्यक्ति में होगी। स्थूल या अधिक सूक्ष्म शरीरों पर अत्यधिक प्रभाव के लिए इसकी थोड़ी मात्रा ही पर्याप्त है। अन्त:स्रावी ग्रन्थियों का थोड़ा भी असन्तुलन अत्यधिक स्राव उत्पन्न कर सकता है, विशेष रूप से जब शरीर बाह्य या आन्तरिक तनाव का सामना कर रहा हो। ऐसे समय इसकी भारी प्रतिक्रिया होती है।

हाल ही में ज्ञात हुआ है कि रक्त-मस्तिष्क-रोधिका द्वारा रक्त में उपस्थित कुछ रसायनों से मस्तिष्क की सुरक्षा की जाती है। यह अर्ध-पारगम्य झिल्ली सेमी पर्मियेबल मेम्ब्रेन है, जिसके आरपार कुछ विशेष प्रकार के अणु ही जा सकते हैं, यथा– ऑक्सीजन और ग्लूकोज (आहार)। यह माना जाता था कि मुख्य पीयूष ग्रन्थि इस रोधिका द्वारा सुरक्षित रहती है। हाल ही में यह ज्ञात

हुआ है कि यह अवरोध पीयूष ग्रन्थि के पास ही भंग होता है। इस ग्रन्थि के सामने का एक छोटा भाग रक्त प्रवाह के सीधे सम्पर्क में रहता है। जो भी रसायन, आहार, या पदार्थ हम रक्त में डालेंगे वह पीयूष ग्रन्थि को प्रभावित करेगा और इस प्रकार सम्पूर्ण अन्त:स्रावी तन्त्र प्रभावित होगा। इसका तात्पर्य हुआ कि जो औषधि उपचार हेतु दी जा रही है, वह अन्त:स्रावी सन्तुलन को प्रभावित न करे इस दृष्टि से रोगोपचार का पुनर्मूल्यांकन होना चाहिए।

अति सूक्ष्म स्तर पर सात मुख्य चक्र स्थूल शरीर के अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियों से मेल खाते हैं। इनका संस्थापित स्वरूप है; पिट्युटरी– सहस्रार, पीनियल– आज्ञा, थायरायड– विशुद्धि, थाइमस– अनाहत, एड्रीनल– मणिपुर, गोनैडस्– स्वाधिष्ठान, पेरीनियमपिण्ड– मूलाधार।

ये बिन्दु तन्त्रिका-जालिका (नर्व प्लेक्सस) की वे अवस्थितियाँ भी हैं, जो 'तन्त्रिका-हार्मोन-चक्र' संकुल का निर्माण करती हैं, और शरीर में इन्हीं बिन्दुओं पर ऊर्जा का प्रवाह होता है। आप ऐसे बिन्दुओं की कल्पना कर सकते हैं, जहाँ मानसिक, प्राणिक और स्थूल शरीरों को मानो सूई-धागे से एक साथ सी दिया गया है। यह मन और शरीर की ऊर्जाओं का मिलन बिन्दु है। मानसिक ऊर्जा प्राणिक ऊर्जा को शरीर में निर्देशित करती है। रोग के समय अव्यवस्थित मन और अस्तव्यस्त उलझा व्यक्तित्व ऊर्जा का प्रभावी, सन्तुलित, और सुसंगत रूप से निर्देशन नहीं कर सकता है। ऐसा व्यक्ति, जिसमें थायरायड से अधिक हार्मोन स्रावित हो रहा है, चिन्तित और उत्तेजित रहता है, तथा उसमें उच्च रक्तचाप की दिशा में मानसिक असन्तुलन के चिह्न प्रकट होते हैं। ऐसे व्यक्ति पर विचार करने से अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियों के स्तर पर होने वाले अप्रत्यक्ष प्रभाव को देखा जा सकता है। इसके विपरीत थायरायड की अल्प सक्रियता से सुस्ती, उदासी, नैराश्य एवं मानसिक क्षमताओं में ह्रास होता है।

मन का प्रत्येक असन्तुलन अन्त:स्त्रावी ग्रन्थियों में परिलक्षित होता है तथा इसकी विपरीत प्रक्रिया भी होती है। यह स्वयं में कोई रोग नहीं है, वरन् रोग उत्पन्न करता है। यह एक कारक घटक है। अधिकतर व्यक्तियों की तन्त्रिका-अन्त:स्रावी धुरी में थोड़ा हार्मोन असन्तुलन रहता है। यौन ग्रन्थि– स्वाधिष्ठान; पारस्परिक क्रिया जनित काम लिप्सा और एड्रीनल– मणिपुर; पारस्परिक क्रिया जनित असन्तुलन, अधिकार लिप्सा, प्रतिस्पर्धा और परोपेक्षा द्वारा यह सामाजिक स्तर पर प्रकट होता है, ये सब इसी असन्तुलन के प्रमाण

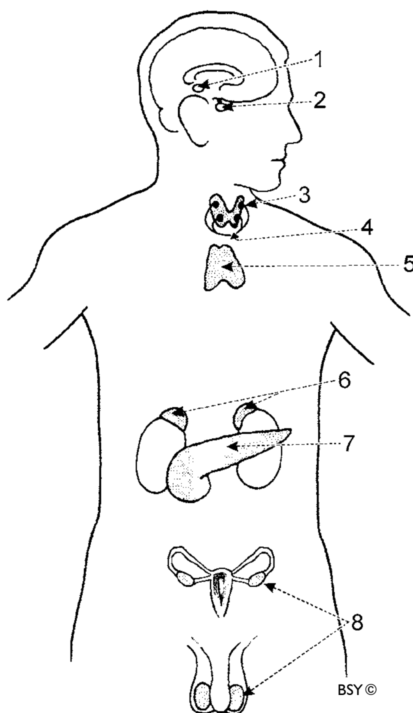
हैं। यह असन्तुलन पीयूष ग्रन्थि को प्रभावित करता है और उससे अन्य सभी अन्त:स्रावी ग्रन्थियों का आपसी तालमेल समाप्त हो जाता है, जिससे विस्वरता उत्पन्न होती है।

अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ और उच्च रक्तचाप

उच्च रक्तचाप दीर्घकालीन तन्त्रिका, हार्मोन और प्राणिक असन्तुलन का परिणाम है, जो एड्रीनल ग्रन्थि को अधिक मात्रा में एड्रीनलीन और नारएड्रीनलीन स्रावित करने हेतु उत्प्रेरित करता है। एड्रीनलीन श्वसन गति, हृदय गति एवं रक्तचाप को तीव्र करता है, रक्त को पाचन तन्त्र के स्थान पर मस्तिष्क, पेशियों और हृदय की ओर निर्दिष्ट करता है, यकृत से शर्करा मुक्त करता है, प्लीहा को संकुचित करता है एवं अधिक रक्त कोशिकायें मुक्त करता है। रोंगटे खड़े हो जाते हैं, आँखों की पुतलियाँ अधिक प्रकाश ग्रहण करने हेतु फैल जाती हैं। शरीर तनाव का सामना करने या पलायन करने हेतु तैयार हो जाता है। यही प्रहार या पलायन प्रक्रिया है। नारएड्रीनलीन केवल रक्तचाप को बढ़ाने वाला प्रतीत होता है।

डेनियल फंकेस्टीन ने उच्च रक्तचाप में इन दोनों हार्मोनों की भूमिका का अध्ययन किया है।[6] उसने पाया कि जो मनुष्य अपने आन्तरिक क्रोध को विषाद के रूप में प्रकट करते हैं, ऐसे उच्च रक्तचाप ग्रस्त व्यक्तियों में एड्रीनलीन का स्राव अत्यधिक होता है, परन्तु जो अपना क्रोध निस्संकोच प्रकट करते हैं, उनमें नारएड्रीनलीन प्रबल रहता है। यह भी पाया गया है कि सिंह या बाघ जैसे आक्रामक पशुओं में नारएड्रीनलीन का स्तर अधिक ऊँचा रहता है, परन्तु खरगोश जैसे भीरु पशुओं में एड्रीनलीन का स्तर अधिक ऊँचा रहता है।

अत: तंत्रिका-अन्त:स्रावी धुरी का अत्यधिक असन्तुलन ही उच्च रक्तचाप की उत्पत्ति हेतु शरीर की भूमि में उर्वरक का काम करता है। स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के पदार्थ विज्ञान के प्रोफेसर विलियम ए. टिलर (पी.एच. डी.) ने रोगोत्पादक प्रक्रिया की एक व्याख्या प्रस्तुत की है।[7] उनके मतानुसार, अन्त:स्रावी-चक्र युग्म एक ट्रान्सड्युसर है, जो ऊर्जा को शरीर में प्रवेश करने देता है, जिससे हम ब्रह्माण्डीय ऊर्जा प्राप्त कर अपने अन्य पक्षों से सम्पर्क कर सकें। दोनों व्यवस्थाओं में जब साम्य रहता है, तो ऊर्जा की उपलब्धि सुसंगत एवं समकालिक होती है। यदि हम शरीर की तुलना



अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियाँ

1. पीनियल
2. पिट्यूटरी
3. थायरॉइड
4. पैराथायरॉइड
5. थाइमस
6. पैन्क्रियाज
7. एड्रीनल
8. गोनैड

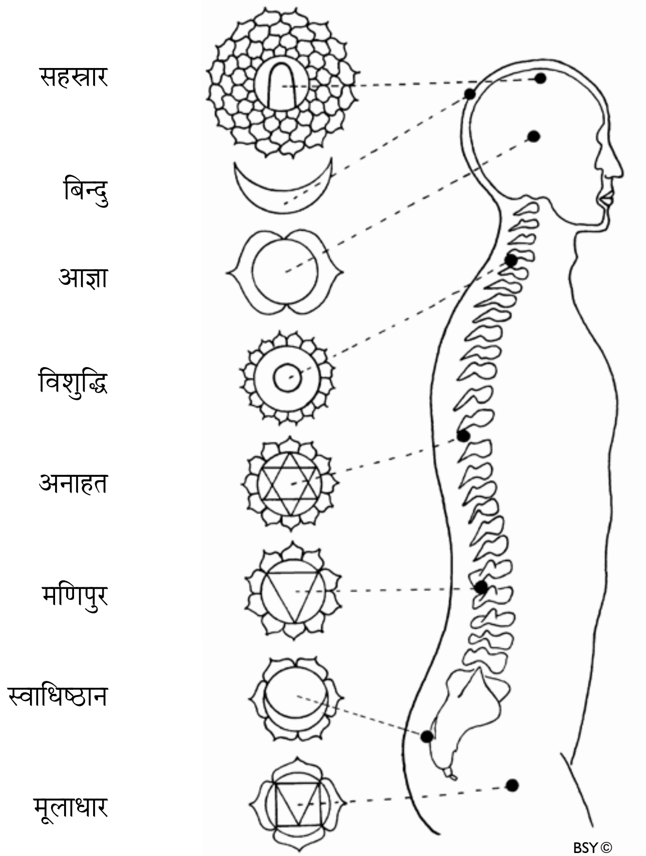
अन्य ऊर्जा तन्त्रों से करें तो यह और अच्छी तरह स्पष्ट होगा। उदाहरणार्थ– एक 10 वाट के बल्ब में रोशनी तो पर्याप्त रहती है, पर उसकी प्रदीप्ति अत्यल्प होती है। इसका कारण है कि प्रकाश तरंगें परस्पर विकलित रहती हैं, जिसके कारण क्षयात्मक हस्तक्षेप उत्पन्न होता है। इसी कारण प्राप्त ऊर्जा से बल्ब 90% ताप और मात्र 10% प्रकाश दे रहा है। यदि हम उसी ऊर्जा को समकालित कर दें, तो, जैसा प्रकाश लेसर किरण में होता है, हमें वैसी ही रचनात्मक हस्तक्षेप, चमक, शक्ति और दीप्ति प्राप्त होगी। वही प्रकाश ऊर्जा, जो कमरे में 10 वाट के बल्ब में नष्ट हो रही थी, एक लेसर के द्वारा एक अति सीमित सतह पर एकाग्र एवं संकेन्द्रित कर दी जाये, तो जितनी ऊर्जा-तीव्रता सूर्य की सतह पर होती है, उससे काफी अधिक ऊर्जा उस अति सीमित सतह पर उत्पन्न हो जायेगी।

उच्च रक्तचाप ग्रस्त व्यक्ति की स्थिति क्षयात्मक हस्तक्षेप से वर्णित हो सकती है, जबकि रचनात्मक हस्तक्षेप आदर्श स्थिति है। वास्तव में अधिकतर

व्यक्ति इन दो अतियों के बीच कहीं-न-कहीं रहते हैं, जो रोग की अवस्था में क्षयात्मक दिशा में बढ़ने लगते हैं। रचनात्मक हस्तक्षेप योगी की स्थिति का वर्णन करता है, जिसने शरीर, भावना और मन पर विजय प्राप्त कर ली हो और जो अपनी ऊर्जा को अपने चक्रों में केन्द्रित कर सकता हो। वह ब्रह्माण्डीय अक्षय स्रोत से चक्रों में अधिकाधिक ऊर्जा का संकेन्द्रण कर सकता है। इस यौगिक नियंत्रण के अभाव में लोग अल्प ऊर्जा स्तर पर कार्य करते हैं। उनके चक्र, जो अतीन्द्रिय ऊर्जा के भँवर हैं, अनियमित रूप से घूर्णन करते रहते हैं, जिससे कुछ जाग्रत और कुछ सुप्त रह जाते हैं। ऐसा इस कारण होता है कि उनमें प्रवाहित ऊर्जा को अशुद्ध वाहिकाओं से होकर जाना पड़ता है, जो पूर्णतया या अंशतया अवरुद्ध रहती हैं। पानी पहुँचाने वाले सिंचाई के पाइप में यदि अवरोध हो जाय, तो उचित मात्रा में जल नहीं मिलने से खेत को समुचित पोषण प्राप्त नहीं होगा। जब यही अनिश्चित तरीका दीर्घकाल तक चलता रहता है, तो रोग उत्पन्न होते हैं। चक्रों में तथा उन्हें ऊर्जा आपूर्ति करने वाली वाहिकाओं में ऊर्जा प्रवाह अवरुद्ध हो जाय, तो स्थूल एवं प्राणिक शरीर में विकार जमा होने लगेंगे।

चक्र शब्द का अर्थ है पहिया। चलती हुई कार के पहिये के सदृश ही चक्र ऊर्जा के गोल घूमते हुए भँवर हैं। पहिया असंरेखित हो जाय या उसकी केन्द्रीय धुरी खिसक जाय, तो असन्तुलन उत्पन्न हो जायेगा और पहिया वृत में नहीं, वरन् दीर्घवृत में घूमेगा। गाड़ी की गति बढ़ने पर यह असन्तुलन स्पष्ट मालूम पड़ेगा, पूरी गाड़ी थरथराने और खड़खड़ाने लगेगी। फिर तो एक स्थिति ऐसी आ जायेगी कि पूरी गाड़ी तेज गति की इस क्षयात्मक थरथराहट को सम्हाल ही नहीं पायेगी। उसी प्रकार चक्र-अन्तःस्रावी युग्म में यह थरथराहट और खड़खड़ाहट होती है। धीमी गति में तो यह उपद्रव मन्द रहता है, पर तीव्र गति में ऊर्जा अनियंत्रित हो जाती है तथा रोग को शीघ्र आमंत्रित कर लेती है। हम इस प्रभाव को अपने पूरे अस्तित्व में तब अनुभव करते हैं, जब यह मन, शरीर और सम्पूर्ण व्यक्तित्व में स्पन्दित होने लगती है। हम अपने व्यक्तित्व के द्वारा, जो हमारे अन्दर में चल रही सभी प्रक्रियाओं का योगफल है, इन नकारात्मक स्पन्दनों को बाह्य संसार में संप्रेषित करते हैं।

अधिकतर व्यक्ति इन प्रभावों के प्रति सजग नहीं रहते, परन्तु इसके परिणाम को क्रोध के आवेग, उदासी या किसी अन्य भावना के रूप में अनुभव करते हैं, जिसे वे सम्हाल नहीं पाते। व्यक्तित्व कुंठित हो जाता है और अन्तः



चक्रों के स्थान

एवं बाह्य जगत के मध्य असामंजस्य का दुष्चक्र उत्पन्न कर देता है। यह दुष्चक्र ऊर्जा का क्षय कर हमें क्लान्त कर देता है। फिर इस तनाव से रक्तपरिसंचरण तन्त्र में उच्च रक्तचाप उत्पन्न हो जाता है।

व्यक्तित्व तो मन का प्रतिबिम्ब है। यह चेतन मन में उभरने वाली अचेतन शक्तियों, अवचेतन संवेगों, सकारात्मक एवं नकारात्मक कुंठाओं को ही प्रतिबिम्बित करता है। ऊर्जा अभिव्यक्त होने के लिए मन से शरीर में परासंवेदी स्तर पर संप्रेषित तथा परिचालित होती है। मन व्यक्तित्व का निर्माण करता है तथा व्यक्तित्व स्थूल कर्म का। यह उच्च रक्तचाप के बहुआयामी कारणों का एक कारक है।

जीवन पद्धति

संसार में हमारी जीवन पद्धति का आधार है मन। मन से विचार आते हैं और विचारों से कर्म उत्पन्न होते हैं। ये कर्म ही हमारी दैनन्दिन आदतों के निर्माता हैं। पुन: ये आदतें हमारे अस्तित्व की संरचना तैयार करती हैं, इसी ढाँचे के अन्तर्गत हम अहर्निश क्रियाशील रहते हैं। आदतें, इच्छायें और महत्त्वाकांक्षायें जीवन के मूलभूत स्वरूप को किंचित रूपान्तरित करती रहती हैं तथा हम सभी के लिए अपना-अपना अलग संसार निर्मित कर देती हैं। यही संसार सुनिश्चित करता है कि हमारी उपलब्धियाँ क्या होंगी, हम स्वस्थ रहेंगे या रुग्ण।

ऋषिकेश के पूज्य स्वामी शिवानन्द जी ने इस पूरी प्रक्रिया को निम्नांकित पंक्तियों में लिपिबद्ध किया है–

एक विचार का बीज डालो, तो कर्म की फसल लो,
एक कर्म का बीज डालो, तो आदतों को जन्म दो,
एक आदत का बीज डालो, तो चरित्र की फसल लो,
एक चरित्र का बीज डालो, और नियति की फसल काटो ।

आज की जीवन पद्धति वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित नहीं है। यह टेलीविजन और सिनेमा देखने या समाचार पत्र पढ़ने जैसे दृश्य मनोरंजनों की बाढ़ से ही परिलक्षित होता है। आधुनिक जीवन पद्धति का हमारे चतुर्दिक फैले जगत् से तालमेल नहीं है। अत: नियति की जो फसल हम काटते हैं, वह पीड़ाओं की जननी है।

आहार और निद्रा के कार्यक्रम कृष्ण पक्ष या शुक्ल पक्ष के दिनों से, मौसम, तापमान, जलवायु, आदि से तालमेल कर नहीं बनाये जाते। मनुष्य

अधिक खाते हैं, अधिक सोते हैं। औसत रूप से आधुनिक आहार और निद्रा का स्वरूप गुण और परिणाम, दोनों में अस्वास्थ्यकर है। अधिक निद्रा के बाद भी हम थके रहते हैं। प्रात:काल बिस्तर छोड़ने में असमर्थता का अनुभव करते हैं, तथा अधिक भोजन के फलस्वरूप हम भारीपन और बेचैनी का अनुभव करते हैं। इस प्रकार हमारे अस्तित्व के स्थूल पक्षों की ही वृद्धि होती है। फिर कुछ ही दिनों में ये हमें खराब स्वास्थ्य और उच्च रक्तचाप के प्रति अधिक प्रवण बना देते हैं।

इस असामंजस्य का एक उदाहरण तब सामने आता है, जब हम अधिक तनावपूर्ण और भागदौड़ वाली जीवन पद्धति में रहते हैं। ऐसी जीवन पद्धति में आपके पास ठीक से श्वास लेने का भी अवकाश नहीं होता। श्वसन-चक्र शेष शरीर से समस्वरित नहीं रहता। इस प्रकार हम अधिक ऑक्सीजन अन्दर ले लेते हैं, पर श्वसन इतना तेज रहता है कि वायु की ऑक्सीजन पूर्णतया रक्त में स्थानान्तरित नहीं हो पाती या फिर हम इतनी गहरी श्वास नहीं लेते कि पर्याप्त ऑक्सीजन भीतर जा सके। उथली श्वसन-क्रिया मानसिक तनाव को प्रकट करती है, फिर उससे दीर्घकालिक सुस्ती आती है, और प्राणशक्ति की कमी होती जाती है।

जब दोषपूर्ण श्वसन प्रक्रिया दीर्घकाल तक चलती है, तो हम मानसिक-शारीरिक तनावों के बढ़ते जाने की भूमिका तैयार कर देते हैं, और वही तनाव स्थायी रूप से उच्च रक्तचाप का रूप ले लेता है। रोगात्मक रूप से बढ़ा हुआ रक्तचाप हमारी जीवन पद्धति का प्रतिबिम्ब है, जहाँ हम अपने शरीर, श्वसन-क्रिया और मन के प्रति चैतन्य नहीं रहते हैं और न ही इस अज्ञान के परिणामों के प्रति सजग रहते हैं। दोषपूर्ण श्वसन हमारी आदत-सी बन जाती है। ऐसी आदत को प्राणायाम के द्वारा तोड़ना अत्यावश्यक है।

अन्य उदाहरण उन पूरब-पश्चिम की हवाई यात्रा करने वालों का है, जो समयाभाव और अप्रीतिकर पुनर्समन्वय के दौर से गुजरते ही रहते हैं, जिसके फलस्वरूप उनके आन्तरिक लय और चक्र में असन्तुलन बना रहता है।

वान बौंट, गांगें एवं अन्यों ने पाया है कि हमारे मस्तिष्क में आँखों के अतिरिक्त अन्य किसी माध्यम से भी प्रकाश प्रवेश करता है और हार्मोन-चक्र को प्रभावित करता है।[8] ऐसा विश्वास है कि प्रकाश रजोस्राव-चक्र को प्रभावित कर सकता है। मनुष्य सौर और चन्द्र-चक्रों के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करता है, पर उनके चक्रों के आवर्त्तन के प्रति शायद ही कभी सजग रहता

है। उदाहरणस्वरूप, कोई नगरवासी व्यक्ति चन्द्रमा को महीनों तक न देखे और उसकी नियत किन्तु सूक्ष्म शक्तियों के प्रति अनभिज्ञ रहे, जिनको दैनिक जीवन की भागदौड़ में समझ पाना कठिन है, तो क्या होगा?

अधिकतर मानवीय आदतें सामान्यतया बाल्यकाल में मस्तिष्क और मन पर आरोपित, अनुबन्धित व्यवहार प्रतिमानों के परिणाम हैं। ये आदतें जीवनपर्यन्त अपरिवर्तित रह सकती हैं, परन्तु प्राय: परिवेश में परिवर्तनों के साथ धीरे-धीरे समायोजित हो जाती हैं।

आदतें हमें जीवन की विभिन्न स्थितियों में पूर्व निश्चित और निर्धारित ढंग से प्रतिक्रिया करने के लिए बाध्य करती हैं। जब हम कोई इच्छा पूर्ण कर लेते हैं, तो प्रसन्नता होती है, पर यदि इच्छा पूरी नहीं हुई, तो हम असन्तुष्ट हो जाते हैं एवं हमारे भीतर निराशा और कुण्ठा उत्पन्न हो जाती है। यही निराशा और कुण्ठा तनाव उत्पन्न करती हैं। उदाहरण के लिए, यदि हमें काम पर पहुँचने में विलम्ब हो जाय या मार्ग में यातायात की भीड़ में हम फँस जायें, तो हम तनावग्रस्त हो जाते हैं और भीड़ से बाहर निकलने के लिए बेचैन हो जाते हैं। हम नगर के मध्य में उस भीड़ में फँसे रहना नहीं चाहते। हम विश्रान्त नहीं हो पाते। हमने तो बेचैन और परेशान होने की ही शिक्षा पायी है, विश्रान्त होने की कला तो हमने सीखी ही नहीं है।

आन्तरिक तनाव के फलस्वरूप अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र सक्रिय हो जाता है। हमारा जीवन इस द्रुतगामी, प्रदूषित और तनावों से बोझिल समाज में इतना कुण्ठित रहता है कि आन्तरिक तनाव बढ़ जाता है। उच्च रक्तचाप के योगोपचार पर शोध करने वाले श्री के. एस. गोपाल कहते हैं– 'मानव के परिवेश और जीवन की परिस्थितियों में महान परिवर्तन आ गया है। इस पर विश्वास करने के लिए पर्याप्त कारण हैं कि इन बदलते परिवेशों में उच्च रक्तचाप एवं अन्य समान रूप से गम्भीर रोगों के प्रसार हेतु अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र का निरन्तर उद्दीपन बहुत अधिक सीमा तक उत्तरदायी है।'[9]

एक तनावपूर्ण जीवन पद्धति हमारे अस्तित्व के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती है। निम्नांकित आँकड़ों से हम यह अनुमान लगा सकते हैं–

- अमेरिका के एक तिहाई पुरुषों को उच्च रक्तचाप है।
- अमेरिका में 50% मृत्यु हृदय एवं रक्त परिसंचरण तन्त्र के रोगों से होती है।
- वर्ष 1970 में प्रशान्तकों की 5 अरब, बारबीट्यूरेट की 5 अरब और एम्पेटामाइन्स की 3 अरब खुराकें उत्पादित की गईं।

- उसी वर्ष डॉक्टरों ने इन औषधियों के 20 करोड़ नुस्खे लिखे। ये सभी आदतों का रूप ले लेने वाली चीजें हैं, अत: इनका नितान्त अपरिहार्य अवस्थाओं में ही उपयोग होना चाहिए।

इस विशाल अनुपात के सन्दर्भ में उपर्युक्त परिस्थितियाँ अति भयावह हैं, पर यह स्थिति उच्च प्रौद्योगिकी की दृष्टि से विकसित प्राय: सभी पश्चिमी राष्ट्रों की है। जब आप सोचते हैं कि जिस तनाव के निवारण के लिए इतनी अधिक मात्रा में प्रशान्तकों की आवश्यकता है, वह आधुनिक विज्ञान द्वारा दूर नहीं हो रहा है, वरन् बढ़ता ही जा रहा है, तो यह कितना भयावह लगता है।

औषधियाँ न केवल उच्च रक्तचाप और तनाव को दूर करने में असमर्थ हैं, वरन् शारीरिक लय के साथ छेड़छाड़ कर समस्या को और भी अधिक जटिल बना देती हैं। ये तनाव मुक्ति के साधन स्वप्नों को समाप्त कर हमारे निद्रा-प्रतिमान में अव्यवस्था उत्पन्न कर देते हैं। औषधियाँ केवल बाह्य लक्षणों को दूर करती हैं। रोग के समूल विनाश हेतु ध्यान की आवश्यकता है, क्योंकि ध्यान सीधे मन को प्रभावित करता है, जिसमें सभी मनोदैहिक रोगों तथा उच्च रक्तचाप के मूल कारण रहते हैं।

यदि आप उच्च रक्तचाप या किसी अन्य रोग या बेचैनी से ग्रस्त हैं, तब तो आप नकारात्मक आयोजनाओं से आक्रान्त हैं। आयोजन जीवनभर हमारे तन्त्रिका-मस्तिष्क परिपथों में होता रहा है। ठीक है, सकारात्मक परिपथ भी होते हैं, पर नकारात्मक और दु:खद परिपथ, जिनसे मानसिक एवं भावनात्मक पीड़ायें उत्पन्न होती हैं, वे सकारात्मक की अपेक्षा हमारे मन में अधिक प्रबल रहते हैं। फिर भी सजगता और अनुकूलन के यौगिक अभ्यासों के द्वारा इन परिस्थितियों में सुधार सम्भव है।

हमारी जीवन पद्धति में सजगता का अभाव ही उच्च रक्तचाप उत्पन्न करने वाली परिस्थितियाँ निर्मित करता है। अधिकतर व्यक्ति अपने अन्दर संचित तनावों से अनभिज्ञ रहते हैं, यद्यपि यह रहता सभी में है। इसका अर्थ है, सजगता का अभाव, जो पाँचों कोशों– शरीर, भावना, मन, चित्त और आत्मा तक रहता है। हम स्वयं के प्रति अचैतन्य हैं, और अज्ञान से स्वास्थ्य के लिए घातक आदतों का जन्म होता है। यदि हमें इन आदतों के माध्यम से अपने प्रति अपने ही द्वारा किये जा रहे अहित का वास्तविक ज्ञान हो जाय, तो हम उन्हें शीघ्र दूर कर देंगे। यह विवेक और क्रिया शक्ति, योग से प्राप्त ज्ञान एवं समझदारी से उत्पन्न होते हैं।

आनुवंशिकता और वार्द्धक्य

चिकित्सा विज्ञान द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि जिनके परिवार में उच्च रक्तचाप का इतिहास रहा है, उनके इस रोग से आक्रान्त होने की सम्भावना अधिक रहती है। इस उक्ति के दो घटक हैं– आनुवंशिकता और परिवेश। परिवेश का तात्पर्य है वह वातावरण, जिसमें हमारे माता-पिता ने या अन्य लोगों ने हमें पाला-पोसा है, तथा आगे चलकर हमारी जीवन पद्धति और अन्य मनुष्यों से हमारा पारस्परिक सम्बन्ध। आनुवंशिकता के द्वारा प्राप्त जन्मजात और मौलिक गुणों को ये संशोधित करते हैं। हमारे रहने का ढंग तथा अपने दुर्बल स्थलों को सुधारने और पुष्ट करने हेतु हम अपने जीवन में क्या परिवर्तन लाते हैं, ये सब कारक सुनिश्चित करते हैं कि हम किस प्रकार वृद्ध होंगे, हमारी धमनियाँ शीघ्रता से कठोर होंगी अथवा धीरे-धीरे या बिल्कुल ही कठोर नहीं होंगी, हमारा रक्तचाप असामान्य उच्च स्तर तक बढ़ जायेगा या स्वस्थ स्तर पर बना रहेगा।

आनुवंशिकता

जीन से गुणसूत्र (क्रोमोसोम) बनते हैं, जो हमारी आधारभूत शरीर संरचना और उसकी बनावट की रूपरेखा तैयार करते हैं। माता-पिता से प्राप्त जीन-समुच्चय हमारी व्यक्तिगत विशेषताओं, जैसे– ऊँचाई, केश का रंग आदि सुनिश्चित करते हैं। दुर्बलतायें भी वंशानुगत हो सकती हैं तथा इन्हीं दुर्बल बिन्दुओं पर शरीर में रोगों की अभिव्यक्ति होगी। शृंखला की कमजोर कड़ी ही पहले टूटेगी। आनुवंशिकता ही यह पूर्व निश्चय करती है कि ये दुर्बल बिन्दु कहाँ होंगे, पर इसका यह अर्थ नहीं है कि हम उस बिन्दु पर टूटेंगे ही। जेनेटिक संरचना केवल न्यूनतम प्रतिरोध वाली वाहिकाओं का निर्माण करती

है, जिसके माध्यम से शरीर-ऊर्जा निश्चित दिशा में प्रवाहित होगी, पर रोग इन दुर्बल बिन्दुओं पर होगा या नहीं, यह बहुत कुछ इस तथ्य पर निर्भर करता है कि अपने जन्मकाल से हम कैसे परिवेश में रखे जाते हैं, स्वास्थ्यप्रद या अस्वास्थ्यप्रद।

परिवेश हमारी आनुवंशिक प्रवृत्तियों को रूपान्तरित करते हैं। यदि हम सहायक परिवेश में रहते हैं, जो हमको स्वस्थ बना सकता है, मानसिक शक्ति और सन्तुलन प्रदान कर सकता है, तब हम अपने शरीर की त्रुटियों को दूर कर सकते हैं तथा उत्तम स्वास्थ्य के मार्ग की बाधाओं पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। दूसरी ओर यदि हम नकारात्मक परिवेश में रहते हैं, तो हम नकारात्मक चक्र में उलझ सकते हैं। ये हमारा शारीरिक और मानसिक क्षय कर सकते हैं तथा किसी वंशानुगत प्रवृत्ति को प्रबल और उच्च रक्तचाप की दिशा में प्रवृत्त कर सकते हैं।

मस्तिष्क का मन से सीधा सम्बन्ध है। ऊर्जा का प्रवाह मस्तिष्क में होता है तथा यह अरबों तन्त्रिका-परिपथों में प्रवहमान होती है, जिनका निर्धारण मुख्यत: आनुवंशिकता द्वारा ही होता है। परिवेश और आन्तरिक अनुभव इन परिपथों को रूपान्तरित करते हैं तथा मन एवं वंशानुगत प्रतिमानों को कार्यरत रखने हेतु इन्हें आवृत्त और सुव्यवस्थित करने वाले सूक्ष्म जाल का निर्माण करते हैं। इन मस्तिष्क परिपथों का जितना अधिक बार उपयोग होगा, ये उतने ही दृढ़ हो जायेंगे। यदि इन परिपथों का उपयोग नहीं होता है, तो ये अन्य परिपथों द्वारा दबते चले जायेंगे तथा अन्य परिपथों में प्रबलता आती जायेगी।

मस्तिष्क के तन्त्रिका परिपथ सतत् परिवर्तनशील हैं एवं परिवेश और जीवन पद्धति से प्रभावित होते हैं, यह तथ्य प्रयोगों द्वारा प्रमाणित हो चुका है। जब पशुओं को जन्मकाल से ही ऐसे परिवेश में रखा गया, जहाँ वे केवल ऊर्ध्वाधार डन्डों को ही देखते रहे और उसके पश्चात् उन्हें सामान्य वातावरण में रखा गया, तो वे केवल ऊर्ध्व खड़े डन्डों से अपना बचाव करने का प्रयास करते थे। उन्होंने चूँकि क्षैतिज छड़ों को देखा ही नहीं था, अत: वे क्षैतिज छड़ों से अपना बचाव नहीं कर पाते थे। पर बाद में जब दृष्टि प्रान्तस्था (विजुअल कॉरटेक्स) के क्षेत्र खुलने लगे, तो उनका मस्तिष्क नये परिवेश के अनुरूप विकसित हुआ।

तन्त्रिका पथों की संरचनाएँ अनुभवों से निर्मित होती हैं, तथा नये अनुभवों के अनुसार बदल सकती हैं। वस्तुत: जीवन के प्रथम कुछ वर्षों में ही मस्तिष्क

अपने अधिकांश परिपथों को विकसित कर लेता है, क्योंकि जन्म के समय तन्त्रिका-तन्त्र का मुख्य भाग निर्मित नहीं हुआ रहता एवं उसके लिए प्रशिक्षण आवश्यक है। जन्म काल में केवल कुछ नैसर्गिक प्रतिवर्त्त (इन्सटिंक्चुअल रिफ्लेक्स) ही विद्यमान रहते हैं। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च रक्तचाप में आनुवंशिकता की भूमिका गौण नहीं है, क्योंकि माता-पिता से सीखी चीजें और अनुभव हमारे आचरण के अधिक महत्त्वपूर्ण घटक होते हैं। यदि आपके माता-पिता उच्च रक्तचाप से पीड़ित हैं, तब आप उसी वातावरण में पलते हैं और अपने विचार एवं व्यवहार में वैसे ही प्रतिरूप विकसित कर लेते हैं।

मस्तिष्क का वंशानुगत प्रतिरूप ऐसा होता है कि कुछ व्यक्ति अपनी ऊर्जा को रक्तवाहिका तन्त्र में प्रवाहित कर लेते हैं, जिसके फलस्वरूप उच्च रक्तचाप होता है। यदि इस प्रवृत्ति को परिवेश और जीवन पद्धति से भी सहायता मिल जाय तब कालक्रम में रोग प्रकट हो ही जायेगा।

वार्द्धक्य

उम्र के बढ़ने के साथ-साथ धमनियों के कठोर होने एवं स्थायी रूप से रक्तचाप में वृद्धि की सम्भावना रहती है। ऐसा तभी होता है जब जीवन पद्धति और आत्म संयम का अभाव ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दे। आपने यदि अपने शरीर का ध्यान रखा है और मन को मजबूत, युवा और सावधान रखा है, तब इसकी पूर्ण सम्भावना है कि आपको उच्च रक्तचाप नहीं होगा और आपका जीवन स्वस्थ, विश्रान्त और शान्त होगा।

मन, प्राण, जीवन-पद्धति और आनुवंशिकता मिलकर निर्धारित करते हैं कि हम कितनी शीघ्रता से वृद्ध होंगे। यदि हमारा मन विश्रान्त और स्थिर है, संसार से प्रतिक्रिया करने में समर्थ है, तथा जीवन के तनावों को सम्हाल सकता है, तो हम धीरे-धीरे वृद्ध होंगे तथा स्वस्थ एवं युवा दिखेंगे। हम लोग कुछ ऐसे मनुष्यों को जानते हैं जो 60 वर्ष के होने पर भी 30-40 वर्ष के दिखते हैं। यदि हम मानसिक रूप से तनाव ग्रस्त हैं, तो हमारा शरीर भी तनावग्रस्त हो जाता है, पेशियाँ तन जाती हैं तथा रक्तवाहिकायें एवं अन्य ऊतक प्रतिकूल ढंग से प्रभावित हो जाते हैं। फिर ऊतकों का क्षय होता है और वार्द्धक्य की गति तीव्र हो जाती है। ऐसे भी मनुष्य हैं, जो 30 वर्षों के होकर भी 60 के दिखते हैं। ऐसी स्थिति में उनकी प्राण ऊर्जा ठीक काम नहीं करती, क्योंकि उसे कार्य सम्पादन हेतु अच्छा यन्त्र नहीं मिलता। प्राण ऊर्जा का प्रवाह मन्द होता है, चक्रों का

घूर्णन मन्द एवं अनियमित हो जाता है, वाहिकायें अवरुद्ध या विस्थापित हो जाती हैं। फलस्वरूप इनके कार्य में दोष उत्पन्न हो जाता है। वंशानुगत घटक मानसिक तनाव की प्रक्रिया को त्वरित कर देते हैं तथा क्षयकारी ऊर्जा को उच्च रक्तचाप की उत्पत्ति में लगा देते हैं। यह वृद्ध व्यक्तियों में बहुत सामान्य है।

आधुनिक समाज में उम्र के साथ रक्तचाप बढ़ने की प्रवृत्ति पायी जा रही है, यद्यपि उसका कारण अज्ञात है। इसका कारण सम्भवत: वार्द्धक्य के प्रभाव से सम्बद्ध है, जिसके कारण रक्तवाहिकायें कड़ी और अपेक्षाकृत कम लचीली हो जाती हैं। अत: उनके भीतर दाब बढ़ने लगता है। इस प्रक्रिया में ह्रास अन्तर्निहित है। यह योग की उस परिस्थिति के ठीक विपरीत है, जिसमें ऊतक वृद्ध तो होते हैं, पर उनका ह्रास नहीं होता। उल्टे वे शक्तिशाली होते जाते हैं। अधिकांशत: हमारी मृत्यु के पूर्व हमारे शरीर का क्षय होता है। आधुनिक शहरी जीवन पद्धति वार्द्धक्य प्रक्रिया को त्वरित कर देती है एवं उच्च रक्तचाप के समान क्षयात्मक रोगों के उत्पन्न होने की प्रवृत्ति को भी बढ़ा देती है।

समग्र दृश्य

जब गलत दिशोन्मुख अहंकार पर विजय प्राप्त हो जाय, तो समझो विक्षिप्तता समाप्त हो गई। विक्षिप्तता का उपचार नहीं होता, वरन् वह हमें ही स्वस्थ कर जाती है। मनुष्य बीमार है, परन्तु उसे स्वस्थ करने हेतु यह प्रकृति का एक प्रयास है। अत: अस्वस्थता से ही हम अपने स्वास्थ्य के सम्बन्ध में बहुत कुछ सीख सकते हैं। जो तन्त्रिका रोग या विक्षिप्तता व्यक्ति को नितान्त अस्वीकार्य प्रतीत होती है, उसमें शुद्ध स्वर्ण है, जिसे अन्यथा प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

–सी.जी. युंग

हमने उच्च रक्तचाप के कारणों को अनेक प्रकारों एवं उपखण्डों में विभक्त किया है। यह सब उन पथों का विवरण है, जिनसे होकर ऊर्जायें मन से शरीर में प्रवेश करती हैं, तथा पुन: हमारे चतुर्दिक फैले विश्व और ब्रह्माण्ड में यात्रा करती हैं। पुन: चक्रीय रूप में हम पर ही प्रतिबिम्बित होती हैं। वास्तविक वियोजन नहीं होता, सम्पूर्ण प्रक्रिया तो एकीकृत है। यदि योग के माध्यम से अपने व्यापक दृष्टिकोण से हम देखें, तो मन, भावनायें, शरीर, विश्व और ब्रह्माण्ड एक ही समग्र-संस्थान है। उच्च रक्तचाप अनेक कारकों का परिणाम है, पर ये सभी कारक हमारे अस्तित्व के मूल में स्थित एक अकाट्य तथ्य से निकले हैं। वह तथ्य है अविद्या, अज्ञान।

अविद्या सब रोगों की जननी है तथा विद्या सब का उपचार है। जब हम अस्वस्थ होते हैं, तो यह प्रकृति का संकेत है कि कहीं कुछ गलत है। यह हमें स्वयं को परिवर्तित करने की चेतावनी है। अपने अज्ञान के कारण हम अपने अन्दर में चलने वाली उस प्रक्रिया के प्रति चैतन्य नहीं रहते हैं, जिसके

कारण उच्च रक्तचाप का आगमन हुआ है। हमें कैसे रहना चाहिए तथा हम कैसे हैं इसका विकृत रूप ही हमें उपलब्ध है। सीखने के लिए कष्ट तो हमें उठाना ही है और जीवन की पीड़ाओं को सहन करना है। योग उस पीड़ा के दंश को निकाल देता है, जिससे हम प्रत्येक अच्छे या बुरे अनुभव के साथ विकसित होते हैं।

इस असीम ब्रह्माण्ड में हम एक जीवित और विकासशील प्राणी हैं। वास्तव में विकसित होने के लिए और वस्तुत: मानव बनने के लिए हमें अपनी जीवन-प्रक्रिया में से गुजरना पड़ता है। कुछ व्यक्ति मानसिक, भावनात्मक या आध्यात्मिक रूप से दु:ख भोगते हैं। कुछ उच्च रक्तचाप से आक्रान्त होते हैं, तो किसी को व्रण (अल्सर) हो जाता है। पृथ्वी पर यह सब हमारी शिक्षा है। अपने विषय में पूर्ण और समग्र ज्ञान हेतु हममें से कुछ व्यक्तियों को बीमार होना पड़ता है, यह एक विडम्बना ही है।

इसी परिप्रेक्ष्य में जब हम उच्च रक्तचाप पर विचार करते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका उपचार है। जब हम परिस्थिति का अध्ययन कर लेते हैं, तो हमको पता हो जाता है कि रोग आया कैसे है? तब हम अपने को, अपने जीवन को परिवर्तित कर सकते हैं। जब हम अपना पाठ समझ लेते हैं, तब उच्च रक्तचाप भी चला जाता है। उच्च रक्तचाप का वास्तविक कारण है– मन के विषय में, तन के विषय में और सम्पूर्ण मानव यान के विषय में हमारा अज्ञान। हम क्यों इस ग्रह पर आये हैं तथा जीने का सही ढंग क्या है?

सभी देशों और कालों में सभी महान् दर्शनों ने कहा है, 'अपने को जानो तथा अपनी आत्मा के प्रति सच्चे बनो।' यही योग का सार है और इसी विधि से योग ने उच्च रक्तचाप के कारणों को समझा है एवं उसके उपचार को जाना है।

उपचार

योगोपचार

यह उन्हें समर्पित है, जो तनाव से आक्रान्त हैं। उन्हें, जिन्होंने अपने सद्-असद् प्रयास में, शान्ति या संग्राम में चोट खाई हैं, रक्ततर्पण किया है, ताप, क्षुधा, थकान, वायु का अभाव, संक्रमण, विष या घातक किरणों की पराकाष्ठायें झेली हैं। उन्हें भी, जो अपने आदर्शों के, चाहे वे जो भी हों, पालन में परिक्लान्तिकारी स्नायविक तनाव में हैं। उन शहीदों को जिन्होंने दूसरों के लिए अपनी आहुति दे दी है, साथ ही उन्हें भी जो अपनी स्वार्थी महत्त्वाकांक्षाओं, भय, ईर्ष्या और सबसे निकृष्टतम घृणा के शिकार रहे हैं। मेरा तनाव आलोचना करने की प्रेरणा से नहीं, सहायता करने की प्रेरणा से उत्पन्न होता है। मैं जानता हूँ कि मैं अपने तनाव से न मुक्त होऊँगा और न मुझे मुक्त होना चाहिए, वरन् मुझे इसे केवल समझने का ज्ञान मिलना चाहिए।

– डॉ. हेन्स सेली

आसन, प्राणायाम और ध्यान के अभ्यास के साथ जीवन पद्धति के पूर्ण पुनर्मूल्यांकन के द्वारा उच्च रक्तचाप तथा उसके घातक प्रभावों को दूर करना ही योग का उद्देश्य है। अपने अस्तित्व का पुनर्मूल्यांकन और पुनर्रचना करते हुए, अव्यवस्था में व्यवस्था स्थापित करते हुए, आपको इसके द्वारा अपने जीवन के अर्थ का नया आयाम मिलता है, और आप अपने चतुर्दिक् फैले विश्व को नई दृष्टि से देखते हैं। इस प्रकार आप अपने मानसिक अस्वास्थ्य को दूर करते हैं, जो शारीरिक अस्वास्थ्य का मूल कारण है।

योग आपके मस्तिष्क में स्थित मूल कारणों का उन्मूलन कर शारीरिक प्रतिरोध, भावनात्मक लय और प्राण सन्तुलन के सृजन में सहायता प्रदान

करता है। आसन और प्राणायाम आत्मोपचार की प्रक्रिया में सहायक हैं। इस प्रकार आपको इस ज्ञान से सन्तोष मिलता है कि आप वह प्राप्त कर सकते हैं, जो कभी असम्भव प्रतीत होता था, अर्थात् उच्च रक्तचाप से रोगमुक्ति।

इस नव औद्योगिक युग को चिन्ताओं का युग भी कहते हैं। जीवन सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक कष्टों, चिन्ताओं, अस्पष्ट द्वन्द्वों, एकाकीपन, मोहभंग और शंका से पूर्ण है। दबाव और मनोवैज्ञानिक अशान्ति अब हमारे जीवन के स्थायी अंग बन गये हैं तथा विशेष रूप से समृद्ध राष्ट्र तीव्र तनाव के प्रभावों से पीड़ित होने के प्रति अधिक प्रवण हैं। इसका प्रमुख कारण है आन्तरिक आध्यात्मिक सत्य के प्रति अचैतन्यता, जो जीवन को अर्थ प्रदान करता है।

जब हमें जीवन के अर्थ की अनुभूति होती है, तब हम उच्च रक्तचाप का, इसके सूक्ष्मतम रूपों में उन्मूलन कर सकते हैं। जब हमारे जीवन में उसके अर्थ का प्रवेश होता है, हम विश्रान्त हो जाते हैं, क्योंकि तब हमें सन्तोष और पूर्णता की प्राप्ति होती है। प्रत्येक वस्तु चाहे वह कितनी भी छोटी क्यों न हो, महत्त्वपूर्ण हो जाती है और हमारे जीवन में उसका अपना विशिष्ट स्थान हो जाता है। अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र में और एड्रिनल अतिस्राव की उग्रता को कम करने में यह हमारे मानसिक और शारीरिक परिपथों में परिलक्षित होता है तथा अव्यवस्था में व्यवस्था लाता है। यह हमारी रक्तवाहिकाओं का अतिरिक्त परिसरी प्रतिरोध खत्म करता है तथा हमारे शरीर से दबाव के प्रभाव को भी दूर करता है।

निम्नांकित अभ्यास प्रस्तुत कर योग आपको उच्च रक्तचाप से रोगमुक्त होने में सहायता करता है–

1. *विश्रान्ति की विधियों* में असंवेदीकरण, आत्म सुझाव तथा अनुकूलन सम्मिलित हैं, जो मानसिक तनावों और मनोग्रन्थियों को हटाते हैं। ये अभ्यास आपके जीवन के प्रति एक सकारात्मक मानसिकता का सृजन करते हैं। फिर तो प्रत्येक अनुभव, यदि उसमें थोड़ी पीड़ा भी सम्मिलित हो, ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया बन जाता है। सजगता के द्वारा आप भ्रामक धारणाओं को अधिक यथार्थपूर्ण, व्यावहारिक और सकारात्मक जीवन दर्शन से प्रतिस्थापित कर लेते हैं।
2. *आसन और प्राणायाम* के अभ्यास मानव शरीर के शारीरिक, भावनात्मक, प्राणिक, मानसिक, आध्यात्मिक पक्षों को पुनर्सन्तुलित कर देते हैं।
3. *ध्यान* विश्रान्ति उत्पन्न करता है तथा आत्मज्ञान विकसित करता है। कदम-कदम पर मन को स्वच्छ, शुद्ध और पुनर्गठित करते हुए तथा हमें

'स्व' का अधिकाधिक ज्ञान देते हुए हमारी सजगता बाहरी तनाव और प्रभावों से मुक्त हो आन्तरिक दिशा में चल पड़ती है। प्रत्याहार और धारणा के बाद ध्यान की अवस्था आती है, जो अन्ततोगत्वा आत्मानुभूति में पूर्ण होती है।

चेतना को स्थूल शरीर से विच्छेदित कर एकाग्र किया जाता है, जिससे ध्यानावस्था उत्पन्न होती है। इस अवस्था में मस्तिष्क द्वारा अल्फा और थीटा तरंगें उत्पन्न होती हैं। ये गहन विश्रान्ति और स्वाभाविक रचनात्मकता की सूचना देती हैं। मस्तिष्क की क्रियाशीलता धीमी हो जाती है, जिससे शरीर और मन में पूर्ण विश्राम की स्थिति आती है। श्वास और हृदयस्पन्द भी कम हो जाते हैं, जबकि पूरा शरीर गहरे विश्राम का आनन्द उठाता है। इस अवस्था में रक्तवाहिकायें विस्फारित होती हैं तथा शरीर के अवयवों को नवजीवन देते हुए, क्षतिग्रस्त ऊतकों की मरम्मत करते हुए तथा स्वस्थ ऊतकों को सम्पोषित करते हुए ऑक्सीजन से समृद्ध शुद्ध रक्त सभी अवयवों और ऊतकों में पहुँचता है तथा लैक्टेट या अन्य जैव विष को अधिक दक्षतापूर्वक हटाता है। ओज बढ़ता है। मन और मस्तिष्क के परिपथों को अधिक लयात्मक रूप में एवं स्वयं को भी पुनरानुकूलित करने का अवसर मिलता है। यह परिसरीय तन्त्रिका तन्त्र के द्वारा पूरे शरीर को प्रभावित करता है।

4. *कुण्डलिनी क्रिया* शरीर में प्राणशक्ति को सक्रिय करने का शक्तिशाली साधन है, जिससे प्राण वाहिकायें और नाड़ियाँ आवेशित हो जायें एवं ऊर्जा प्रवाह को बाधित करने वाले अपद्रव्यों से शुद्ध हो जायें। यह अनुकम्पी और परानुकम्पी तन्त्रिका तन्त्रों को पुनर्सन्तुलित करती है तथा अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को पुनर्संघटित करती है। यह एड्रिनल ग्रन्थियों को उनकी समुचित स्थिति पर वापस लाती है, जिससे वे रक्तचाप बढ़ाने वाले हार्मोन का अत्यधिक मात्रा में स्राव न करें। इस प्रकार इन आंतरिक संरचनाओं पर सूक्ष्म नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है।

उपर्युक्त सभी योग क्रियायें उच्च रक्तचाप से रोगमुक्ति में निम्न रूपों में सहायता करती हैं–

- मानसिक तनाव कम कर।
- प्राण आपूर्ति को पुनर्व्यवस्थित और समृद्ध कर।
- तनाव के प्रभावों, जैसे– विषाक्त अपशिष्टों को निकाल कर।

- जीवन शैली को समायोजित कर, जिससे यह गलत आदतों, जैसे– धूम्रपान, अतिभोजन, अतिनिद्रा, असंयमी जीवन और अपर्याप्त व्यायाम, जिनके कारण उच्च रक्तचाप हुआ है, को दूर कर।
- समग्र मनोदैहिक संकुल को शक्तिशाली बनाकर, जिससे वंशानुगत और उपार्जित दुर्बलतायें समाप्त हो जाती हैं। वार्द्धक्य प्रक्रिया मन्द हो जाती है तथा ऊतक क्षय नहीं होता। ध्यान, प्राण के पुनर्निवेश और स्वस्थ जीवन पद्धति से ऊतकों का पुनरोत्पादन होने लगता है।

योग की जीवन पद्धति

ये अभ्यास अन्ततः योग की इस जीवन पद्धति में सम्मिलित हैं, जो युगों-युगों से योगियों की व्यावहारिक अनुभूतियों और वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित है। जब इसकी प्राप्ति हो जाती है, तब इसके प्रभाव संचित होते जाते हैं और एक साथ मिलकर रक्तचाप को कम करते हैं। यदि आप अपनी पुरानी आदतों को, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं, नहीं छोड़ते हैं, तब आप योग की विधियों के नियमित अभ्यास से प्राप्त सकारात्मक लाभों को कम कर देते हैं। तथापि अधिकतर व्यक्तियों की मान्यता है कि योग अभ्यास के बाद वे अच्छा अनुभव करते हैं तथा स्वाभाविक एवं क्रमिक रूप से अपने जीवन को पुनः समायोजित कर लेते हैं, जिससे वे सुन्दर शारीरिक स्वास्थ्य और सकारात्मक मानसिकता प्राप्त कर लेते हैं। इस प्रकार वे आनुवंशिकता और परिवेश के प्रभावों से मुक्त हो जाते हैं, तथा वार्द्धक्य प्रक्रिया को विकास एवं अनुभव प्राप्ति की प्रक्रिया में परिणत कर देते हैं।

सीमाओं की जानकारी

एक वृद्ध योद्धा एक युद्ध से अभी ही वापस आ रहा था, जो अपने साथ अपने इस अभियान के लूट का माल भी लिये हुए था। अधिक भार के कारण उसने अपनी लूट की सामग्री के उत्कृष्ट भण्डार से कुछ बेच देने का निर्णय लिया।

उसने एक यात्री से पूछा– 'क्या आप इस बहुमूल्य तलवार को दस स्वर्ण मुद्राओं में खरीदना चाहेंगे?' यात्री ने चटपट सौदा कर लिया।

योद्धा के साथी को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। सौदा समाप्त होते ही उसने पूछा– 'तुमने इतनी बहुमूल्य तलवार मात्र दस स्वर्णमुद्राओं में क्यों बेच दी?' वृद्ध योद्धा ने उत्तर दिया– 'मेरी तो केवल दस अँगुलियाँ हैं, क्या इससे भी बड़ी कोई संख्या हो सकती है?'

हम अपने विचारों और मान्यताओं की सीमाओं में बँध जाते हैं। यही सीमायें चार मिनट में एक मील दौड़ने की बात पर तब तक लागू रहीं, जब तक इस रेकॉर्ड को किसी ने भंग नहीं कर दिया। आज यही उच्च रक्तचाप की अवस्था पर भी लागू है। अभी तक चिकित्सा जगत् के पास इस रोग से मुक्ति का ज्ञान उपलब्ध नहीं है, अत: अधिकतर मनुष्य यही मान बैठे हैं कि इससे मुक्ति का कोई उपाय नहीं है, जैसा तलवार वाले वृद्ध सैनिक के साथ हुआ था कि वह दस से बड़ी संख्या की कल्पना भी नहीं कर सकता था, क्योंकि उसको किसी ने बताया ही नहीं था कि दस से भी बड़ी संख्या हो सकती है। यह स्थिति एक जड़ मानसिकता उत्पन्न कर देती है, जिसके कारण मनुष्यों के लिए अपने को रोग मुक्त करना और भी कठिन हो जाता है।

उच्च रक्तचाप की चिकित्सा है, परन्तु हमको सही विधि का ज्ञान अपेक्षित है, जिससे वास्तविक परिणाम मिल सके। पहले तो हमें बोध होना चाहिए कि रोग मुक्ति सम्भव है, फिर हमें योग मार्ग का सहारा लेना होगा, जो रोग मुक्ति की मंजिल तक ले जायेगा। योग के माध्यम से आपको अनुभव होगा कि हमारे अनेक विश्वास और विचार अज्ञान और भय पर आधारित हैं। हम अपनी आदतें और रिवाज बना लेते हैं, फिर किसी अधिक अच्छी और स्वास्थ्यप्रद पद्धति का पता चलने पर भी अपनी पुरानी आदतों और धारणाओं को बदलना हमें कठिन प्रतीत होता है। जब कोई सामाजिक आस्था और सांस्कृतिक आदत मनुष्य के काम नहीं आती तथा उसका काफी नुकसान कर देती है, तभी उन्हें बदलने की आवाज उठती है और एक विकल्प की व्यग्रता से खोज होने लगती है। आज जब हम उच्च रक्तचाप की व्याधि की ओर देखते हैं, जो हमारे समाज की इतनी अधिक जनशक्ति और अमूल्य सम्भावनाओं को नष्ट कर रही है, तो यह आवश्यकता अधिक स्पष्ट हो जाती है। वर्तमान जीवन में क्या दोष है तथा इस समस्या को हम कैसे हल करें, योग इसकी व्यावहारिक व्याख्या प्रस्तुत करता है।

प्रोफेसर एल. के. ह्वाइट ने अपने सं. रा. अमेरिका, कनाडा, इंग्लैण्ड, स्विट्ज़रलैण्ड, युगोस्लाविया, फिनलैण्ड, पोलैण्ड तथा अर्जेन्टिना के सर्वेक्षण में यह तथ्य उद्घाटित किया है कि विश्व स्वास्थ्य के समक्ष एक समस्या है। उन्होंने 1,50,00,000 मनुष्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले 48,000 व्यक्तियों का सर्वेक्षण नमूने के रूप में किया।[10] ह्वाइट ने इन व्यक्तियों को तीन कोटियों में विभाजित किया– अस्वस्थ, कामचलाऊ स्वस्थ और स्वस्थ।

1. *अस्वस्थ*

   क) सामाजिक कर्त्तव्यों के पालन में असमर्थता।

   ख) पहचाने जाने योग्य कोई रोग।

   ग) रोग के शारीरिक लक्षण, जैसे– खाँसी, छाती का दर्द, दम फूलना, कड़ापन, चिन्ता और जोड़ों में सूजन।

   घ) दन्तक्षय।

   ङ) अवगम्य दृष्टि दोष।

2. *कामचलाऊ स्वस्थ*– यद्यपि ये व्यक्ति काम करने में समर्थ हैं और बिस्तर पर नहीं पड़े हैं, किन्तु उनमें रोग के उपर्युक्त लक्षणों में से कुछ क्षणिक या चिरकालिक रूप से दिखाई पड़ते हैं।
3. *स्वस्थ*– इन व्यक्तियों में उपर्युक्त लक्षणों में से कोई भी लक्षण दृष्टिगोचर नहीं होता।

सर्वेक्षण के निष्कर्ष में पाया गया कि 14.3% स्वस्थ थे, 24.4% कामचलाऊ स्वस्थ और 61.3% अस्वस्थ पाये गये। इस प्रकार विश्व जनसंख्या का एक विशाल समूह किसी-न-किसी रोग से आक्रान्त है, चिरकालिक रूप से अशक्त है, या शारीरिक रूप से दुर्बल है, विकलांग है, या दीर्घकालीन अस्वस्थता के परिणामस्वरूप अक्षम है। इन अस्वस्थ व्यक्तियों में सबसे बड़ा समूह उच्च रक्तचाप से आक्रान्त है।

खराब स्वास्थ्य की यह विश्वव्यापी समस्या इसलिए उत्पन्न हो गई है कि मनुष्यों को अपने कार्यों के प्रति उत्तरदायी होने का प्रशिक्षण नहीं दिया गया है। हम अपने आप बनायी गई सीमाओं और भय में बंध कर काम करते हैं। बस, हम चाहे या अनचाहे अपनी जिन्दगी जीते हैं और उसका फल भुगतते हैं। हमको नकारात्मक शक्तियों पर विजय प्राप्त करना सीखना है, जिससे वे हमारे जीवन के साथ खिलवाड़ न कर सकें।

योग हमको संकल्प एवं मानसिक शक्ति के निर्माण की विधियाँ देता है, जिनकी सहायता से हम रोग और तनाव उत्पन्न करने वाली आदतों से संघर्ष कर सकें। यही स्वशासन, समस्वरता और स्वस्थ जीवन का राजमार्ग है।

मानसिक समस्याओं का निराकरण

मानसिक समस्याओं का निराकरण कर हम उच्च रक्तचाप के कारक तत्त्वों को समाप्त करते हैं। मन को क्षोभ और अशान्ति से मुक्त करने से रोगमुक्ति होती है, उसके फलस्वरूप मन अधिक स्पष्टता से चिन्तन और दक्षता से कार्य सम्पादन करता है। तनाव की स्थिति में असाध्य प्रतीत होने वाली समस्यायें विश्रान्त मन:स्थिति में सुगमतापूर्वक हल की जा सकती हैं। विश्रान्ति की प्रक्रिया में निम्नलिखित बिन्दु सहायक हो सकते हैं। इन्हें परम्परागत योगाभ्यास से संयुक्त किया जाना चाहिए।

- जब बच्चा सोता है, तब वह अपनी सभी समस्यायें भूलकर वस्तुत: सो जाता है। जब वह खेलता है, तो उसका पूर्ण ध्यान तात्कालिक क्षण में लगा होता है, भूत या भविष्य की चिन्ताओं से मुक्त। आपको भी इस तात्कालिक चेतना का विकास करना चाहिए। अधिकांश चिन्तायें और परेशानियाँ काल्पनिक होती हैं तथा वास्तविकता से अधिक अतिरंजित भी। विश्रान्ति होने से आप किसी भी समस्या से अच्छी तरह निपट सकते हैं तथा आत्मविश्वास विकसित कर सकते हैं।
- स्मरण रखें कि आपके अवचेतन एवं अचेतन मन में शक्ति का अक्षय भण्डार है। चेतन स्तर पर चिन्तन किये बिना ही यह अनेक समस्याओं का समाधान कर सकता है। परन्तु आपको केवल विश्रान्त रहना चाहिए तथा गहन प्रक्रियाओं को काम करने देना चाहिए। सूचना अपने मन में डाल दें, मानो आप एक कम्प्यूटर हों तथा सही समय और सही स्थान पर उनका उत्तर सहज भाव से प्रस्तुत हो जायेगा। यह प्रक्रिया श्रद्धा और अपनी अन्तरात्मा की क्रिया पर विश्वास के द्वारा बढ़ायी जा सकती है, जिसके विषय में अभी आपको सीमित अनुभव है।

- जब कोई बात आपके मन को उद्वेलित करे, तो आप उसमें उलझें नहीं, साक्षी बन जायें। एक द्रष्टा की भाँति चल रही प्रक्रिया को केवल देखते जायें। सभी विचार प्राण या ऊर्जा के वाहक हैं, उनसे उलझते ही मन में भावनायें और तरंगें उत्पन्न होने लगती हैं। अपनी साक्षी चेतना का परिष्कार कर, अभी जिस दलदल में आप फँसे हैं, उससे स्वयं अपने को निकाल सकते हैं। नकारात्मक भावनात्मक ऊर्जा द्वारा अनुकम्पी तन्त्र के अति उद्दीपन तथा रक्तचाप में इसकी परिणामित वृद्धि के रूप में शरीर में होने वाले क्षय को यह समाप्त कर देता है।
- स्वयं को तथा अपनी भावनाओं को स्वीकार कर लें। अपनी तुलना किसी अन्य व्यक्ति से न करें। स्मरण रखें, प्रत्येक व्यक्ति की अपनी प्रतिभा और विशिष्टतायें होती हैं। आपके लिए जो स्वाभाविक है, उसी को करने से आपको उत्तमोत्तम फल प्राप्त होगा तथा समग्रता में आप अधिक सामंजस्यपूर्ण ढंग से रहेंगे। इसका आपके मन पर सन्तोषप्रद प्रभाव पड़ेगा तथा रक्तचाप कम हो जायेगा। रूप रंग से भ्रमित न होंवें। अधिकांश व्यक्ति दूसरों के निमित्त एक भिन्न चेहरा पहन लेते हैं, पर वे अपने अन्दर में वही समस्यायें, दोष और भाव रखे रहते हैं जैसे आप में हैं।
- सुख की खोज अपने भीतर में करें। भौतिकवादी संस्कृति में व्यक्ति सुख की खोज प्राय: अपने अन्दर करने के स्थान पर बाहर में करता है। जब हम अन्तर्मुखी होते हैं तो सुख का स्रोत दिखाई पड़ता है।
- अपने आन्तरिक भावों और भावनाओं को बिना किसी अपराध बोध के स्वीकार करें। बाह्य परिस्थितियों के प्रति अपनी आन्तरिक प्रतिक्रिया को निकल जाने दें। परन्तु प्रत्येक क्षण आप जो कर रहे हैं, उसके 'क्यों' और 'क्या' के प्रति सजग रहें। क्रोध, लिप्सा, ईर्ष्या और नकारात्मक मानसिक शक्तियाँ अधिकतर व्यक्तियों की बनावट और अनुभूतियों का अंग होती हैं। जब हम परीक्षण करते हैं कि अन्दर में क्या हो रहा है, तो यही दिखलाई पड़ता है। तान्त्रिक दर्शन कहता है कि किसी वस्तु का दमन नहीं करें, अच्छा या बुरा जो भी हो, उसे स्वीकार करें। जो बातें आपको पतन या कष्ट में डालती हैं, निपुणतापूर्वक उन्हीं के उपयोग से आप उन्नत भी हो सकते हैं। सहज वृत्तियाँ मानव स्वभाव का अंग हैं, अत: हमें उन्हें अवश्यमेव स्वीकारना चाहिए। इस प्रकार हम धीरे-धीरे अपनी अन्तरात्मा को समझने लगते हैं और ज्ञान के उच्चतर क्षेत्र विकसित होने लगते हैं।

आइये स्वयं को पहचानें और अपने ही सान्निध्य का आनन्द लें, मानो आप ही सर्वश्रेष्ठ मित्र हैं।

- अपना परिष्कार करें। जब आपने स्वयं को स्वीकार कर लिया है, तथा अपने आन्तरिक स्वभाव में जो चीजें छिपी हुई हैं, उन्हें जान गये हैं, तो अपने दोषों को दूर करें एवं अपने निम्न स्वभाव को नियन्त्रित करें। यह ज्ञान धीरे-धीरे, थोड़ा-थोड़ा और यदि सम्भव हो तो मार्गदर्शन द्वारा प्राप्त होता है। आप मानो एक वृक्ष हैं, अत: जो चीजें आपको स्वास्थ्य प्रदान कर सकती हैं, उनका ही उपभोग करें।
- अपने अतीत पर पश्चाताप न करें। गीता में कहा है– *'गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिता:।'* भूत तो समाप्त हो गया, अत: अपनी भूलों से सीखिये तथा भविष्य में उन्हें दुहरायेंगे नहीं, इसे भी जानिये। इस प्रकार आप अपने वर्तमान को उन्नत कर सकेंगे। यदि आप अपने अतीत को वर्तमान में जीवित रखेंगे, तो अपने मन को कोलाहलपूर्ण ही करेंगे तथा स्वयं को दु:खी करेंगे। इसलिये अपने जीवन के प्रत्येक क्षण का आनन्द लीजिये।
- लोगों के बीच उन्मुक्त रहिये, भले ही आप जो देख रहे हैं आपको पसन्द न हो। प्रत्येक व्यक्ति में कुछ-न-कुछ हमारे सीखने योग्य बातें हैं। आप कठिन परिस्थितियों से बहुत कुछ सीख सकते हैं। स्मरण रखें कि अन्य व्यक्तियों की भी अपनी समस्यायें हैं और शायद आपके लिए सम्भव हो कि आप उस समस्या के समाधान में उनकी सहायता कर सकें और इस प्रकार परिपक्व व्यक्तित्व की ओर अग्रसर हो सकें। यदि हम ग्रहणशील हों तो उच्चतर चेतना की ओर बढ़ने में सहायता करने की सम्भावनायें प्रत्येक व्यक्ति में हैं।
- अपनी महत्तम आवश्यकताओं, आसक्तियों एवं इच्छाओं की जानकारी प्राप्त करें तथा बाह्य परिवेश में सुख की तलाश की अपनी आवश्यकताओं को कम करें। अपने अन्दर देखिये। इस प्रकार आप विचार और कर्म में स्वातंत्र्य और आत्मविश्वास को प्राप्त कर सकेंगे।

योगाभ्यास द्वारा उन विचारों का पोषण और संवर्द्धन होता है, जिनसे मानसिक समस्याओं से जूझा जा सकता है। ये अभ्यास ही मन में एक शक्तिशाली परिवर्तन लाते हैं। जो अभ्यास उच्च रक्तचाप के लिए उपयुक्त हैं, वे हैं–असंवेदीकरण, आत्मप्रबोधन, अननुकूलन और अनासक्ति। जब

आप पूर्ण विश्रान्त होते हैं, उदाहरणार्थ– योगाभ्यास के उपरान्त, योगनिद्रा में अथवा सोने के ठीक पहले या बाद में इन अभ्यासों का आदर्श रूप में उपयोग होता है। मन जब विश्रान्त रहता है, तब अधिक ग्रहणशील रहता है, तथा शीघ्रता एवं सरलता से रूपान्तरित होता है।

असम्वेदीकरण

आपकी कोई समस्या है, आप उसे स्पष्ट रूप से देख सकते हैं, पर उसको दूर नहीं कर पाते हैं। समस्या का समाधान आपको छलता है। आप क्या कर सकते हैं? अनेक व्यक्ति समस्या की पूर्णरूपेण उपेक्षा करने के प्रयास में प्राय: जटिल और अनुपयुक्त विधियों में उलझ जाते हैं। तथापि योग के सामान्य विवेक के उपयोग से समस्या का समाधान आप जितना सोचते हैं उससे भी अधिक सरल हो जाता है।

आप अपनी समस्या और अपने जीवन में उसके निहितार्थ और प्रभाव के प्रति सजग हो जाइये। अब मानसिक रूप से कहिये, 'मुझे कोई परवाह नहीं है कि मुझे समस्या है भी या नहीं है।' बस, उसे स्वयं को प्रभावित न करने दें। वह रहे या जाय, जो भी हो, पर आप उसमें उलझने या उससे प्रभावित होने को तैयार नहीं हैं। आपके मन पर जो उसका नकारात्मक प्रभाव होता है, उसे यह समाप्त कर देगा तथा आपको अनुभव से सीखने का अवसर देगा।

जब ये प्रभाव समाप्त हो जायेंगे, समस्या में बंधी ऊर्जा मुक्त हो जायेगी। अपने अभ्यास में जैसे ही आप विश्रान्त हों, वैसे ही उस समस्या को सीधे अपनी चेतना में लायें। उसका सामना करें, चाहे वह भय हो, कुण्ठा हो या कुछ भी हों। उस वस्तु या परिस्थिति की कल्पना करें तथा क्रोध, भय, चिन्ता जो भी जैसा हो उस भाव को पूर्णतया अनुभव करें।

पहले अनुभव की तीव्रता अधिक होगी, क्योंकि आपकी भावनाओं की ऊर्जा के निकास हेतु नयी वाहिकाओं का खुलना आवश्यक है। तथापि, जैसे सोडावाटर की बोतल में खोलते ही जोर का ऊफान आता है तथा बाद में धीरे-धीरे शान्त हो जाता है, उसी प्रकार प्रतिदिन के अभ्यास से भावनात्मक प्रतिक्रिया कम होती जाती है।

आप सुनिश्चित कर लें कि जब आप यह अभ्यास कर रहे हों, उस समय पूर्ण विश्रान्त अवस्था हो। अपने शरीर एवं मन पर अभ्यास के प्रभावों का अवलोकन करें। अधिक स्पष्ट और चैतन्य उत्तेजनाओं के लिए ही विशेष

रूप से इस विधि की अनुशंसा की जाती है। इस प्रकार आप उन बहुत-सी समस्याओं का निदान कर सकते हैं, जो अत्यधिक अनुकम्पी उद्दीपन एवं एड्रिनल अतिस्राव करती हैं, जिनके कारण उच्च रक्तचाप उत्पन्न होता है।

आत्म सुझाव

इस विधि का उपयोग असंवेदीकरण के साथ किया जा सकता है। आत्म सुझाव अति शक्तिशाली विधि है तथा अधिकतर व्यक्ति प्रतिदिन इसका उपयोग करते भी हैं, पर बिना जाने। आपको ऐसे उद्गार प्रायः सुनने को मिलेंगे– 'वह मुझे परेशान कर देता है', 'मैं तो मर ही गया था', 'मुझे पता था यह गलत होगा।' इस प्रकार के चिन्तन जो प्रत्यक्षतः हानिरहित हैं, वास्तव में नकारात्मक हैं। ये प्रत्यक्षतः अहानिकर प्रतीत होने वाले सुझाव अवचेतन मन को गहराई से प्रभावित करते हैं। प्रत्येक कर्म, विचार और शब्द मन के शक्तिशाली गुप्त पक्षों द्वारा ग्रहण कर लिये जाते हैं तथा हमारे जीवन पर उनकी क्रिया चैतन्य रूप से तब तक अनुभव नहीं होती, जब तक हम योग के द्वारा अपनी चेतना को परिष्कृत न कर लें।

मन की गतिविधियों को चेतन स्तर पर लाने हेतु आत्म सुझाव का उपयोग किया जा सकता है। एक बार आपने अनुभव प्राप्त कर लिया कि आपके लिए यह विधि किस प्रकार काम करती है, तब आप उन असीमित सम्भावनाओं को पूर्णरूपेण समझ जायेंगे, जो हम सब के अन्दर विद्यमान हैं तथा जो लोग इस चेतना को विकसित कर लेते हैं, उन्हें क्या प्राप्ति होती है, इसे भी समझ सकेंगे।

यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि आप जो आत्म-सुझाव देते हैं, सजगता के साथ देते हैं या असजग रहकर, जैसा अधिकतर व्यक्ति करते हैं। यह प्रक्रिया चलती रहेगी तथा इसके प्रभाव का भी अनुभव होता रहेगा। प्रथम तो आप यह नहीं समझ पायेंगे कि क्या हो रहा है, पर जब आप मन में कोई उद्देश्य रखकर सुझाव देते हैं, तब आसानी से सुनिश्चित कर सकते हैं कि किस कारण से कौन-सा कार्य सम्बन्धित है। अपने कर्मों का उत्तरदायित्व लेने हेतु आपको समझना होगा कि आप किस प्रकार अपने विचारों के द्वारा अपना जीवन निर्मित कर रहे हैं। आत्म-सुझाव के उपयोग के द्वारा अपने विचारों को काम करने दें।

हम जब कोई संकल्प लेते हैं, तो आत्म सुझाव के ही द्वारा अपने मन को पुनर्संयोजित करने हेतु, जिससे कुछ समय में हमारा सम्पूर्ण व्यक्तित्व

सकारात्मक रूप में परिवर्तित हो जाय। योग निद्रा जैसी अवस्था में इस विधि को उत्तम रूप से प्रयुक्त किया जा सकता है। निद्रावस्था में प्रवेश करने के पूर्व जैसा भाव रहता है, योग निद्रा कुछ-कुछ उसी के सदृश है। संकल्प एक छोटी सकारात्मक उक्ति है, जो आपकी इच्छानुसार है, तथा वह मनोभाव और निश्चय से आवेशित है। इसे गहरे अवचेतन मन में आरोपित किया जाता है। उक्ति हो सकती है– 'मैं अधिक चैतन्य बनूँगा', 'मैं मानवता के हित में कार्य करूँगा', 'मैं सभी बाधाओं पर विजय प्राप्त कर लूँगा।' जिस सकारात्मक मनोवृत्ति को आप विकसित करना चाहते हैं उसका मानस दर्शन भी करें। उदाहरण के लिए, भयोत्पादक परिस्थिति की कल्पना करते हुए स्वयं को परिपक्व समझदारी पर आधारित साहसपूर्वक अभिनय करता हुआ देखें।

अननुकूलन

मानसिक समस्यायें उत्पन्न होती हैं अनुकूलन के कारण, जन्म काल से ही लगातार सुझावों की चली आ रही शृंखला के कारण। जब आप गर्भ में ही रहते हैं, तब अपने परिवेश के प्रति हो रही अपनी माँ की आन्तरिक प्रतिक्रियाओं से अनुकूलित होते हैं। किसी भी परिस्थिति विशेष में काम करने हेतु जिस प्रकार आपका मन बारम्बार अनुकूलित होता रहा है, उसी पर आप पूर्णतया आश्रित हैं। यह अनुकूलन मस्तिष्क के तन्त्रिका कोशिकीय (न्यूरोनल) परिपथों के साथ-ही-साथ आपके व्यक्तित्व में भी अभिलिखित होता जाता है। एक क्षण के लिए आप शान्त हो सकते हैं, लेकिन अगले ही क्षण भावनात्मक उत्तेजना, क्रोध या अवसाद ग्रस्त हो सकते हैं। हो सकता है, किसी तुच्छ कारण ने मानसिक और तन्त्रिका कोशिकाओं ने मस्तिष्क परिपथों को उत्तेजित कर दिया हो, जिसके कारण आप पूर्वानुकूलित ढंग से क्रियाशील हो गये। ये परिपथ आपकी आनुवंशिकता और परिवेश द्वारा निर्मित हुए हैं। आपने इन प्रतिक्रियाओं को अपने माता-पिता, मित्रों और समाज से तथा अपने व्यक्तित्व की गहराई में पड़े संस्कारों से निर्मित किया है।

मस्तिष्क एक विलक्षण यन्त्र है। इसमें 15 अरब कोशिकायें हैं। प्रत्येक कोशिका के 5,00,000 सम्पर्क सूत्र हैं। यद्यपि मस्तिष्क का भार पूरे शरीर के 2% भार के बराबर है, यह सम्पूर्ण शरीर में आपूरित रक्त का 17% भाग अकेले प्राप्त करता है तथा शरीर को प्राप्त ऑक्सीजन का 10% ले लेता है।

इसकी गतिविधियों की थाह मनुष्य की आज की बुद्धि के परे है। इस कम्प्यूटर का पूर्णरूपेण उपयोग करने और लाभ उठाने के लिए हमें इसकी बनावट की, मौलिक संरचना की जानकारी प्राप्त करनी पड़ेगी। योगाभ्यास के द्वारा हम यह चेतना विकसित कर सकते हैं। अभी तक तो हमने अपने मस्तिष्क को अत्यधिक अनुपयोगी और अनावश्यक सूचनाओं से प्रदूषित ही होने दिया है, जो इसके कार्यों की शुद्धता को विकृत करते हैं। आप अपने मन से विकारों और अनावश्यक पूर्वयोजनाओं को निकाल दें तो आप इन्हें अपने मस्तिष्क के परिपथों से भी निकाल देंगे।

भय, असुरक्षा, क्रोध, विरक्ति, असहाय होने की भावना की मानसिक पूर्वायोजना को निकाल बाहर करें। अपने विचारों, भावों और विश्वासों के प्रति चैतन्य बनें, तथा समझें कि वे आपके अतीत के अनुकूलन के ही अंश हैं। दिन के प्रत्येक क्षण में मस्तिष्क को प्राप्त हो रही लाखों-लाख सूचनाओं के एक अत्यल्प भाग के प्रति ही हम चैतन्य हो पाते हैं। आँखों में 20 लाख तन्त्रिका-सम्बन्धन हैं, तथा कान में सैकड़ों-हजार, परन्तु हम उनके द्वारा सम्वाहित सूचनाओं के एक छोटे अंश के प्रति ही चैतन्य रहते हैं। हम प्रत्येक क्षण के लघुतम अंश के प्रति ही चैतन्य होने में समर्थ हैं और गया क्षण तो लौटकर आता नहीं है।

उन घटनाओं के प्रति चैतन्य होने का प्रयास कीजिये, जो आपके साथ पूर्व में घटी हैं तथा जिन्हें आप भूल गये हैं, पर वे अभी भी आपको अवचेतन स्तर पर प्रभावित करती हैं। नकारात्मक पूर्वायोजना का एक उदाहरण है कि एक बालक एक व्यस्त सड़क के पास मटरगश्ती करता है। माँ इसे देखती है, भावुक होकर उसे फटकारती है। बालक केवल इतना ही चैतन्य है कि जिसे वह निकट आत्मीय समझता है तथा जिस पर वह पूर्ण आश्रित है वह व्यक्ति उसको आघात पहुँचा रहा है तथा उसके प्रति अवांछनीय स्पन्दन विकसित कर रहा है। माँ तो अपने अनुकूलन के अनुसार कार्य करती है, जिसका परिणाम है चिन्ता और भय। वह अपने पुत्र का भी उसी प्रकार पूर्वायोजन कर रही है। बच्चे पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहे हैं तथा जैसे-जैसे वह बढ़ेगा, ये अपना प्रभाव डालते रहेंगे। बड़ा होने पर वह भी दबावपूर्ण परिस्थितियों में इसी प्रकार प्रतिक्रिया व्यक्त करेगा, भयग्रस्त होकर चिल्लाकर, क्रोधकर तथा अन्य नकारात्मक भावनाओं द्वारा, जिन सबका उसके स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव होगा तथा उच्च रक्तचाप उत्पन्न होगा।

इसी सम्बन्ध में एक ज़ेन गुरु की कहानी है, जिसने एक दिन अपने शिष्य से एक प्रश्न पूछा। शिष्य के उत्तर से गुरु प्रसन्न हुआ। अगले दिन गुरु ने फिर वही प्रश्न पूछा और उस शिष्य ने वही उत्तर दिया। इस बार गुरु क्रुद्ध हो गया, क्योंकि शिष्य ने उत्तर यंत्रवत् दुहरा दिया, एकदम अनुकूलित ढंग से, बिना उस पर पुन: चिन्तन किये।

चेतना का विस्तार कर योग हमारे समग्र जीवन से इस अनुकूलन को समाप्त कर देता है, जिससे हमें अपने अभिप्रायों, विचारों, आस्थाओं और कार्यों में अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है। जैसे-जैसे आप अधिक चैतन्य होंगे, आप निश्चित एवं शान्त रहेंगे, विचार, अवधारणा और निर्णय में स्पष्टता अनुभव करेंगे। आप स्थूल शरीर के संचालन से लेकर अन्य व्यक्तियों से सम्भाषण और सही ढंग से प्रतिक्रिया व्यक्त करने में उन्मुक्तता तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विस्मयकारक स्फूर्ति और नम्यता, अपने अन्दर पायेंगे। इस प्रकार आप अपने अतीत जीवन के काल्पनिक स्वप्नलोक को, जिसने आपके चतुर्दिक फैले विश्व के प्रत्यक्ष ज्ञान को आविष्ट कर दिया है और उच्च रक्तचाप उत्पन्न कर दिया है, मिटा देंगे।

अनासक्ति

जब आप अपने मन को अननुकूलित करते हैं, तब आप उसे कुण्ठाओं और विक्षिप्तताओं आदि से रिक्त कर देते हैं। अब आप पुन: उसे अनुकूलित न करें और अपने उद्देश्य को समाप्त न करें। मन तो एक दर्पण-सा होना चाहिए, प्रत्येक स्थिति को स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित करने वाला तथा अहंकार और पूर्वानुकूलन आदि की धूल से मुक्त।

एक अन्य व्यक्ति की कथा है जो ज्ञान और प्रबोधन हेतु एक ज़ेन गुरु के निकट गया। गुरु ने उसे चाय पीने का निमन्त्रण दिया और उसके प्याले में चाय डालनी शुरू की। प्याला भर जाने के बाद भी वह चाय डालता ही गया, जिससे चाय छलक कर बिखरने लगी। आगन्तुक बोल पड़ा– 'रुकिए, रुकिए।' गुरु ने कहा– 'जिस सिर में पूर्व से ही कूड़ा-कचरा भरा है, उसमें मैं नवीन ज्ञान और विवेक कैसे डालूँ?'

सभी परिस्थितियों में द्रष्टा बनने का प्रयास कीजिये, चाहे वे अत्यधिक विक्षुब्ध, उत्तेजित या अशान्त करने वाली क्यों न हों। आप समझ जायेंगे कि आप जो कर रहे हैं, आप वह नहीं हैं, अर्थात् न आप डॉक्टर हैं, न मिस्त्री

हैं, न इंजिनीयर हैं और न एक गृहिणी। आप इन सबसे सर्वथा भिन्न कुछ और हैं। इस चेतना के बिना आप जीवन के उतार-चढ़ावों में ही फँसे रहेंगे। आपका शरीर और मन निरन्तर परिवर्तनशील हैं, आप इनमें से कुछ भी नहीं हैं। विश्रान्ति और चेतना सहित अनासक्ति के अभ्यास द्वारा पता लगाने का प्रयास करें कि आपके भीतर स्थायी और अनश्वर कौन है।

अनासक्ति का अभ्यास करें और आप रबर की गेंद के समान इतने समुत्थनशील एवं शक्तिशाली हो जायेंगे कि जीवन की प्रत्येक स्थिति में एक शीशे की तरह गिर कर चकनाचूर नहीं होंगे, वरन् रबर की गेन्द की तरह उछल कर उन्हें पार करते जायेंगे। जिस प्रकार रबर की एक गेन्द अपनी आन्तरिक रचना में बिना किसी परिवर्तन के शीघ्र ही उछल जाती है, उसी प्रकार जीवन के खेल आपकी अन्तरात्मा का स्पर्श नहीं कर पायेंगे। इस प्रकार आप धैर्य और शक्ति प्राप्त करेंगे जो उच्च रक्तचाप को परास्त कर सकेगी।

आप पायेंगे कि उच्च रक्तचाप शरीर का रोग है, पर मानसिक शक्ति से उस पर विजय प्राप्त होती है। आप समझ जायेंगे कि अपनी बीमारी के लिए आप कितने उत्तरदायी हैं, और इस दुर्गति से कैसे बाहर आ सकते हैं। अपने चतुर्दिक फैली वस्तुओं से तादात्म्य स्थापित न करें, फिर आप जीवनोद्देश्य के प्रति अपनी सजगता को विकसित और परिष्कृत कर लेंगे। इस प्रकार आप दु:ख और पीड़ा के प्रभाव से बच सकते हैं, चाहे वे उच्च रक्तचाप या अन्य मानसिक या शारीरिक व्याधियाँ क्यों न हों।

आसन और प्राणायाम

पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति में सहायता के निमित्त परिकल्पित असंख्य विधियाँ योग में समाविष्ट हैं, जिनका 5000 से भी अधिक वर्षों तक प्रयोग और परीक्षण हो चुका है। इन विधियों का अभ्यास जब आप प्रतिदिन करेंगे, तो स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन प्राप्त कर स्वस्थ रहने का अपना जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त करेंगे। इस प्रकार अपने जीवन में अधिक आनन्द प्राप्त करेंगे। योग का उद्‌देश्य नितान्त व्यावहारिक है। वह आपकी जीवन पद्धति बदल देता है, जिससे आप अपने जीवन में अधिकतम उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकें।

योग का नियमित अभ्यास आवश्यक है। अनेक वर्षों के संचित तनाव और दोषपूर्ण जीवन पद्धति के परिणाम उच्च रक्तचाप को दूर करने सम्बन्धी अपने प्रयत्न में, आपको रोग मुक्ति हेतु दृढ़ संकल्प शक्ति का प्रयोग अनिवार्य रूप से करना होगा। यदा-कदा यह जल को ऊपर पहुँचाने के प्रयास के समान प्रतीत होगा। यह असम्भव कार्य नहीं है, यदि आपके पास सही यन्त्र हों, जैसे, पम्प। परन्तु यदि आप अपने प्रयास में नियमित नहीं हैं, तो ऊपर उठा हुआ जल शीघ्र वापस नीचे आ जायेगा और आपको पूरा का पूरा प्रयास पुन: प्रारम्भ करना पडेग़ा। तथापि अनवरत प्रयास से आप जल को ऊपर लाकर अपनी इच्छित दिशा में प्रवाहित कर सकेंगे और अन्तत: वहाँ पहुँचा देंगे जहाँ आप चाहते हैं। तभी आपको चैन मिलेगा।

स्वयं को रोग मुक्त करने हेतु निश्चित रूप से इसके लिए वास्तविक इच्छा करनी होगी। काम आपको करना होगा, आपके लिए यह कार्य कोई अन्य व्यक्ति नहीं कर सकता, और इसे प्रारम्भ कर देने का अभी ही समय है। साथ ही साथ आपको धैर्य और अध्यवसाय अनिवार्यत: जारी रखने होंगे, शीघ्रता

नहीं। यह एक पौधा लगाने जैसा है। यदि आप उसे प्रतिदिन उखाड़-उखाड़ कर देखेंगे कि वह जीवित है या नहीं तो वह मर ही जायेगा। आपको तो धैर्य एवं सतर्कतापूर्वक प्रतिदिन उसे सींचना पड़ेगा, मिट्टी की देखभाल करनी होगी, तब वह एक पुष्ट जीवन्त पौधा हो पायेगा।

सुन्दर स्वास्थ्य का बीज और उसके विकास के निमित्त उत्तम भूमि उपलब्ध कराने हेतु हमने आसन, प्राणायाम और ध्यान की विधियों का कार्यक्रम परिकल्पित किया है। इन अभ्यासों को अपने दैनन्दिन कार्यक्रम में समाविष्ट कर लें। ये शरीर और मन की संरचना का पूर्ण कायाकल्प करने में निरापद, निस्संशय और अचूक हैं, जिससे आपके शरीर और मन में पुनः साम्य और गत्यात्मकता स्थापित हो जाय।

योगाभ्यास आपको इतना उन्नत कर देगा कि आपको बाह्य शक्तियों का, जिन पर आपका नियन्त्रण नहीं है, मुखापेक्षी न होना पड़ेगा, योग आपको नियन्त्रण प्राप्त करने की शक्ति देगा। प्रयास करके देखें, इसकी अचूक सफलता का तो यही प्रमाण होगा कि आपका उच्च रक्तचाप विदा हो जाय।

आसन

'स्थिरं-सुखमासनम्' (योग सूत्र, 2.46), आसन का अभिप्राय है शरीर की स्थिर एवं सुखद स्थिति। ये शारीरिक भंगिमायें स्थिर और गत्यात्मक दोनों हैं, जो शरीर और मन को विश्रान्त एवं शक्तिशाली बनाने हेतु परिकल्पित हैं। ये जिम्नास्टिक व्यायाम नहीं हैं, जो दबाव, प्रयास या पेशी संवर्द्धन चाहते हैं, वरन् ये विश्रान्ति प्रदान करते हैं, प्राण की ऊर्जा को गतिशील बनाते हैं, तथा आपको ध्यान के द्वारा अधिक लाभ प्राप्ति में मदद करते हैं। अतः आपको इन्हें मात्र शारीरिक भंगिमा नहीं, वरन् स्वाभाविक अवस्थाओं के रूप में समझना है, क्योंकि इनके निष्पादन में, और वह भी सही निष्पादन में आपके सम्पूर्ण अस्तित्व के सहयोग की आवश्यकता है।

आसनों के करने में प्रयास रहित प्रयत्न चाहिए। जब इसका मानसिक एकाग्रता और श्वास चेतना के साथ सही अभ्यास होता है, तब आपको समन्वय और साम्य स्थिति की प्राप्ति होती है। यह प्रकट करता है कि शरीर और मन के साम्य को सुनिश्चित करने वाला तन्त्र निर्दोष ढंग से कार्य कर रहा है, दूसरी ओर दोषपूर्ण व्यायाम, जैसे, पेशी-सम्वर्द्धन-व्यायाम उच्च रक्तचाप को गम्भीर बना देते हैं। इस प्रकार के व्यायाम केवल शारीरिक पक्ष

पर ध्यान देते हैं, मानसिक पक्ष को गौण कर देते हैं, इस प्रकार मन और शरीर में असामंजस्य उत्पन्न कर देते हैं, जिसका दुष्परिणाम रोग के रूप में प्रकट होता है।

शारीरिक शिक्षा अकादमी, पोलैण्ड के शरीर क्रिया विज्ञान विभाग के टी. पासेक और प्रोफेसर डब्ल्यू. रोमनोवस्की के अनुसार, 'शारीरिक शिक्षा के व्यापक क्षेत्र में विशेषज्ञों ने पूर्ण स्वास्थ्य एवं शारीरिक दक्षता हेतु मानसिक साम्य के आधारभूत महत्त्व को स्वीकार किया है। शोधकर्त्ता अब उस पद्धति की खोज में प्रयत्नशील हैं, जो पेशीय-दक्षता सिखाने के अतिरिक्त मानसिक स्वास्थ्य भी सुनिश्चित करे। अतएव वे शारीरिक और मानसिक साम्य उत्पन्न करने वाली शिक्षा पद्धति की खोज में प्राच्य संस्कृति और मुख्यत: भारतीय योग की ओर उन्मुख हुए हैं।'[11]

भारी शारीरिक व्यायाम ऊर्जा प्रदान करने के स्थान पर शरीर में तनाव एवं थकान उत्पन्न करते हैं। पेशियाँ पुष्ट हो जाती हैं, परिणामस्वरूप ऑक्सीजन की खपत अधिक होती है। जब तनाव, कठिन व्यायाम आदि से ऑक्सीजन भण्डार समाप्त हो जाता है, तो वर्द्धित पेशी पिण्ड के कारण लैक्टेट का स्तर अधिक बढ़ जाता है। इससे परिक्लान्ति और अन्ततोगत्वा शारीरिक रोग बढ़ता है।

आसन पेशियों का आकार नहीं बढ़ाते, पर उनकी दक्षता और शक्ति बढ़ाते हैं, उदाहरणार्थ– लैक्टिक अम्ल के निष्कासन में सहायता देकर। वे शरीर को विश्राम देते हैं तथा ऑक्सीजन उपयोग को सरल बना देते हैं, जो स्वयं में लैक्टेट उत्पादन बन्द कर देता है, साथ ही साथ रक्त शर्करा का ऑक्सीकरण कर अधिक ऊर्जा प्रदान करता है। फलस्वरूप अधिक कार्य सम्पादन में सहायक होता है।

पासेक और रोमनोवस्की का कहना है कि 'योग के अधिकांश शारीरिक व्यायामों का सारतत्त्व विश्रान्ति और एकाग्रता का अभ्यास है, जिसमें स्थिरता की प्रधानता रहती है। इसमें विशिष्ट शरीर-भंगिमा और मन्द श्वसन की विधियों का विधान है। ये पूर्ण प्रशान्त अवस्था में विश्रान्त पेशी समूह की स्थिति में किये जाते हैं। समक्षणिक ध्यान के निमित्त ये अपरिहार्य हैं।'[12]

एक निश्चल आसन में रहने से शरीर सक्रिय हो जाता है तथा स्वयं को पुन: समंजित, प्रसारित, मर्दित, प्रशमित, उन्मुक्त और विश्रान्त करने हेतु उसे अवकाश मिलता है। आसन करते समय जो असुविधा होती है, वही हमारी

त्रुटियों को प्रकट कर देती है। हमारी जाग्रत अवस्था में सामान्यता असुविधायें तनावों से उत्पन्न होती हैं, परन्तु आसन का अभ्यास करते समय हम तनाव से सम्बन्धित पीड़ा और कड़ेपन को वास्तविक समझते हैं, यही कष्ट देता है। अत: इन तनावों को क्रमश: व्यवस्थित रूप से हटाने या पेशीय विश्रान्ति पाने में थोड़ा समय तो लगता ही है। फिर हम पीड़ा से मुक्त हो जाते हैं तथा असुविधायें भी अनुभव नहीं होतीं।

आसन भावनात्मक और मानसिक तनाव दूर करते हैं। हमारे आन्तरिक और बाह्य अनुभवों से सम्बन्धित भावनात्मक स्थितियों की तीव्रता भी कम हो जाती है। इन अवस्थाओं से सम्बन्धित मोटर-प्रतिक्रियाओं की उग्रता भी काफी कम हो जाती है। मस्तिष्क की सम्वेदी-सजगता और मोटर-क्रियायें शान्त और समन्वित हो जाती हैं, जिससे क्रियात्मक दक्षता बढ़ जाती है।

पोलैण्ड के पासेक एवं रोमनोवस्की तथा भारत के विनेकर ने शोध और प्रयोग किये हैं, जो आसन के अभ्यास के समय विभिन्न सम्वेदी संग्राहकों द्वारा मस्तिष्क में वर्द्धित निवेशों की ओर संकेत करते हैं, जब पेशियाँ विश्रान्त रहती हैं।[13, 14] यह पेशी विशेष और अंग समूहों पर वर्द्धित दबाव के कारण उत्पन्न होता है, साथ ही साथ मानसिक एकाग्रता के द्वारा मस्तिष्क, यकृत एवं अन्य अवयवों में रक्त प्रवाह और ऑक्सीजन आपूर्ति के साथ-साथ मस्तिष्क में अवस्थित विशिष्ट केन्द्रों का उद्दीपन बढ़ जाता है। प्रभावित पेशियों और बाह्य अंगों की मालिश कर यह ऊतकों के स्वास्थ्य सुधार में सहायता करता है, मस्तिष्क उद्दीपन को बढ़ाकर उसमें विश्रान्ति और तनाव में कमी लाता है तथा प्राण शरीर में प्राण की वृद्धि करता है। सब मिला-जुला कर स्वास्थ्य उन्नत करता है तथा कुछ ही दिनों में मस्तिष्क की उच्चतर प्रान्तस्था सुसंगत रूप से समन्वित निम्न केन्द्रों में नये प्रतिमान विकसित करता है। सामान्य व्यायाम और योग में यही मुख्य अन्तर है।

टी. पासेक और प्रो. रोमनोवस्की ने अपने परीक्षणों में शरीर क्रिया वैज्ञानिक, प्राणि-वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक विधियों का उपयोग किया है। उनके प्रयोगों से यह सम्पुष्ट हुआ है कि आसनों के क्रमबद्ध अभ्यास से निम्न मस्तिष्क में उच्चतर स्वैच्छिक प्रतिमान तथा अधिकाधिक नियन्त्रण और समन्वय विकसित होता है। इससे सभी मस्तिष्क क्रियाओं में अधिक अच्छा समन्वय होता है, भावनात्मक साम्य और संयम इस स्तर तक आ जाता है, जो परम्परागत शारीरिक व्यायामों से भी नहीं आता।

टी. पासेक, के. गोपाल और सहयोगियों के शोधकार्यों ने उच्च रक्तचाप जैसे रोगों में आसनों के उपयोग को समर्थन दिया है तथा बताया है कि जो व्यक्ति नियमित रूप से आसनों का उपयोग करते हैं, वे उन लोगों की अपेक्षा अधिक विश्रान्त रहते हैं, जिन्होंने कभी आसन नहीं किया है या अभी-अभी ही आसन सीखना प्रारम्भ किया है।[15]

के. गोपाल ने रक्तचाप अध्ययनों से अपने शोध को सम्बन्धित किया है और आसनों के पक्ष में उपलब्धियाँ पाई हैं। उनका कहना है कि आसन-प्राणायाम द्वारा उत्पन्न अल्प चयापचयी स्थिति (कोशिका कार्यों और कोशिका थकान में कमी) और उससे परिणामित मानसिक शान्ति, उच्च रक्तचाप के उपचार में अत्यन्त लाभदायक हैं। इसकी जाँच हेतु उन्होंने निम्नांकित प्रयोग किया।

1. *लक्ष्य*– आसन करने वाले दो समूहों के बीच की तुलना करना– एक जो छः मास से नियमित रूप से अभ्यास कर रहे थे और दूसरा जो अप्रशिक्षित थे। सभी प्रयोगाधीन व्यक्तियों को ई.ई.जी. से सम्बद्ध किया गया तथा उनके परिसरीय रक्त प्रवाह और श्वसन का भी अभिलेखन किया गया।
2. *प्रयोग*– रोगियों ने निम्नांकित आसन किये, जिस समय उनकी सूचनायें अंकित की गईं– वज्रासन, शशांकासन, सर्वांगासन, शवासन, विपरीत-करणी मुद्रा, अर्द्ध मत्स्येन्द्रासन और सेतुबन्धासन।
3. *परिणाम*– अप्रशिक्षित व्यक्तियों में प्रशिक्षित समूह की अपेक्षा, पेशीय विश्रान्ति कम थी, यद्यपि शवासन में दोनों समूहों ने अधिकतम विश्रान्ति का अनुभव किया। यह संकेत करता है कि उच्च रक्तचाप के लिए शवासन अधिक अच्छा है। शवासन में हृदय-गति और श्वसन-गति न्यूनतम थी, जबकि परिसरीय रक्तप्रवाह अधिकतम था। प्रशिक्षित समूह में, अप्रशिक्षितों की अपेक्षा, हृदय-गति, श्वसन दर धीमी थी एवं परिसरीय रक्त प्रवाह अधिक था। यह प्रकट करता है कि आसनों का नियमित अभ्यास करने से व्यक्ति परिसरीय प्रतिरोध कम कर रक्तचाप कम कर सकता है और उसकी विश्रान्त होने की क्षमता बढ़ती है। मस्तिष्क की अल्फा लय भी बढ़ी थी, जो तन्त्रिका तन्त्र की विश्रान्ति से सम्बन्धित पायी गई।

सभी आसनों में प्रशिक्षित समूह को कम ऑक्सीजन की आवश्यकता हुई और उन्होंने कम ही कार्बन डाइऑक्साइड का भी विसर्जन किया। इसका अर्थ है कि चयापचयी क्रिया मन्द रही एवं प्रयास भी कम ही लगा। यह विश्राम और विश्रान्ति की एक गहरी स्थिति का द्योतक है। आर. वैलेस और एच. बेन्सन

ने प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है कि सभी प्रशिक्षित ध्यानकर्त्ताओं के अनुकम्पी तन्त्रिका उद्दीपन में कमी आई, परिणामस्वरूप परिसरीय प्रतिरोध कम हुआ और इस प्रकार परिसरीय रक्त प्रवाह बढ़ा।[16] यह निष्कर्ष गोपाल के शोधकार्य से मेल खाता है।

निष्कर्ष

गोपाल ने शवासन पर प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है– 'इस आसन में वैद्युतिक क्रियाशीलन, हृदय गति और श्वसन गति न्यूनतम तथा परिसरीय रक्त प्रवाह लगभग अधिकतम रहता है। यह शरीर और मन की पूर्ण विश्रान्त अवस्था का परिचायक है और इसलिए उच्च रक्तचाप के उपचार हेतु अनुशंसित है।'[17]

यह प्रमाणित हो चुका है कि अनेक रोग वक्र मेरुदण्ड से सम्बन्धित हैं। यदि मेरुदण्ड सीधा नहीं है, तो मेरुदण्ड द्वारा तन्त्रिकाओं पर पड़ने वाले दबाव के कारण मस्तिष्क ऊर्जा प्रवाह बाधित हो जाता है। प्रयोगों से पता चला है कि रोगों के कारण मेरुदण्ड वक्र हो जाता है, फिर वक्र मेरुदण्ड व्यक्ति को पहले की अपेक्षा अधिक रोग प्रवण बना देता है। उदाहरणार्थ–

- तीसरी और चौथी वक्ष कशेरुका स्तर पर लगी चोट से हृदय रोग और दमा हो सकता है।
- पाँचवीं से नौवीं वक्ष कशेरुकाओं में लगी चोट पाचन सम्बन्धी रोग उत्पन्न कर सकती है।
- सातवीं ग्रीवा या पाँचवीं वक्ष कशेरुकाओं की विकृति का सम्बन्ध तन्त्रिका या मानसिक अव्यवस्थाओं से होता है।

मेरुरज्जु से निकल कर तन्त्रिकायें मेरुदण्ड की कशेरुकाओं के बीच-बीच से बाहर आती हैं, अत: असंरेखित कशेरुकायें उन निकलने वाली तन्त्रिकाओं को दबाती हैं। वे दबाव या तो संवेगों के प्रवाह को अवरुद्ध कर देते हैं या तन्त्रिका मूलों को क्षुब्ध कर संवेग प्रवाह को तीव्र कर देते हैं। जो भी हो, अंगों की क्रिया अव्यवस्थित हो जाती है। आसन मेरुदण्ड को सीधा कर इन्हें रोकते हैं। आसन मेरुदण्ड की प्रत्येक कशेरुका और कार्टिलेज चक्रिका को पुन: संरेखित कर मेरुरज्जु और सम्बन्धित तन्त्रिका-चक्रों के पोषण हेतु रक्त प्रवाह तीव्र करते हैं।

आसन शरीर को अन्य अनेक तरीकों से पुन: अनुकूलित करते हैं। आसनों के अभ्यास के समय आन्तरिक अंगों की मालिश से अशुद्ध रक्त निचुड़ कर

बाहर आ जाता है एवं ऊतकों में ताजा रक्त प्रवाहित होने लगता है। आसन अन्त:स्रावी ग्रन्थियों को पुनर्सन्तुलित करते हैं, जो तन्त्रिका तन्त्र की अस्थिरता से उत्पन्न एड्रिनल ग्रन्थि की अतिसक्रियता को रोकता है। जब अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ पुन: समन्वित हो जाती हैं, तब शरीर का चयापचय भी उत्तम हो जाता है।

अन्त:स्रावी ग्रन्थियों और मेरुदण्ड के ऊपर पड़े प्रभावों के द्वारा आसन चक्रों को उद्दीप्त करते हैं और उनके पुनर्सन्तुलन में सहायक होते हैं। पूरा शरीर जीवन प्रदायी प्राण से समवेत रूप से स्पन्दित हो उठता है। प्रत्येक कोशिका की अपनी चेतना होती है, जो अन्य प्रत्येक कोशिका की चेतना के लय में पुन: वापस आ जाती है, और शरीर नया, सन्तुलित जैव लय प्राप्त करता है।

प्राणायाम

प्राण वह ओजस्वी शक्ति है, जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। यह सभी पदार्थों में है तथा मानव शरीर रचना को सक्रिय करने वाली जैव ऊर्जा है। यह बीजों में जीवन है, जो उन्हें उगाता है। यह उस वायु से घनिष्ठ रूप से सम्बधित है, जिसे हम श्वास में ग्रहण करते हैं। वही प्राण का मुख्य वाहक है। तथापि वायु केवल भौतिक यान है, जिसका उपयोग और परिचालन प्राण की निष्कर्षण प्रक्रिया में होता है। प्राण शरीर और मन को जोड़ता है, अत: इसका नियन्त्रण रक्तचाप में सहायक होता है।

प्राणायाम एक ऐसा विधि समूह है जिसका लक्ष्य जैव ऊर्जा को उद्दीप्त या सन्तुलित करना है। यह प्राण शरीर को शुद्ध करता है तथा अवरोध समाप्त कर ऊर्जा का उन्मुक्त प्रवाह प्रशस्त करता है। प्राण वह ऊर्जा है, जिसका प्रयोग मनोचिकित्सक और 'आस्था' चिकित्सक करते हैं। कहा जाता है कि किर्लियन फोटोग्राफी द्वारा इसका फोटोग्राफ लिया गया है तथा इस विषय में अत्यधिक शोध कार्य हो रहे हैं। रूस और अमेरिका में विशेष रूप से इस पर कार्य किया जा रहा है। प्रयोग यह बताते हैं कि जब व्यक्ति बीमार रहता है, तो वह एक विशेष ऊर्जा-आकृति विकीर्ण करता है, जिससे उसके स्वास्थ्य की स्थिति जानकर रोग का निदान करना सम्भव है। यह भी माना जाता है कि वैद्युतिक विसर्जन के रंग उस व्यक्ति को अनुभव हो रही भावनाओं को प्रकट करते हैं।

किर्लियन फोटोग्राफ वास्तविक प्रभामण्डल के चित्र नहीं प्रतीत होते, सम्भवत: वे वैद्युतिक क्षेत्र में प्राण-शरीर के बिम्ब होते हैं। बीमारियों, स्वास्थ्य,

मनोचिकित्सा, आसन, प्राणायाम और ध्यान के क्षेत्र में इसके प्रभाव सम्बन्धी रोचक शोध परिणाम अनेक क्षेत्रों से आ रहे हैं।

चक्र, प्रभामण्डल और प्राण-शरीर का पहला वस्तुपरक प्रमाण सम्भवत: ब्रुयेरे नामक प्रभामण्डल विशेषज्ञ की सहायता से हो रहे यू.सी.एल.ए. (अमेरिका) अध्ययन से प्राप्त हुआ। ब्रूयेरे ने विभिन्न प्रकार के मापनों को सम्मिलित किया था।

काइनेसियोलॉजिस्ट वैलेरी हण्ट और उनके सहयोगियों ने यू.सी.एल.ए. में 'इलेक्ट्रोमायोग्राफ' का प्रयोग किया, जो पेशियों की वैद्युतिक क्रिया को प्रस्तुत करने वाले स्थिर, निम्न वोल्टेज तरंगाकृति को मापता है। रोगियों की 'राल्फिग' हो रही थी, जो गहरे पेशीय तनावों और अनम्यता को भंग करने वाली जोरदार और कष्टदायक मालिश की विधि है। आठों पारम्परिक चक्र-स्थानों और एक्युपंक्चर बिन्दुओं, जैसे– भ्रूमध्य (आज्ञा चक्र), सिर का शिखर (सहस्रार चक्र), हृदय के पीछे अनाहत चक्र इत्यादि पर इलेक्ट्रोड जोड़ दिये गये। जिस समय मालिश चल रही थी द्विपथीय टेप के एक पथ पर ई.एम.जी. परिवर्तनों का अभिलेखन होता गया, जबकि साथ ही साथ ब्रूयेरे ने टेप के श्रवण पथ पर रोगियों और उनकी राल्फिग करने वालों के प्रभामण्डलीय क्षेत्र की गतिविधि, विस्तार और रंग के विवरणों को भी अंकित किया। एक अन्य ध्वनि विस्तारक यन्त्र पर रोगी अपने तात्कालिक अनुभवों और राल्फिग के समय के बिम्बों को बताते गये।

"यह शीघ्र प्रकट हो गया कि सम्वेदकों द्वारा अंकित किये गये रंगों और दोलन-दर्शी (ऑसिलोस्कोप) पर अंकित सुस्पष्ट तरंगाकृतियों में सह-सम्बन्ध है।

हण्ट ने स्वीकार किया, 'सम्भावित व्याख्या चौंका देने वाली है।' साथ ही यह भी कहा कि विकिरण शरीर के सतह से सीधे लिये गये तथा आँकड़ों का स्वाभाविक अवस्था में संख्यात्मक मापन हुआ।

फोरियर आवृत्ति विश्लेषण या सोनोग्राम से तरंगाकृति आँकड़ों ने भी समान परिणाम दिया तथा आँकड़ा एकत्र करने वाले विशेष वर्ण पट्टी से सुसंगत रूप से सह-सम्बन्धित पाया गया।"[18]

रूमानिया के वैज्ञानिकों ने शरीर स्कैनिंग की एक विधि विकसित की है, जिसे वे इलेक्ट्रोनोग्राफी कहते हैं।[19] यह किर्लियन विधि के समान ही है, परन्तु अधिक जटिल है, जिसमें श्वेत-श्याम फोटोग्राफी से लेकर रंगीन वीडियो टेप तक विभिन्न अभिलेखन साधनों का उपयोग होता है। ये एक विशिष्ट उच्च

विभव क्षेत्र द्वारा उत्पन्न विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र में परिवर्तन द्वारा उत्पन्न बिम्ब हैं। बुखारेस्ट के 'श्रमिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य केन्द्र' पर 7000 से अधिक व्यक्तियों की इलेक्ट्रोनोग्राफी हुई, तथा कैन्सर के प्रयोगात्मक अध्ययन से प्रकट हुआ कि स्वस्थ और बीमार ऊतकों में अन्तर का पता करना सम्भव है। इसमें प्रकाश की तीव्रता बदलती है, उदाहरणार्थ– शोथ के लिए अंधेरा और कैन्सर के लिए प्रकाश। इस 'प्रभा मण्डलीय निदान' का उपयोग निरोधात्मक एवं उपचारात्मक चिकित्सा में विशाल क्षेत्र का उद्घाटन करेगा। सामान्य डॉक्टरी जाँच में शरीर क्षेत्र के सूक्ष्म परिवर्तनों का पता कर, भविष्य में होने वाली बीमारियों को रोकने हेतु हम प्रतिमान, क्षेत्र और तीव्रता में अल्प असामान्यता को भी देख सकते हैं।

इन प्रयोगों के परिणामों ने योगियों के इस दावे का समर्थन ही किया है कि दृष्टि से परे स्थूल शरीर को व्यवस्थित और अनुप्राणित करते हुए एक सूक्ष्म ऊर्जा आवरण संदर्भाकृति के रूप में विद्यमान है। योग के प्रशिक्षण के द्वारा हम इस प्राणावरण के प्रति चैतन्य हो सकते हैं तथा अपने अधिक अच्छे स्वास्थ्य के लिए, भावनात्मक एवं मानसिक स्थितियों को नियन्त्रित करने हेतु तथा साथ-ही-साथ स्थूल शरीर के ऊतकों के लचीलेपन और कायान्तरण-क्षमता के निमित्त प्राण का परिचालन कर सकते हैं। आसन पेशियों की झुर्रियों को तानकर कूटस्थ तनावों को क्रमश: बिना कष्ट के और सुव्यस्थित रूप से दूर कर सकते हैं। साथ ही विश्रान्त एकाग्रता के द्वारा तन्त्रिका तन्त्र को परिचालित करने में भी सक्षम बनाते हैं। वे हमारे प्राण के स्तर को भी उन्नत करते हैं।

प्राणायाम भी शरीर में प्राण की मात्रा को बढ़ाता है और शरीर के चारों ओर ऊर्जा क्षेत्र की एकरूपता एवं निर्बाधता को बढ़ाता है। प्राणायाम हमें शरीर को प्राण से भरने में समर्थ बनाता है, जिससे प्रभामण्डल की त्रुटियाँ सुधारते हुए और शरीर के अवयवों को अनुप्राणित एवं पुनर्जीवित करते हुए त्वचा के प्रत्येक छिद्र में प्राण प्रवाहित होता है। जैसे स्पन्ज तरल का अवशोषण करता है, वैसे ही शरीर ऊर्जा का अवशोषण करता है, तथा सभी महत्त्वपूर्ण प्रक्रियाओं को शक्ति प्रदान करने हेतु इस प्राण का उपयोग करता है।

श्वास और हृदय एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। जब हम श्वसन को तेज करते हैं, हम हृदय गति को भी तेज कर देते हैं। यह निम्नलिखित प्रयोग से स्पष्ट हो जायेगा। सुविधापूर्ण स्थिति में बैठ जाइये, दाहिने हाथ की पहली

दो ऊँगलियों को बायीं कलाई की नाड़ी पर रखिये। पाँच से दस मिनटों तक श्वास लेते समय 5 स्पन्दन गिनिये और प्रश्वास में भी 5 स्पन्दन। क्रमश: नाड़ी धीमी होती प्रतीत होगी तथा आप विश्रान्ति का अनुभव करेंगे।

यह प्रयोग स्पष्ट करता है कि मन भी हृदय और श्वास से सम्बन्धित है। जब आप चिन्तित रहते हैं, श्वास और हृदय की गतियाँ बढ़ जाती हैं। जब आप विश्रान्त रहते हैं, हृदय और श्वसन गतियाँ धीमी हो जाती हैं। अत: श्वास का नियन्त्रण उच्च रक्तचाप से मुक्ति हेतु हृदय को प्रभावित कर सकता है।

बम्बई के निकट कैवल्यधाम में स्वामी कुवल्यानन्द जी ने प्रदर्शित किया है कि प्राणायाम ऊतकों में ऑक्सीजन-उपयोग बढ़ाकर चयापचय की क्रिया को विश्रान्त करता है। प्रत्येक श्वास के साथ ऑक्सीजन का उपयोग और कार्बन डाईऑक्साइड का निष्कासन भी बढ़ता है। यह प्रकट करता है कि कोशिकायें अपनी शुद्धि के साथ-साथ अपना काम अच्छी तरह कर रही हैं। समग्र रूप में ऑक्सीजन निवेश में कमी आती है, पर साथ ही उसका उपयोग करने की क्षमता बढ़ती है। रक्तचाप कम करने के निमित्त सहायक अल्प चयापचयी स्थिति यही है। शरीर जितनी ऑक्सीजन का उपयोग करता है, उसी से अपेक्षाकृत अधिक ऊर्जा निकालता है तथा ऊतकों में ऑक्सीजन पहुँचाने के प्रयास में कम ऊर्जा खर्च करता है। इस प्रकार रोग मुक्ति और सुखी जीवन-यापन हेतु पर्याप्त ऊर्जा मिल जाती है।

प्राणायाम किस प्रकार कार्य करता है?

सामान्य रूप में श्वसन क्रिया एवं हृद्वाहिका तन्त्र (हृदय, फुफ्फुस एवं रक्तवाहिकायें) स्वचालित ढंग से काम करता है, यद्यपि इच्छाशक्ति और सजगता के द्वारा चेतन रूप से उन्हें नियन्त्रित किया जा सकता है। सभी अंगों का कार्य सुचारु रूप से सम्पादित हो, इसे सुनिश्चित करने के लिए तन्त्रिका तन्त्र, हृदय और फुफ्फुस के साथ सम्बन्ध में तथा रक्तचाप एवं रक्तरसायन को नियन्त्रित करने में यह महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दाब सम्बन्धी किसी भी परिवर्तन का पता सम्वेदनशील बैरोरिसेप्टर से तथा ऑक्सीजन और कार्बन डाईऑक्साइड के स्तर का पता केमोरिसेप्टर से लगाया जा सकता है। जब भी परिवर्तन की आवश्यकता होती है, हृदय और फुफ्फुस की गति बढ़ाने या मन्द करने हेतु तथा परिसरीय प्रतिरोध को समन्जित करने हेतु अनुकम्पी या परानुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र के माध्यम से संकेत सम्प्रेषित किया जाता है।

निम्नांकित कारक श्वसन दर, हृद्स्पन्द और रक्तचाप को बढ़ाते हैं– दर्द, अप्रिय उद्दीपन, परिसरीय रक्तचाप में गिरावट, ऑक्सीजन सान्द्रता में ह्रास और तनाव।

निम्नांकित कारक श्वसन दर, हृद्स्पन्द और रक्तचाप को कम करते हैं– उष्मा, प्रिय उद्दीपन, मर्दन, गर्म स्नान, अधिकांश आसन, (प्राणायाम के द्वारा) वर्द्धित धमनीय ऑक्सीजन तथा विश्रान्ति।

अतएव हम देखते हैं कि ऑक्सीजन सान्द्रता बढ़ाकर प्राणायाम दक्षतापूर्वक रक्तचाप को अत्यन्त तीव्र गति से और दक्षतापूर्वक कम कर देता है। उज्जायी और नाड़ी शोधन जैसे कुछ प्राणायाम अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र की सक्रियता को सीधे ही विच्छेदित कर रक्तचाप घटा देते हैं।

प्राणायाम के निम्नलिखित प्रभाव होते हैं–

1. मन विश्रान्त होता है, फलस्वरूप अनुकम्पी उत्तेजना घट जाती है।
2. रक्त में ऑक्सीजन का स्तर बढ़ता है, तथा ऊतकों द्वारा ऑक्सीजन उपयोग अधिकतम हो जाता है, जिससे अधिक ऊर्जा और गहरी विश्रान्ति प्राप्त होती है।

अत: प्राणायाम केवल श्वसन व्यायाम नहीं है। प्राणायाम के द्वारा हम अपने कोशिकीय चयापचय और तन्त्रिका तन्त्र की संरचना को प्रभावित कर सकते हैं, तथा ऐसा कर ऊर्जा को तब तक कम या अधिक कर सकते हैं, जब तक वह सन्तुलन में न आ जाय। उच्च रक्तचाप के उपचार में निम्नांकित प्राणायामों का उपयोग होता है।

- उज्जायी– शारीरिक ऊर्जा प्रवाह को विश्रान्त करने के लिए।
- नाड़ी शोधन– ऊर्जा प्रवाह को सन्तुलित करने हेतु।

उज्जायी कैरोटिड साइनस पर सीधा प्रभाव डालता है, जो गले में दाब संग्राहक के रूप में अवस्थित है। जब रक्त दाब अधिक रहता है तो कैरोटिड साइनस रक्तचाप कम करने हेतु हृदय गति को मन्द कर देते हैं। उज्जायी प्राणायाम में इन संग्राहकों पर हल्का दबाव पड़ता है, जिससे विश्रान्ति के साथ-साथ रक्तचाप भी नीचे आ जाता है। गर्दन के ऊपरी भाग में अवस्थित मेरुरज्जु के मेड्यूला-आब्लोन्गाटा की ओर प्राण का प्रवाह निर्देशित होता है। यह वह क्षेत्र है, जहाँ से अनेक परानुकम्पी तन्त्रिकायें निकलती हैं। अत: परानुकम्पी तन्त्रिकाओं के उद्दीपन से स्वैच्छिक तन्त्रिका तन्त्र को पुनर्सन्तुलित किया जा सकता है, जिससे रक्तचाप में कमी को अधिक तीव्र किया जा सके।

मेड्यूला में अवस्थित तन्त्रिका केन्द्रों की, जो रक्तवाहिकाओं का अन्तर्व्यास नियन्त्रित करते हैं, विश्रान्ति के द्वारा रक्तचाप में स्थिरता प्राप्त की जा सकती है। रक्तवाहिकाओं की संकीर्णता कम हो जाती है, जिसके कारण कम दाब में भी रक्त प्रवाह चलता रहता है।

उदर या यौगिक श्वसन की जाँच जापान के धर्म और परा-मनोविज्ञान के अन्तरराष्ट्रीय संघ के निदेशक डॉ. मोटोयामा के द्वारा की गई है। उन्होंने प्रदर्शित किया है कि उदर पेशियों का संकुचन और अनुशिथिलन मानसिक और शारीरिक ओजस्विता को उच्च करता है। सीधे बैठी हुई स्थिति में गहरा उदर श्वसन करने वाले रोगियों का प्लेथसाइमोग्राफ समग्र रक्त संचरण में सुधार का संकेत करता है। उदर श्वसन के समय मस्तिष्क का ई.ई.जी. अभिलेखन भी तन्त्रिका की गहरी विश्रान्ति का संकेत देता है।

डॉ. मोटोयामा कहते हैं, 'प्रत्यक्षत: प्राणायाम हृद्-शूल की सम्भावना को भी रोकता है। कई अस्पतालों ने अपने हृदय रोगियों को, विशेषत: जिन्हें हृद्शूल है, परामर्श देना प्रारम्भ कर दिया है कि जैसे ही उन्हें दौरे का आभास हो वे उदर श्वसन शुरू कर दें। ऐसी जानकारी है कि यह अभ्यास सफल रहा है और अभी भी प्रयोग में लाया जा रहा है।'[20]

सम्मिलित विधियाँ

उच्च रक्तचाप के उपचार में योग की विधियों का सुनिश्चित स्थान है। आधुनिक विज्ञान द्वारा छोड़ दिये गये छिद्रों को भरने में ये बड़ी उपयुक्त हैं। गंभीर अवस्था में औषधि रक्तचाप को कम कर देती है तथा योग अपने दीर्घकालीन अभ्यास द्वारा इसके पुन: आक्रमण तथा जीर्ण उच्च रक्तचाप के प्राय: महाविपत्तिकारी परिणाम को रोक कर उसे समूल नष्ट कर देता है।

पर्याप्त प्रमाण है कि रक्तचाप की चिकित्सा में औषधि सेवन क्रमश: कम कर और बाद में समाप्त कर योग का उपयोग किया जा सकता है।

पतञ्जलि योग संस्थान (हैदराबाद, भारत) ने अज्ञात-हेतुक उच्च रक्तचाप के रोगियों के एक समूह पर अनेक आसनों और प्राणायामों का परीक्षण किया।[21] प्राय: सभी रोगी लवण रहित भोजन तथा उच्च रक्तचाप प्रतिरोधी औषधि ले रहे थे। ये बीमारी की मुख्य जटिलताओं को समाप्त करने में उपयोगी रहे, जिससे उनके हृदय और रक्तवाहिकायें अभी भी अच्छी तरह काम कर रही हैं।

चिकित्सीय मूल्यांकन के बाद रोगियों ने आसन-प्राणायाम प्रारम्भ किया। पूरे दिन भर थोड़ी-थोड़ी देर पर अभ्यास के पूर्व और बाद में उनका रक्तचाप अंकित किया गया। साथ ही साथ धीरे-धीरे औषधि की मात्रा भी कम की गई। कुछ रोगियों में पर्याप्त सुधार न होने पर उन्हें आयुर्वेदिक औषधि भी दी गई।

जितने रोगियों का अध्ययन किया गया, उनमें प्रथम हैं एक 55 वर्षीय पुरुष जिनकी 5 से भी अधिक वर्षों से 'रेजरपिन' द्वारा चिकित्सा चल रही थी (जो एक अत्यन्त शक्तिशाली उच्च रक्तचाप प्रतिरोधी औषधि है)। उन्होंने योगाभ्यास प्रारम्भ किया और 5 ही दिनों में उनका रक्तचाप इतना नीचे आ गया कि दवा की आवश्यकता समाप्त हो गई। इसके बाद रक्तचाप का स्तर चिकित्सा पूर्व के 230/120 मि.मी. पारा स्तर से गिरकर 130/80 मि.मी. पारा के सामान्य स्तर पर आ गया। वे घर लौट गये पर योगाभ्यास करते रहे। उनका रक्तचाप सामान्य और स्वास्थ्य लगातार अच्छा बना रहा है।

अन्य उदाहरण एक 40 वर्षीया महिला का है, जो न तो औषधि लेती थी और न लवण रहित भोजन। उनका प्रारम्भिक रक्तचाप 190/104 मि.मी. पारा था। केवल योगाभ्यास से वह घट कर 140/90 मि.मी. पारा हो गया। इसके पश्चात उन्हें आयुर्वेदिक औषधि दी गई जिससे रक्तचाप 110/70 मि.मी. पारा तक आ गया।

बम्बई (भारत) के के.ई.एम. अस्पताल में सेवारत डॉ. के.के.दाँते (बी.ए.एम.डी., एफ.आई.सी.ए. अमेरिका, एम.आर.सी.पी. लन्दन) ने उच्च रक्तचाप की चिकित्सा में शवासन और उदर श्वसन का संयुक्त प्रयोग किया। दाँते कहते हैं– 'अभी तक जो भी उच्च रक्तचाप प्रतिरोधी औषधियाँ हैं, वे किसी प्रकार से भी आदर्श नहीं हैं, उनके अनेक दुष्प्रभाव हैं। अत: रक्तचाप कम करने का अन्य कोई भी उपाय अधिक स्वागत योग्य है। इस सम्बन्ध में हम एक नया अभिगम प्रस्तुत कर रहे हैं, शवासन और योगाभ्यास द्वारा रक्तचाप चिकित्सा।'[22]

दाँते के अधिकतर रोगी 2 वर्षों तक प्रेक्षण में रहे, जबकि उनका औषधोपचार निश्चित हो रहा था। औषधि की मात्रा कम करने के किसी भी प्रयास से उनका रक्तचाप बढ़ जाता था। अधिकतर रोगियों में निम्नांकित लक्षण पाये गये– चक्कर आना, सरदर्द, हृद्-शूल (हृदय रोग का लक्षण), धड़कन बढ़ना, परिश्रम करने पर दम फूलना, अनिद्रा, चिड़चिड़ापन और घबराहट।

तब उन्हें शवासन का अभ्यास बताया गया। अभ्यास खण्ड में इस क्रिया को पूर्ण रूपेण स्पष्ट किया गया है, इसमें अपने उदर श्वसन पर

एकाग्रता के साथ विश्रान्त भाव से पीठ के बल लेटे रहना था। पूरे अभ्यास में लगभग आधा घण्टा लगता था तथा इसकी विधि भी सरल है। वस्तुत: स्वामी सत्यानन्द सरस्वती द्वारा प्रेरित आश्रम, इससे मिलती-जुलती, पर कहीं अधिक शक्तिशाली विधि, जिसे योग निद्रा कहते हैं, सिखाते हैं।

डॉ. दाँते के प्रयोग ने आधे से अधिक रोगियों में रक्तचाप और औषधि की मात्रा में निश्चित कमी होना सिद्ध कर दिया है। शेष आधे में जिनमें धमनी काठिन्य के संकेत मिले, कोई अनुक्रिया नहीं हुई, जिसका अर्थ है कि दुश्चक्र के गहरे बैठने के काफी पूर्व ही उपचार का महत्त्व है। शेष रोगियों में से काफी ने तो ठीक से अभ्यास ही नहीं किया। अन्त में जब वे सही विधि और नियमित रूप से अभ्यास के प्रति आश्वस्त हुए तो उनमें भी सुधार दिखाई पड़ा।

समग्र रूप में अधिकतर रोगियों में रोग के लक्षणों में सुधार पाया गया। सरदर्द, घबराहट, चक्कर आना, चिड़चिड़ापन और अनिद्रा प्राय: सभी में समाप्त हो गये। अन्य लक्षण भी कम हुए तथा अधिकतर रोगियों ने शवासन करने के पश्चात् सामान्य रूप से स्वस्थता का अनुभव किया।

डॉ. दाँते कहते हैं– "यह अभ्यास करने में आसान है, इसका न कोई पार्श्व प्रभाव है और न इसके लिए किसी उपकरण की आवश्यकता है। रोगियों की विशाल संख्या में रोग के लक्षणों में सुधार और स्वस्थ अनुभव करने की भावना पाई गई। यह चिकित्सा पद्धति उच्च रक्तचाप के उपचार के लिए एक नये मार्ग का उद्घाटन करती है।"[23]

इस प्रयोग से यह प्रमाणित होता है कि उच्च रक्तचाप की चिकित्सा और उच्च रक्तचाप प्रतिरोधी औषधि सेवन में कमी या समाप्ति की दिशा में योगासन और प्राणायाम पर्याप्त योगदान दे सकते हैं। यह अवश्य ध्यान रखना है कि उच्च रक्तचाप जैसे रोगों के प्रत्यक्ष प्रकटीकरण में काफी समय लगता है, क्योंकि अचेतन शक्तियाँ सम्भवत: वर्षों से अनुकम्पी तन्त्र की अति सक्रियता के लिए आवश्यक प्रवाह मार्गों के निर्माण के लिए शरीर और मस्तिष्क परिपथों को गढ़ती रही हैं। अत: यह किसी भी उपचार पद्धति के लिए सम्भव नहीं है कि वह तात्कालिक रोग मुक्ति या अन्य कोई चमत्कार उत्पन्न कर दे।

योग लक्षणों में कमी तो अतिशीघ्र ला देगा, पर मस्तिष्क की सभी कोशिकाओं को पुनर्स्थापित होने तथा शरीर को रूपान्तरित होने में समय लगता है। अन्ततोगत्वा योग तनावों एवं रोग लक्षणों से मुक्ति दिलाने में सक्षम सिद्ध होता है।

यौगिक जीवन पद्धति

जब ध्यान के अभ्यास द्वारा आप जीवन के विश्वव्यापी प्रवाह में अपनी स्थिति समझ लेते हैं, तब आपका जीवन एक नवीन अर्थ ग्रहण कर लेता है। आप अपने अन्दर अपार सुख और शान्ति का अनुभव करते हैं, और यह अनुभूति दिन भर बनी रहती है। यह आपको पूर्णता एवं 'स्व' के विषय में नया अर्थ प्रदान करती है तथा आपको अपने जीवन का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। उच्च रक्तचाप उत्पन्न करने वाली उस सम्पूर्ण जीवन पद्धति को पलट देने का यह सुनिश्चित पथ है।

आप उच्च रक्तचाप से आक्रान्त हैं, यही प्रकट करता है कि आपकी जीवन-पद्धति दोषपूर्ण है। इन दोषों को दूर करने हेतु अपने को क्रमश: बदलना होगा। आपके जीवन के आधारभूत पक्ष पहले बदलते हैं और अन्य बातें समय के साथ बदलती जाती हैं। फिर सभी चीजें यथा स्थान आ जाती हैं।

यौगिक जीवन पद्धति नैसर्गिक है, जो हमारे चतुर्दिक फैले प्राकृतिक नियमों के अनुरूप है। उत्तम स्वास्थ्य और रोग से मुक्ति के निमित्त इन नियमों का पालन आवश्यक है। इससे हम स्वयं और जगत् से ऐक्य स्थापित करते हैं। जिस पृथ्वी पर हमारा जन्म हुआ है तथा जिस धरती से हमारा शरीर निर्मित हुआ है, हम उससे पलायन नहीं कर सकते। यही कारण है कि शताब्दियों के अनुभवों पर आधारित वैज्ञानिक नियमों का प्रतिपादन योग ने किया है। आधुनिक विज्ञान ने अभी-अभी ही उसकी विशिष्टता को स्वीकारा है और आधुनिक शोधकर्त्ताओं द्वारा उसे मान्यता दी गई है।

हमारी जीवन पद्धति के दो महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं–निद्रा और आहार की आदतें। इस अध्याय में हम इन दोनों पर विवेचन करेंगे।

निद्रा प्रतिमान

'शीघ्र सोना और शीघ्र उठना व्यक्ति को स्वस्थ, समृद्ध और समझदार बनाते हैं।' उत्तम स्वास्थ्य का यह प्राचीन सूत्र है, जिसके मूल में पर्याप्त विवेक है। यह प्राचीन सूत्र है, जो आज वैज्ञानिक शोधकार्यों द्वारा प्रमाणित किया जा रहा है तथा जिसको हजारों वर्षों से योगी प्रतिपादित करते आ रहे हैं। वैज्ञानिकों ने पाया है कि निद्रा के प्रारम्भिक घण्टों में अधिक ताजगी तथा विश्राम देने वाली निद्रा आती है। जल्दी सोने से हम निद्रा के प्रत्येक घण्टे से अधिक लाभान्वित होते हैं, क्योंकि इससे हम जल्दी जगते हैं, इसके द्वारा हमें शरीर के स्वाभाविक सामंजस्य का लाभ मिलता है। इसके द्वारा हमारे जागरण की अवधि और गुणवत्ता बढ़ जाती है, क्योंकि हम अधिक स्फूर्तिवान, सक्रिय और गतिशील रहते हैं।

तनाव हमारी स्वाभाविक जैव लय को भंग कर देता है, हमारे जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति के क्षणों को अस्तव्यस्त कर देता है। इसका सही प्रमाण है कि बाजार में कितने प्रकार की निद्रा लाने वाली गोलियाँ हैं तथा कितनी बड़ी संख्या में लोग उन्हें खरीदते हैं। जब हम जगे रहते हैं, तनाव के कारण हम चिन्तित, परिक्लान्त, तथा सहज उत्तेजनशीलता का अनुभव करते हैं तथा इसी कारण अपनी स्वाभाविक अन्त:शक्ति और सामर्थ्य को सीमित कर लेते हैं। निद्रा में तनाव के कारण दु:स्वप्न और बेचैनी रहती है। तनाव ग्रस्त मनुष्य को सोना और जगना दोनों कठिन प्रतीत होता है, अत: बिस्तर छोड़ते समय भी वे थका और बुझा-बुझा अनुभव करते हैं। काफी लोग अपने डॉक्टर से शिकायत करते हैं कि वे इतनी अधिक थकान का अनुभव करते हैं कि वे न अच्छी तरह काम कर सकते हैं और न जीवन का आनन्द ही ले सकते हैं।

निद्रा की समस्या का उपचार करने वाली गोलियाँ न केवल निष्प्रभावी हैं, वरन् हानिकर भी हैं, वे समस्याओं को उलझाकर उच्च रक्तचाप उत्पन्न करती हैं। प्रशान्तक औषधियाँ निद्रा की स्वप्नावस्था को, जो तनाव मुक्ति के लिए महत्त्वपूर्ण है, नष्ट कर देती हैं। इसका फल होता है दिन में वर्द्धित थकान, रात्रि में अधिक तनाव, फिर और अधिक गोलियों की आवश्यकता। एक बार प्रारम्भ कर देने के बाद यदि गोलियों का उपयोग हम बन्द करते हैं तो निरुद्ध स्वप्न रचना तन्त्र अति सक्रिय हो जाता है, जिससे दु:स्वप्न आते हैं, जो रोगी को भयाक्रान्त कर पुन: गोलियों की ओर धकेल देते हैं। फिर तो दुश्चक्र चल पड़ता है।

नींद की चार मूल अवस्थायें हैं, जो चेतना को क्रमश: गहन कर देती हैं। निद्रा काल में पाँच या छ: अवसर आते हैं, जब हम प्रगाढ़ अवस्था से चेतना की हल्की अवस्था में आते हैं, जिसे द्रुत-नेत्र गति निद्रा कहते हैं। इस अवधि में शरीर की पेशियाँ यद्यपि विश्रान्त रहती हैं, श्वसन अनियमित हो जाता है, आँख की पलकें फड़कने लगती हैं। यदि इस अवस्था में व्यक्ति को जगाया जाय, तो वह कहेगा कि वह स्वप्न देख रहा था। यदि उसकी ई.ई.जी. लिया जाय, तो उसकी रेखाकृति जाग्रत अवस्था में ली गई रेखाकृति के ही समान होगी। प्रयोगों द्वारा प्रमाणित किया गया है कि यदि व्यक्तियों की स्वप्न निद्रा भंग कर दी जाय, तो वे दिनभर उत्तेजित रहेंगे, फिर उन्हें सोने दिया जाय, तो उनमें अधिकाधिक द्रुत-नेत्र-गति अवस्था घटित होगी और उनकी उत्तेजनशीलता शान्त हो जायेगी। अत: ऐसा प्रतीत होता है कि भावनात्मक स्वास्थ्य हेतु स्वप्न निद्रा आवश्यक है। इस प्रकार हम दीर्घकाल तक निद्रा की गोलियाँ लेने के प्रतिकूल प्रभाव की कल्पना कर सकते हैं, जो स्वप्न का दमन करती हैं।

अनादि काल से प्रात: शीघ्र जगने की अनुशंसा की गई है। प्रात: 4 बजे से 6 बजे तक का समय योगियों के अनुसार ब्रह्ममुहूर्त्त है, जो आध्यात्मिक साधना हेतु सर्वोत्तम समय है। इस समय मानसिक और आध्यात्मिक ऊर्जायें अपने शीर्ष पर होती हैं। शरीर और मन अपने दिन का दक्षता पूर्वक प्रारम्भ करने हेतु तत्पर रहते हैं। इस समय के बाद हम जितनी अधिक देर तक सोयेंगे, जगना उतना ही कठिन होता जायेगा।

स्टैनफोर्ड मेडिकल स्कूल के डॉ. बेरी जैकब्स द्वारा चूहों पर किये गये प्रयोग में देखा गया कि पीनियल ग्रन्थि से स्रावित होने वाला हार्मोन सेरोटोनिन दिन में स्वप्न को बाधित करता है। प्रात: 6 बजे के आस-पास शरीर में सेरोटोनिन की सान्द्रता अधिकतम रहती है, जो इस बात का संकेत है कि शरीर उस समय सक्रिय जागृति के लिए तैयार है।

मेलाटोनिन दूसरा हार्मोन है, जो पीनियल ग्रन्थि द्वारा रात में स्त्रावित होता है। समझा जाता है कि यह यौन ऊर्जा को निरुद्ध करता है तथा इसका स्राव प्रात: 4 बजे रुक जाता है। अत: इसी समय के बाद ओजस्वी ऊर्जा यौन इच्छा को शक्ति देती है तथा अन्य गतिविधियों को सक्रिय करती है।

इन्हीं चक्रों में अन्तर्ग्रन्थित है ए.सी.टी.एच. का पिट्युटरी ग्रन्थि से उत्पादन। यह संदेशवाहक हार्मोन है, जो एड्रिनल ग्रन्थि को कार्टिसोन स्राव

हेतु उद्दीप्त करता है। यह हार्मोन शरीर में उपयोग हेतु तथा दबाव के प्रति अनुकूलन में सहायता देने हेतु शर्करा और ऊर्जा को मुक्त करता है। इस ए.सी.टी.एच. का अधिकतम स्राव प्रात: 4 बजे ही होता है। इस समय जगने से हम ऊर्जा के शीर्ष से दिन का प्रारम्भ करते हैं, जिससे शरीर के संसाधनों का भी उत्तम उपयोग होता है, जब वे अपने शिखर पर हों। इस प्रकार ऊर्जा से पूर्ण होने के कारण हमारे सभी काम भी अधिक दक्षतापूर्ण होते हैं।

यदि हम प्रात: 4 बजे उठ जायें, तो इस ऊर्जा से मानसिक लाभ होगा और योगाभ्यास द्वारा आध्यात्मिक प्रगति के लिए इसका अधिकतम उपयोग कर सकते हैं। यौन ऊर्जा को ओजस् कहे जाने वाली जीवनदायी शक्ति में हम रूपान्तरित कर सकते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि हम ब्रह्मचारी बन जायें या यौन क्रिया के प्रति हमें अरुचि हो जाय। होना ठीक इसका उल्टा है। यौन क्रिया सन्तुलित हो जाती है तथा शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य के सभी क्षेत्रों में प्रयुक्त होती है। यह तन्त्र विज्ञान का एक अंग है। यह एक प्राचीन पद्धति है, जहाँ कोई दमन नहीं है, प्रत्येक वस्तु का सार्थक उपयोग होता है। प्रात:काल उठने और योगाभ्यास करने से हम न केवल ऊर्जा का संचय करते हैं, वरन् हम इसकी वृद्धि भी कर सकते हैं, जिससे जीवन अधिक पुलकित और आनन्दित हो जाय। प्रात: जागरण से अनिद्रा दूर होती है, क्योंकि तब जल्दी सोना, आसान हो जाता है। हमें सुखद विश्रान्ति मिलती है तथा हम अनुभव करते हैं कि दिन अच्छा रहा। यह एक सुखद सन्तोष की भावना उत्पन्न करता है और निद्रा अपना स्वाभाविक एवं आरामदायक कार्य करती है।

यदि हम ब्रह्ममुहूर्त्त के महत्त्व की उपेक्षा कर दें, तो हम दबाव और उच्च रक्तचाप के प्रति अधिक प्रवण हो जायेंगे। प्रात: जल्दी जगने से हम उच्च रक्तचाप दूर करने की प्रक्रिया में सहायक होते हैं और अपनी स्वास्थ्य वृद्धि करते हैं। सबेरे जगने को अपने जीवन का अंग बना लें तथा जीवन को पुन: प्राकृतिक लय एवं ब्रह्माण्डीय चक्रों से समस्वरित कर लें।

आहार की आदतें

उच्च रक्तचाप के उपचार में यह एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। कुछ लोग सोचते हैं कि दोषपूर्ण आहार उच्च रक्तचाप का प्रमुख कारण है। यदि आप यह विचार करें कि एक औसत मनुष्य अपने पेट में कितना अन्न भरता है तथा जितना वह

खाता है, उसमें से कितना उसके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, तो आपको इस पर आश्चर्य नहीं होगा कि हमारे समाज में इतना अधिक उच्च रक्तचाप और कब्ज क्यों है। केवल आहार में नमक की मात्रा भी घटाने से रक्तचाप कम हो जायेगा।

उच्च रक्तचाप के सभी रोगियों को नमक का सेवन न्यूनतम कर देना चाहिए। इसका अर्थ हुआ भोजन पकाते समय नमक न डालें तथा भोजन बन जाने पर उसमें ऊपर से भी नमक न मिलायें। जब आप रक्तचाप कम करने का प्रयास कर रहे हों, उस समय के लिए यह अस्थायी कदम है, जब सामान्य रक्तचाप हो जाय, तो आप पुन: क्रमश: नमक की मात्रा बढ़ा सकते हैं, पर केवल मर्यादित मात्रा में। वस्तुत: धीरे-धीरे नमक रहित भोजन भी उतना ही रुचिकर हो जाता है जितना नमक सहित। आखिर अधिकतर मनुष्य तो केवल आदतवश नमक मिलाते हैं। ऐसे मसाले और जड़ी-बूटियाँ पर्याप्त हैं, जो इसको प्रतिस्थापित कर सकती हैं।

इस संसार में घूमने-फिरने के लिए मोटापा शरीर के लिए अत्यन्त असुविधाजनक है। अत: इसे कम करना चाहिए। शरीर का अधिक वजन, शरीर के अंगों पर अतिरिक्त कार्यभार डालता है तथा शरीर के सभी संस्थानों पर भी भार डालता है। जो व्यक्ति स्थूलकाय हैं, वे अपनी इस स्थिति के आदी हो सकते हैं, पर शरीर द्वारा नियमित रूप से किया गया यह अतिरिक्त कार्य उनकी जीवन अवधि एवं जीवन की गुणवत्ता को कम कर देता है। जब यही मोटापा उच्च रक्तचाप के साथ जुड़ जाता है तो स्थिति अधिक भयावह हो जाती है।

यह तो प्रमाणित है कि आहार सम्बन्धी उचित आदतों से व्यक्ति की जीवन-अवधि को बढ़ाना सम्भव है। कुछ ऐसे भी मनुष्य हैं, जैसे– 'हुँजा', जिनकी जीवन-अवधि अन्य लोगों की अपेक्षा काफी अधिक है। सामान्य रूप से ऐसे मनुष्य प्रकृति के साथ तालमेल में रहते हैं तथा उनका आहार भी प्राकृतिक होता है।

लन्दन विश्वविद्यालय के एक प्रोफेसर डा. डेविड डेविस ने इक्वाडोर की विलकाम्बा घाटी की 1973 में की गई अपनी यात्रा के बाद ऐसी ही रिपोर्ट दी है। उन्होंने लिखा है, 'उनका आहार मुख्य रूप से शाकाहारी है। नारंगी, केला, सेव तथा पर्याप्त मात्रा में सब्जियाँ। वे प्रति सप्ताह एक औंस (लगभग 30 ग्राम) माँस खाते हैं तथा जैव वसा तो प्राय: नहीं ही खाते।'[24] अपने खेत में एक किसान 147 वर्ष की अवस्था में भी उत्साहपूर्वक काम करता पाया गया था।

'द नेशनल जिओग्राफिक' (जनवरी 1973) में रिपोर्ट प्रकाशित हुई है– "क्विटो के डॉ. गिलेरमो वेला ने विलकाम्बा के निवासियों में आश्चर्यजनक रूप से कैलोरीज की कम खपत पायी। उनके औसत आहार में 1200 कैलोरी ही होती है। दैनिक आहार में प्रोटीन 35 से 38 ग्राम, वसा 12 से 19 ग्राम और कार्बोहाइड्रेट 200 से 260 ग्राम होता है। प्रोटीन और वसा तो प्रधानत: वनस्पतियों से ही प्राप्त कर लेते हैं। केवल कुछ ग्राम प्रोटीन पशु उत्पादों से प्राप्त करते हैं। औसत पाश्चात्य देशवासियों के 2500 से 5000 कैलोरी दैनिक भोजन से इसकी तुलना करें। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि डॉ. वेला ने विलकाम्बा में वृद्धों में भी मोटापा कहीं नहीं पाया और यह हुँजा लोगों में भी नहीं पाया जाता। वहाँ कुपोषण के भी चिन्ह नहीं मिले।"

यह आहार बहुत कुछ आश्रम के आहार से मिलता-जुलता है। आश्रम के स्वामीगण लगभग 1500 कैलोरी वाला सामान्य परन्तु पूर्ण आहार लेकर प्रतिदिन 3 बजे प्रात: से 9 बजे रात्रि तक कर्मयोग और साधना में लगे रहते हैं। उनका प्राय: 16 से 18 घण्टा का औसत कार्य-दिवस हो जाता है। आश्रम का भोजन है– चावल, दाल, सब्जी, चपाती तथा मौसम के अनुसार फल या सलाद। इसी से ही आश्रम के प्रत्येक व्यक्ति का स्वास्थ्य अत्युत्तम है।

अन्तरराष्ट्रीय योग मित्र मण्डल शोध समन्वय केन्द्र, बिहार योग विद्यालय में परीक्षण के तौर पर आश्रम के सभी अन्तेवासियों का रक्तचाप मापा गया। आँकड़े अभी प्राथमिक ही हैं तथा उनका अभी पूर्ण यथार्थ परीक्षण करना बाकी है, तथापि वे उचित आहार, योग और प्राकृतिक ढंग के जीवन-यापन के लाभों को तो प्रकट करते ही हैं।

आश्रमवासी तीन वर्गों में विभक्त किये गये–

वर्ग 1: एक वर्ष से अधिक समय से आश्रम में रहने वाले स्वामीगण।

वर्ग 2: एक वर्ष से कम समय से आश्रम में रहने वाले स्वामीगण।

वर्ग 3: आश्रम के अतिथि, जिनमें से अधिकतर यहाँ आने के पूर्व पाश्चात्य माँसाहार युक्त भोजन लेते थे।

उनका रक्तचाप क्रमश: निम्नवत् था–

वर्ग 1: 100/50 मि.मी. पारा

वर्ग 2: 110/60 मि.मी. पारा

वर्ग 3: 120/80 मि.मी. पारा

वर्ग 1 के व्यक्तियों में, जो समान परिवेश में रहते हैं, रक्तचाप इतना कम है कि यह तथ्य सूचित करता है कि उनकी अनुकम्पी क्रिया बहुत कम है। ऐसा इसलिए है कि योग मार्ग का जीवन, सम्भवत: मनोवृत्तियों, क्रियाशीलनों और भोजन की आदतों के सन्दर्भ में प्रकृति से अधिक सामन्जस्य रखता है।

योग के सिद्धान्तों के अनुसार पाचन प्रणाली का नियन्त्रण मणिपुर चक्र द्वारा होता है, जो जठराग्नि एवं प्राणोत्पादक भी है। यदि हम गरिष्ठ, अधपका, गुण रहित भोजन लेते हैं, तो हम अपने शरीर में प्राण की मात्रा कम कर देते हैं। इस प्रकार पूरी संरचना निष्प्राण होती जाती है और रोगों के प्रति हमारी प्रतिरोधी क्षमता कम हो जाती है।

निम्न गुणवत्ता वाला आहार स्वादिष्ट भी नहीं होता। कृत्रिम रूप से निर्मित और संरक्षित आहार या बिना प्रेम के और असावधानी से बनाया गया आहार उतना स्वादिष्ट नहीं होता, जितना साधारण आहार, जो विश्रान्त और मनोनुकूल परिवेश में बनाया एवं खाया जाता है। हाथों के द्वारा, जो हृदय की अभिव्यक्ति के साधन हैं, भोजन में प्राण का प्रवेश होता है। हमारी आन्तरिक भावनाओं को बाह्य जगत में प्रकट करने के साधन हैं हाथ। उदार व्यक्ति के हाथ से प्राण सम्प्रेषित होता है तथा स्वार्थी या अन्य नकारात्मक भाव वाले व्यक्ति द्वारा भोजन पकाने से प्राण अवशोषित हो जाते हैं।

अपने आहार के प्रति सावधान रहने से तथा अपने जीवन के इस क्षेत्र में एकरूपता रखने से यह निश्चित है कि हम प्राण और स्वास्थ्य में वृद्धि करते हैं। हमारे जीवन का एक और क्षेत्र स्वस्थ एवं सुव्यवस्थित होता है। हम स्वयं को उच्च रक्तचाप के दलदल और अन्धेरे से क्रमश: सुन्दर स्वास्थ्य के प्रकाश में ले जाते हैं। हमारे जीवन के अन्य सभी क्षेत्र भी स्वाभाविक रूप से उचित परिप्रेक्ष्य में आ जाते हैं तथा हमारा स्वास्थ्य उत्तम हो जाता है।

विश्रान्ति और सजगता

प्रत्येक यौगिक अभ्यास मानव अस्तित्व के इन दो सरल और स्पष्ट पक्षों पर आधारित होता है– विश्रान्ति और सजगता। अभ्यास कितने ही उच्च या कठिन हों, उनके मूल में ये दोनों तत्त्व रहते हैं। उच्च रक्तचाप के उपचार में सजग विश्रान्ति की कुन्जी है– विश्रान्त सजगता।

विश्रान्त मन एक सजग मन होता है, जो उच्च रक्तचाप की समस्या से निपटने को सदा तत्पर रहता है। इस अवस्था में हम–

- नई समस्याओं और विक्षोभों का निरोध कर सकते हैं
- ज्ञात चेतन समस्याओं को नि:शेष कर सकते हैं
- अचेतन समस्याओं का पता कर उन्हें समाप्त कर सकते हैं।

आप चेतन मन में जितनी अधिक खोज करेंगे, उतनी ही अधिक सरलता से अवचेतन विक्षोभों को सतह पर ला सकेंगे। यही मनोग्रन्थियाँ मन की गहराइयों में हैं और अवसाद, भय आदि के रूप में, जिनका कारण आपको पता नहीं होता, अपनी उपस्थिति का बोध कराती हैं।

ये तीनों प्रक्रियायें एक साथ ही घटित होती हैं। यद्यपि इसकी अनेक तकनीकें हैं, पर वे सभी सजग विश्रान्ति पर आधारित हैं। मानसिक समस्याओं को तभी समाप्त किया जा सकता है, जब मन विश्रान्त हो। यह एक चक्र प्रारम्भ करता है, विश्रान्ति-मानसिक समस्याओं का निराकरण-पुन: अधिक गहन विश्रान्ति। स्वयं अनुभव करने से ही आप इसे और अच्छी तरह समझेंगे।

जब आपने मन की विश्रान्त अवस्था उत्पन्न कर ली, आपको अपने शरीर के प्रत्येक अवयव पर सजग नियन्त्रण प्राप्त हो गया तथा आप उन सभी स्थानों से तनाव को विदा कर सकते हैं। आपको मात्र थोड़ी-सी योगनिद्रा की आवश्यकता है, या ध्यान की किसी अन्य विधि की जो सम्पूर्ण शरीर को

विश्रान्त कर दे। जब आप यह कर सकेंगे, तब आप अपनी रक्तवाहिकाओं को सजगतापूर्वक विश्रान्त कर सकेंगे, जिससे वे आपके इच्छानुसार विस्फारित और संकुचित हो सकेंगी। विश्रान्ति की क्षमता रक्तचाप को कम करती है।

योग की विधियाँ आपको अन्तर्मुखी बनाती हैं तथा स्थूल शरीर से आपका सम्बन्द्ध विच्छेद कर शुद्ध सजगता की अनुभूति कराती हैं। यह मन और मस्तिष्क के प्रमस्तिष्क-प्रान्तस्था की गतिविधियों को शान्त कर देती है, जो धीरे-धीरे समग्र शरीर को शान्त करती है। यह चिन्ता-प्रक्रिया को रोक देती है, जिससे तन्त्रिका-तन्त्र के उच्चतर बौद्धिक क्षेत्र को निम्न अनुभूति क्षेत्र से समन्वित होने में सहायता मिलती है। तब सहजानुभूत विवेक तत्काल और स्वत: उत्पन्न होता है।

मस्तिष्क-तरंग प्रदर्शन

मस्तिष्क के कार्यों में समन्वय की बात उन शोधकर्त्ताओं ने बताई है, जिन्होंने ध्यान करने वालों के साथ प्रयोग किये हैं और मस्तिष्क तरंगों का मापन कर अपने निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। मुख्य मस्तिष्क-तरंगें चार प्रकार की होती हैं।

1. *बीटा तरंगें* प्रतिदिन हमारी जाग्रत अवस्था में प्रबल रहने वाला प्रतिमान है। ये बहिर्मुखता और बाह्य क्रियाकलाप से सम्बन्धित हैं। जब हमारा मस्तिष्क विवेकपूर्ण चिन्तन में लगा रहता है, हम तनाव ग्रस्त, चिन्तित या सामान्य मनस्थिति में रहते हैं, तब बीटा तरंगें हमारे मस्तिष्क तथा ई.ई.जी. यन्त्र में प्रबल रहती हैं। ये तरंगे छोटी होती है, तथा प्रति सेकेण्ड 13 आवर्त्तनों से भी अधिक तीव्रता से उत्पन्न होती हैं।
2. *अल्फा तरंगें* हल्के ध्यान की स्थिति में उत्सर्जित होती हैं। ये विश्रान्त-सजगता, निष्क्रियता और अनुत्तेजित, तनाव मुक्त अवस्था से सम्बन्धित हैं। ये सर्जनात्मक स्थितियों से भी सम्बन्धित हैं। इसलिए इन अवधियों में ये तरंगाकृतियाँ प्रबल होती हैं। अल्फा तरंगें बीटा तरंगों की अपेक्षा थोड़ी बड़ी होती हैं तथा प्रति सेकेण्ड 8 से 13 बार उत्सर्जित होती है।
3. *थीटा तरंगें* स्वप्नावस्था में विकिरित होती हैं तथा अवचेतन मन से सम्बन्धित हैं। थीटा तरंगें गहन ध्यान, तीव्र रचनात्मकता, भाव समाधि, तथा ई.एस.पी. के प्रति ग्रहणशीलता की स्थिति में प्रबल रहती हैं। बच्चे जाग्रत अवस्था में भी ये तरंगें विकीर्ण कर सकते हैं, यद्यपि वयस्कों में यह विरल है। इसकी आवृत्ति का परास प्रति सेकेण्ड 4 से 7 आवर्त्तन है।

4. *डेल्टा तरंगें* दीर्घ होती हैं तथा प्रति सेकेण्ड 4 तरंग से भी अधिक धीमी होती हैं। ये स्वप्नरहित निद्रा में प्रबल रहती हैं। परन्तु ध्यान की प्रगाढ़तम अवस्था में भी पायी गयी हैं।

योगाभ्यास द्वारा मस्तिष्क स्वस्थ और सुसमन्वित अवस्था में क्रमशः पुनः व्यवस्थित हो जाता है। कुछ समय पश्चात् मस्तिष्क तरंगों में अल्फा और थीटा तरंगों की संख्या बढ़ जाती है, जिसका तात्पर्य होता है कि तन्त्रिका तन्त्र अधिक शक्तिपूर्ण एवं मन्द गति से स्पन्दित हो रहा है। यह अवस्था शान्ति, रचनात्मकता, वर्द्धित ग्रहणशीलता और आनन्द से सम्बन्धित है। योग स्वैच्छिक तंत्रिका-तन्त्र को प्रशमित करता है और इस प्रकार वर्द्धित रक्तचाप को समाप्त करता है।

योग के द्वारा बाहर से प्राप्त होने वाले उत्तेजक सम्वेदी निवेशों के प्रति मस्तिष्क और मन विश्रान्त रहते हैं तथा इस प्रकार हम अपनी अन्तरात्मा के प्रति चैतन्य हो जाते हैं।

जैव पुनर्निवेश प्रदर्शन

जैव पुनर्निवेश एक प्रशिक्षण पद्धति है, जो यह जानने हेतु कि प्रयोगाधीन व्यक्ति कब मुख्य रूप से अल्फा तरंगें उत्पन्न करता है, ई.ई.जी. यन्त्र का उपयोग करती है, और इस प्रकार मन की विश्रान्त स्थिति को पहचानने और संयत करने में मदद करती है। शरीर में हो रहे परिवर्तनों का पता करने हेतु इस प्राविधि में इलेक्ट्रॉनिक यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। जब वांछित परिवर्तन उपलब्ध हो जाता है, तब यन्त्र क्षणिक प्रकाश या ध्वनि संकेत द्वारा इसे सूचित करता है। इस प्रकार यह इस सूचना का पुनर्निवेश करता है कि व्यक्ति ने सही ढंग से अपने शरीर को प्रभावित कर लिया है। उसके लिए सामान्य उेश्य होता है कि अपने शरीर की क्रियाओं पर चैतन्य नियन्त्रण प्राप्त करना, जो सामान्यतः स्वैच्छिक नहीं होती, जैसे– स्थानीय त्वचा तापमान, रक्तचाप या जैसा इस मामले में है– मस्तिष्क तरंगें।

पूर्व में जिन प्रक्रियाओं को स्वचालित और इच्छाशक्ति से परे समझा जाता था, उन्हें भी कैसे निर्देशित किया जाय यही सीखने हेतु जैव पुनर्निवेश में हम लोग विश्रान्त सजगता (अल्फा स्थिति) को प्रवृत्त करते हैं। ऐसा करने के लिए कल्पना (मानसदर्शन) और मन की एकाग्रता की विधियों को अधिक महत्त्व दिया जाता है। योग के द्वारा इन्हीं विधियों को विकसित करते हैं, तथा शरीर और मन पर नियन्त्रण लाते हैं, पर बिना यन्त्र की सहायता के।

जैव पुनर्निवेश विधियों के उदाहरण

उच्च रक्तचाप तथा हृदय रोग के उपचार के लिए विश्रान्ति और सजगता की विधियों के साथ, शरीर की अनैच्छिक क्रियाओं को संचालित करने की इस विधि का सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है।

हार्वर्ड मेडिकल स्कूल के डॉ. डेविड शैपिरो द्वारा एक अध्ययन में एक रोगी को एक ध्वनि और प्रकाश नियन्त्रित कक्ष में रखा गया।[25] (रक्तचाप मापक यन्त्र) स्फाइग्मोमेनोमीटर की कड़ी उसके ऊर्ध्व बाहु में लगा दी गई तथा उस यन्त्र की कड़ी में केहुनी के पास की नाड़ी स्पन्द की ध्वनि को विस्तार देने हेतु एक माइक्रोफोन लगा दिया गया। ध्वनि रोगी को अपने रक्तचाप के प्रति सजग बनाती है और वह उसे समायोजित करना सीखता है। टेनेसी विश्वविद्यालय के जैस्पर ब्रेनर द्वारा एक प्रयोग में यही निष्कर्ष पुनः प्राप्त हुआ।[26]

सॉनफ्रान्सिस्को के वेटरेन्स एडमिनिस्ट्रेशन अस्पताल की एमी क्रिस्टी और जान. विटले ने रिपोर्ट दी है कि अस्थिर उच्च रक्तचाप के दो रोगियों में जैव पुनर्निवेश प्रशिक्षण सफल रहा है।[27]

हार्वर्ड के डॉ. हरबर्ट बेन्सन ने जैव पुनर्निवेश द्वारा पाँच रोगियों का रक्तचाप कम करने में सहायता की है। वे कहते हैं– "तथापि इस प्रशिक्षण का व्यापक परिणाम प्राप्त करने हेतु तथा घर एवं कार्यालय में रक्तचाप कम रखने हेतु व्यवहार में संशोधन और जीवन-पद्धति के पुनर्मूल्यांकन तथा साथ ही साथ मनोवैज्ञानिक उपचार की आवश्यकता है।"[28]

योग तथा स्वस्थ प्राकृतिक रूप से जीवन-यापन, जीवन-शैली में संशोधन लाते हैं। जब हम आसन, प्राणायाम और ध्यान पर प्रयोगों के परिणामों पर विचार करते हैं तब जैव पुनर्निवेश तथा योग संयोजन अधिक उत्साहवर्द्धक प्रतीत होता है। ऐसे अभ्यासों का संयोजन विधियों की एक शक्तिशाली श्रृंखला ही देता है, जिसका ध्यानपूर्वक देखरेख में प्रयोग किया जाय तो रोगियों के लक्षणों एवं कष्टों को ही नहीं, वरन् रोग को जड़मूल से भी निकाल फेंकने की पर्याप्त विधियाँ चिकित्सक को उपलब्ध हो जायेंगी।

इस क्षेत्र में शोधकर्ताओं की संख्या बढ़ रही है तथा यह तथ्य कि इतने अधिक अग्रगण्य वैज्ञानिक गम्भीरतापूर्वक इस प्रक्रिया पर शोध कर रहे हैं, प्रकट करता है कि इस उपचार विधि में कुछ महत्त्वपूर्ण अवश्य है। हमने यह

तथ्य स्थापित कर दिया है कि केवल मानसिक अनुशासन से ही व्यक्ति अपने रक्तचाप और हृदयस्पन्द का नियमन कर सकता है। यह उस दिन की ओर संकेत करता है जब अनेकानेक उपचार कार्यक्रमों में जैव पुनर्निवेश अनिवार्य अंग के रूप में प्रयुक्त होने लगेगा।

संयुक्त राज्य अमेरिका के बाल्टीमोर सिटी अस्पताल में डॉ. इंग्ले के एक अध्ययन में हृदय रोग के उपचार के लिए जैव पुनर्निवेश का उपयोग हो चुका है।[29] यथा–

1. *उद्देश्य*– इसे सुनिश्चित करना कि मानसिक एकाग्रता और अनुशासन द्वारा आठ रोगी क्या अपने हृत्स्पन्द की संकटपूर्ण अनियमितता का नियन्त्रण कर सकेंगे? इसमें जिस अनियमितता का प्रयोग हो रहा है वह है– 'कालपूर्व निलय संकुंचन', जो आपात मृत्यु की अधिकाधिक सम्भावनाओं से जुड़ा है।
2. *विधि*– एक खिड़की रहित अंधेरी प्रयोगशाला में कार्डियोटैकोमीटर से जुड़ा रोगी आराम से अस्पताल के बिस्तर पर पड़ा है। यह यन्त्र हृत्स्पन्द को विद्युत संकेत में परिवर्तित कर रहा है। इन संकेतों को एक कम्प्यूटर में डालकर लाल, पीले, और हरे रंग के प्रकाश में विश्लेषित और रूपान्तरित किया जा रहा है। ये प्रकाश रोगी के पायतने लगे एक बोर्ड पर दिखाई पड़ते हैं। रोगी को अपने हृदय की धड़कन को बढ़ाने के लिये कहा गया। पुन: जब वह लाल प्रकाश देखे तब धड़कन मन्द करे, तथा जब हरा प्रकाश देखे तब तेज करे। हृत्स्पन्द को निरापद, स्थिर लय में रखना ही उद्देश्य था, जो पीले प्रकाश से प्रकट होता था।
3. *परिणाम*– जैव पुनर्निवेश संकेतों द्वारा रोगी पहले हृत्स्पन्द को तेज करना सीखता है, फिर मन्द करना और अन्तत: सामान्य की संकीर्ण सीमाओं में रखना।
4. *निष्कर्ष*– मनुष्य केवल अपनी मन:शक्ति द्वारा सम्भावित संकटपूर्ण हृद-अतालता को नियन्त्रित और नियमित करना सीख सकता है।

न्यूयार्क टाइम मैगजिन के लिए जैव पुनर्निवेश सम्बन्धी शोध की समीक्षा करते हुए गे ल्यूस और एरिक पेपर ने लिखा था– "प्रशिक्षण प्रारम्भ में ऊबाऊ हो सकता है और अधिक समय भी लग सकता है, परन्तु औषधियों के प्रतिकूल रोगी को अपने शरीर नियन्त्रण का भान अवश्य देता है। डॉ. इंग्ले के समूह की महिलाओं में एक ने उल्लासपूर्वक कहा कि लक्षणों का सामना

करने की नई शक्ति के कारण उसे 'चक्कर का दौरा' या 'हृदय का जोर से धड़कना' अब नहीं होता है।"[30]

इस अध्ययन का रोमांचक भाग तो तब उपस्थित होता है, जब यन्त्र प्रशिक्षक से पृथक् कर रोगी को स्वयं अपनी व्यवस्था करने के लिए घर लौटाया जाता है। पर्याप्त प्रशिक्षण के बाद कृत्रिम पुनर्निवेश की आवश्यकता के बिना ही वह अपने हृत्स्पन्द को नियमित कर सकता है। आठ रोगियों में से एक ने दो वर्षों तक अपने हृत्स्पन्द दर को सामान्य बनाये रखा। उसने बताया कि वह किसी भी समय अपने अनियमित हृत्स्पन्द का पता लगा लेती है और उसे सुधार लेती है। अन्य तीन के भी प्रयोगशाला के बाहर वैसे ही परिणाम मिले। अधिकतर रोगी यह व्याख्या नहीं कर पाये कि किस प्रकार वे अपने हृदय के नियन्त्रण में निपुण हो गये हैं, यद्यपि एक व्यक्ति कल्पना करता है कि वह अपने हृदय को बायीं तरफ धक्का देता है। एक महिला कल्पना करती है कि वह इसे आगे-पीछे हिलाती है। रोग मुक्ति का महत्त्वपूर्ण अंग है मानसदर्शन और यह योगाभ्यास से और प्रगाढ़ होता है।

मन और शरीर के सन्दर्भ में योग की विधियों का उपयोग नियन्त्रण सुनिश्चित करता है। जैव पुनर्निवेश के साथ ध्यान की विधियों का उपयोग करने से मन के प्रत्यक्ष अनुभव के द्वारा अधिक विश्रान्ति और विवेक प्राप्त होता है। ध्यान हमें सिखाता है कि मन क्या है? एकाग्रता के अभ्यास से रोगी स्वैच्छिक और स्वसंचालित तन्त्रिका तन्त्र के मध्य अन्तर्सम्बन्ध का अनुभव करने में सक्षम हो जाता है। इस प्रकार शारीरिक प्रक्रियाओं का नियन्त्रण और सन्तुलन प्राप्त होता है। योग और जैव पुनर्निवेश का संयोग, उच्च रक्तचाप कम करने के साथ ही हृदय और रक्त संचार की अन्य प्रकार की बीमारियों को भी कम करने में शक्तिशाली अभ्यास सिद्ध होगा।

हम सुझावों द्वारा मस्तिष्क तरंगों को नियन्त्रित करना सीखते हैं। इन्द्रियों और गहरे अन्तर्ज्ञान के द्वारा अपने (आन्तरिक एवं बाह्य) परिवेश से प्राप्त पुनर्निवेश के माध्यम से हम मस्तिष्क का भी नियन्त्रण सीखते हैं। इलेक्ट्रॉनिक जैव पुनर्निवेश यन्त्र केवल हमारे 2000 या उससे भी अधिक कायिक-जैव पुनर्निवेशों को, जो पूर्व से ही हमारे शरीर में हैं, बढ़ा देता है। अचेतन आन्तरिक स्थितियाँ बाह्य सजगता में लायी जाती हैं।

जैव पुनर्निवेश संकेतों के द्वारा मनोदैहिक अव्यवस्थाओं से रोगमुक्ति तेज करना सम्भव है। जब हम अपने शरीर के प्रति सजग रहते हैं, तो हम उसकी

क्रियाओं को नियन्त्रित कर सकते हैं, जैसे– अनुकम्पी प्रक्रिया को कम करना तथा बाद में परिसरीय प्रतिरोध को कम करना, जो रक्तचाप को कम करता है। मस्तिष्क की अल्फा स्थिति का विस्तार किया जा सकता है, जिससे हम आसक्तियों की उलझनों से मुक्त मन की विश्रान्त और रचनात्मक अवस्था में जीवन-यापन कर सकें।

डॉ. सी.एच. पटेल ने उच्च रक्तचाप के उपचार में जैव पुनर्निवेश के उपयोग की रिपोर्ट दी है। जैव पुनर्निवेश तकनीक का उपयोग कर, जो विश्रान्ति का मापन करता है, 20 में से 15 व्यक्तियों ने अपने उच्च रक्तचाप में सुधार और अपना औषधि सेवन कम किया।

पटेल कहते हैं– "उच्च रक्तचाप के 20 रोगियों के उपचार में योग और जैव पुनर्निवेश का उपयोग किया गया, जिसके परिणामस्वरूप 5 रोगियों में उच्च रक्तचाप निरोधी चिकित्सा पूर्णतया बन्द कर दी गई। अन्य 7 रोगियों में 30 से 60% कमी आई। अन्य 4 में रक्तचाप नियन्त्रण अच्छा रहा, जबकि शेष 4 में कोई अनुक्रिया नहीं हुई। इन चार में कम-से-कम एक को अप्रत्यक्ष लाभ हुआ कि उसे माइग्रेन और अवसाद से मुक्ति मिली। इस अध्ययन के परिणाम उच्च रक्तचाप के उपचार के अभिगम में नई उपयोगी सम्भावनाओं का संकेत करते हैं।"

पटेल ने जिस यौगिक विधि का उपयोग किया वह था– श्वास पर ध्यान। वे मानसिक रूप से प्रत्येक प्रश्वास के साथ मन्त्र की तरह दुहराते थे– 'विश्रान्त... विश्रान्त... विश्रान्त।' इस एकाग्रता ने उन्हें मानसिक रूप से सतर्क रखा और आन्तरिक रूप से चैतन्य।[31]

तीन माह तक सप्ताह में तीन बार आधे-आधे घण्टे के लिए रोगी आते थे। पूरी अवधि में उन्हें रिलैक्सोमीटर से जोड़ दिया जाता था, जो अनुकम्पी क्रियाओं को ध्वनि में बदल देता था। रोगियों को उस ध्वनि को कम या बन्द करना पड़ता था।

डॉ. पटेल ने चिकित्सा कार्यक्रम निम्नवत् बनाया था–

1. उच्च रक्तचाप तथा उसे कम करने हेतु सेवन की जा रही औषधि सम्बन्धी सूचना, जैव पुनर्निवेश सम्बन्धी सूचना तथा उच्च रक्तचाप के मनो-वैज्ञानिक उपचार पर शोध की सूचना।
2. योग द्वारा विश्रान्ति के व्यक्तिगत निदेश और उसमें प्रशिक्षण, जिसमें शरीर चेतना, सहज श्वास, प्रत्येक प्रश्वास के साथ विश्रान्ति शब्द की

पुनरावृत्ति संयुक्त थी। प्रयोगशाला प्रशिक्षण की अवधि में रोगी त्वचा-प्रतिरोध-पुनर्निवेश यन्त्र से इस निदेश के साथ जुड़ा रहता था कि त्वचा प्रतिरोध को कम रखे जो अधिक विश्रान्ति का सूचक है।

3. दैनिक जीवन में विश्रान्ति के उपयोग के निदेश तथा दिन में नियमित रूप से थोड़ी-थोड़ी अवधि के लिए विश्रान्त रहने हेतु प्रोत्साहन। अन्य उदाहरण हैं– घड़ियों पर लगा लाल चिह्न, जिससे कि दिन में जब भी वे समय देखें विश्रान्त होने की बात याद आ जाय। कुछ व्यक्तियों को कहा गया कि टेलिफोन पर उत्तर देने के पूर्व क्षण भर के लिये विश्रान्ति की भावना स्मरण कर लें।

सभी क्षेत्रों में पटेल के परिणाम उत्साहवर्द्धक रहे तथा प्राचीन योग विज्ञान और आधुनिक प्रौद्योगिकी के मेल के परिणामस्वरूप मानवता के लिए रोमांचक अवसरों को उन्होंने प्रदर्शित किया। आजकल प्रत्येक नई औषधि की खोज और नई शल्य क्रिया के विकास के साथ रोगी अपने चिकित्सक पर अधिक-से-अधिक आश्रित होता जाता है और अपना आत्मविश्वास खतम करता जाता है। जैव पुनर्निवेश वह पहली विधि है, जो रोगी को अपने स्वास्थ्य के प्रति अपने उत्तरदायित्व की ओर वापस लाती है। इस प्रक्रिया में रोगी के स्वनिर्मित आत्म नियमन संरचना का प्रयोग किया गया है, जिसके विषय में अधिकतर व्यक्ति सर्वथा अनभिज्ञ हैं। इसका परिणाम होता है अपने को नियन्त्रित करने और उच्च रक्तचाप या अन्य बीमारियों से स्वयं को मुक्त करने की स्वतन्त्रता, आत्मनिर्भरता और सन्तोष।

योग और जैव पुनर्निवेश ने रोगी को एक सीमा तक उत्तरदायित्व देने की प्रक्रिया का प्रारम्भ किया है। उच्च रक्तचाप तथा अन्य मनोदैहिक क्षेत्रों में इनकी प्रभावोत्पादकता को दिखाया गया है, परन्तु इनकी समस्त सम्भावनाओं का पूर्णरूपेण विकास करना अभी भी शेष है। अब जब डाक्टरों ने औषधि के स्थान पर रोगियों को योग और जैव पुनर्निवेश की सलाह देनी प्रारम्भ कर दी है, तो इसे सुखद सुप्रभात का आगमन ही कहना चाहिए। अब तक प्रौद्योगिकी ने मनुष्य की क्षमताओं को सीमित कर रखा है, तथापि जैव पुनर्निवेश, प्रौद्योगिकी को उत्प्रेरक के समान उपयोग करने की क्षमता के विस्तार का एक प्रयास है।

चेतना, विश्रान्ति, मानसदर्शन और इच्छा शक्ति की विधियों का, जिन्हें हजारों वर्षों के अनुभवों के आधार पर खोजा गया था, शरीर और मन के

पुनर्गठन में योग अति प्रभावशाली उपयोग करता है। आसन शरीर के अंगों की मालिश करते हैं एवं उन्हें स्वस्थ करते हैं, तथा अन्त:स्रावी-चक्र-युग्म को पुनर्व्यवस्थित करते हैं। प्राणायाम जीवन शक्ति को नियन्त्रित करता है तथा ध्यान मन की गहराइयों की थाह लेता है। इस प्रकार उच्च रक्तचाप समाप्त करने हेतु इनकी स्वाभाविक अन्तर्निहित रोगनाशक शक्तियों को जाग्रत करना है। जब योग और जैव पुनर्निवेश का उपयोग एक साथ होता है, तो प्रक्रिया और भी शक्तिशाली हो जाती है। जैव पुनर्निवेश आन्तरिक प्रक्रियाओं को तत्काल चैतन्य करता है, तथा उनके नियन्त्रण की विधि देता है। योग ऐसा करने की विधि देता है, तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नियन्त्रण एवं आत्मनिर्भरता का विस्तार करता है।

ध्यान

ध्यान सामान्य चेतना का विस्तार और स्वयं के विषय में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त करने की एक विधि है। हमें जब यह अन्तर्दृष्टि प्राप्त हो जाती है, हम अपनी आदतें बदल देते हैं, हमारे गहन आन्तरिक व्यक्तित्व को निखरने का सुअवसर मिलता है तथा हमारा पूरा जीवन सुधर जाता है। अतीत काल से जिन समस्याओं ने हमारे मन को विक्षुब्ध कर रखा है, जो प्राय: अपना रूप, रंग और तीव्रता बदलती रहती हैं तथा अभी भी समाधान की प्रतीक्षा में हैं, उन समस्याओं का हम समाधान करते हैं। यही वे मूल समस्यायें हैं, जिनके कारण उच्च रक्तचाप होता है।

ध्यान के विविध पक्ष

ध्यान वह विधि है, जिसके द्वारा दिन की चकाचौंध को बुझाकर अन्दर में सूक्ष्म ऊर्जा केन्द्रों को समझा जा सकता है। सामान्यत: द्रुतगामी और तनावपूर्ण आधुनिक जीवन की चकाचौंध में इन्द्रियों के माध्यम से प्राप्त होने वाली सूचनाओं में से काफी उपयोगी सूचनाएँ खो जाती हैं, यह एक प्रकार की मानसिक तिर्यक-दृष्टि है। ध्यान बाह्य 'वास्तविकता' से स्वयं को पृथक् करने का सचेष्ट प्रयास है– जिसमें हम चकाचौंध को समाप्त कर पूर्ण और गहन विश्रान्ति प्राप्त करने का अवकाश पाते हैं।

हम जब अपने अन्दर एक ऐसा 'स्थान' प्राप्त कर लेते हैं, जहाँ हम अपने आपको तरोताजा कर सकें, तब बाह्य समस्याओं से निपटना आसान हो जाता है। हम जीवन में एक नयी दृष्टि प्राप्त करते हैं, जिसके कारण ये कठिनाइयाँ हमें अपने से बाहर की शक्तियाँ प्रतीत होती हैं। ध्यान समस्याओं को वस्तुनिष्ठ बना देता है, तथा उनके व्यक्ति-सापेक्ष तत्त्व को निकाल देता है,

जिससे हम मानसिक और भावनात्मक तनावों के जाल से, जिसने हमें वर्तमान दुर्गति में जकड़ रखा है, स्वयं को मुक्त कर सकते हैं। उच्च रक्तचाप भी स्पष्ट रूप से एक परिस्थिति के समान प्रतीत होता है, जिसका उपचार हो सकता है और उसे जीवन से निकाला जा सकता है।

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में ध्यान उपयोगी सिद्ध हो रहा है। यह उच्च रक्तचाप जैसी बीमारियों से भी आराम दिला सकता है। तथापि, यह मात्र पहला कदम है। प्रत्येक मनुष्य में ध्यान द्वारा सुप्त सम्भावनाओं को प्रस्फुटित करने की शक्ति है। आधुनिक शोधकार्यों ने असंदिग्ध रूप से प्रमाणित कर दिया है कि ध्यान मनुष्य के लिए लाभदायक है। इसकी सफलता का यही तो प्रमाण है कि ध्यान को अपनी जीवन पद्धति में समाहित करने वाले मनुष्यों की संख्या बढ़ती जा रही है। यहाँ तक कि अमरीकी सेना, सरकारी संस्थायें तथा उच्च पदस्थ वाणिज्य प्रबन्धकों ने भी ध्यान करना प्रारम्भ कर दिया है।

आज हम ध्यान को आधुनिक जीवन के महत्त्वपूर्ण पक्ष के रूप में उभरते हुए देख रहे हैं। हममें से अधिकतर व्यक्तियों के जीवन में एक शून्यता विद्यमान है, जिसने हमें हताशा, दु:ख और नैराश्य की भावना से भर दिया है। ध्यान से प्राप्त एक नये प्रयोजन के भाव से यह शून्यता भरती जाती है। जैसे यह शून्यता भरती है, मनुष्य के अन्त: और बाह्य जगत् के बीच का असंतुलन ठीक हो जाता है।

सन्तोष, पूर्णता, आनन्द और सुख हेतु सतत् अपने से बाहर की ओर देखने के बदले ध्यानकर्ता अनुभव करता है कि आन्तरिक जगत् ही लोकोत्तर सुख, शान्ति और सुरक्षा का स्रोत है। इस अनुभूति का उपयोग एक अपेक्षाकृत अच्छे बाह्य जगत् के निर्माण में किया जा सकता है, जिससे तनाव आन्तरिक जीवन में अतिक्रमण न करे और दु:ख, शोक एवं उच्च रक्तचाप उत्पन्न न हों। यह सन्तुलन शरीर में इड़ा और पिंगला नाड़ियों, अर्थात् अनुकम्पी और परानुकम्पी तन्त्रिका तन्त्रों में साम्य के रूप में आता है।

हमारे दैनिक जीवन पर प्रभाव

शोध द्वारा सिद्ध हो गया है कि जीवन पर ध्यान के निम्नांकित प्रभाव पड़ते हैं–

- तन्त्रिका तन्त्र पुनर्व्यस्थित और मजबूत होता है। तन्त्रिका तन्त्र में एक नैसर्गिक और स्वचालित प्रतिक्रिया को प्रोत्साहित करता है, जो दिनभर उत्पन्न होने वाले असन्तुलन का प्रतिकार करता है।

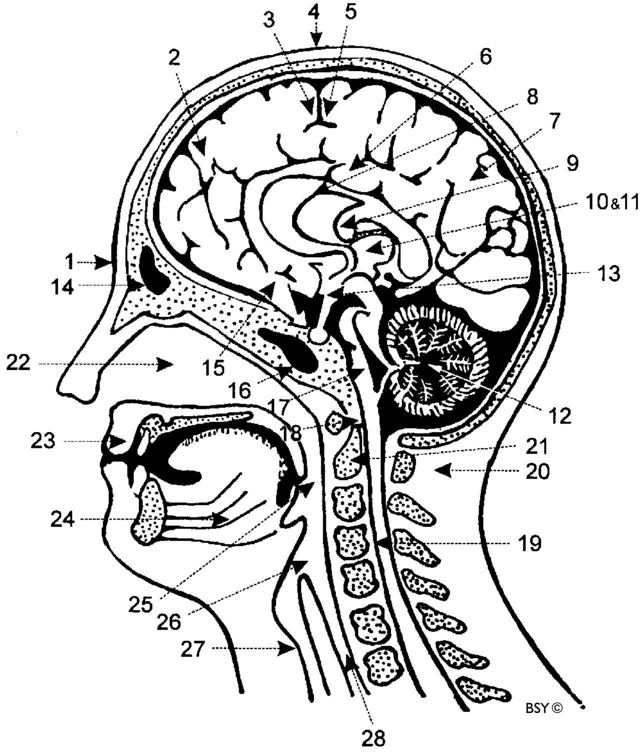
- एक गहन विश्राम की अवस्था उत्पन्न करता है, जो उच्च रक्तचाप द्वारा क्षतिग्रस्त ऊतकों की मरम्मत को तीव्र करता है तथा शेष बचे ऊतकों का स्वास्थ्य उन्नत करता है।
- सीखने, समझने, स्मरण एवं धारण करने की क्षमता बढ़ाता है।
- प्रतिवर्त क्रिया को तीव्र करता है, अर्थात् मस्तिष्क की क्रिया को उन्नत करता है।
- मनोवैज्ञानिक-स्वास्थ्य सुधारता है।
- सामान्य से भी कम समय में ही तनावों से उबारता है।
- इन्द्रियों के कार्य एवं ज्ञान को सामान्य रूप में सुधारता है।
- व्यक्ति को अपने काम में आनन्द मिलता है एवं इस प्रकार कार्यों से अधिक सन्तोष मिलता है, जो आर्थिक उत्पादकता और जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाते हैं।
- उच्च रक्तचाप सहित सभी प्रकार की बीमारियों से रोग मुक्ति में इसकी स्पष्ट भूमिका है।
- अधिक-से-अधिक व्यक्ति ध्यान के व्यक्ति-सापेक्ष लाभों की चर्चा करते हैं। शोधकर्ताओं ने, जो वस्तु-सापेक्ष तथ्यों पर शोध करते हैं, पाया है कि वे भी ध्यान के विस्मयजनक सकारात्मक गुणों के कारण इसकी ओर आकृष्ट हो रहे हैं।

ध्यान और तन्त्रिका तन्त्र

ध्यान शरीर के तन्त्रिका तन्त्र पर अपना मुख्य प्रभाव डालता है। अत: यह उच्च रक्तचाप के लिए आवश्यक है, क्योंकि यह अति उत्तेजित अनुकम्पी तन्त्रिका-तन्त्र को शान्त करता है, परिसरीय अवरोध को तथा रक्तचाप को भी कम करता है।

मस्तिष्क और मेरुरज्जु से निर्मित केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र परिसरीय तन्त्रिका-तन्त्र को संवाद प्रेषित करता है। यह परिसरीय तन्त्रिका-तन्त्र तथाकथित 'स्वैच्छिक सम्वेदी-प्रेरक' तन्त्र और 'अनैच्छिक' स्वचालित तन्त्र में विभाजित है। सम्वेदी-प्रेरक तन्त्र संवेदना तथा इच्छित पेशी नियमन (उदाहरण– स्थूल गतियाँ, जैसे, चलना और निपुणता समन्वित सूक्ष्म गतियाँ, जैसे, लिखना आदि) को नियन्त्रित करता है। योग हमें इस तन्त्र के प्रति अधिक चैतन्य बनाता है। अतएव अधिक नियन्त्रण प्राप्त करने तथा प्रत्येक गति से आनन्द प्राप्त करने के प्रति भी सजग बनाता है।

मस्तिष्क



1. भ्रूमध्य	15. पीयुष ग्रन्थि
2. ललाट खण्ड (वाणी, बुद्धि)	16. जतूक विवर
3. प्रेरक प्रान्तस्था (गति)	17. पोन्स
4. सहस्रार चक्र	18. सुषुम्ना शीर्ष
5. सम्वेदी प्रान्तस्था (संवेदना)	19. मेरु रज्जु
6. सीमान्त तन्त्र (भावना)	20. प्रथम ग्रीवा कशेरुका
7. पश्चकपाल खण्ड (दृष्टि)	21. द्वितीय ग्रीवा कशेरुका
8. महासंयोजन पिण्ड	22. नासिका गह्वर
9. थैलमस	23. ऊपरी ओष्ठ
10. पीनियल ग्रन्थि	24. जिह्वा
11. आज्ञा चक्र	25. ग्रसनी
12. अनुमस्तिष्क	26. स्वरयंत्र एवं एपिग्लॉटिस
13. हाइपोथैलेमस	27. श्वास नलिका (फुफ्फुसों को)
14. अग्र साइनस	28. आहार नली

स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र को इसके अन्वेषण काल से ही अनैच्छिक कहा गया है। हम तो अभी विज्ञान के माध्यम से, जैव पुनर्निवेश, सम्मोहन आदि के रूप में प्रमाणित करना प्रारम्भ कर रहे हैं कि योग का दावा सत्य है। यह तन्त्र उनके लिए अनैच्छिक है, जो इसे स्वैच्छिक रूप से नियंत्रित करना नहीं जानते, जो इसके अस्तित्व, कार्य और मूलभूत उद्देश्य से अनभिज्ञ हैं। यह हमारे आधुनिक समाज में स्वाभाविक है, क्योंकि हमको इसे नियन्त्रित करना सिखाया ही नहीं गया है। योग हमें सिखाता है कि अन्तर्मुखी होकर हम तन्त्रिका-तन्त्र के चेतन और अचेतन तथा मस्तिष्क और तन्त्रिका तन्त्र के सुषुप्त पक्ष में विद्यमान सम्बन्धों का पता लगा सकते हैं।

मस्तिष्क के अध्ययनों से पता चला है कि मस्तिष्क के विभिन्न भागों में समन्वय के अभाव में शारीरिक कार्यों में अस्थिरता आती है, अर्थात् जब मस्तिष्क के विभिन्न भाग परस्पर तालमेल में काम नहीं करते, तब वे वस्तुत: परस्पर विपरीत कार्य करते हैं, जिसका परिणाम होता है अशान्ति, तनाव और रोग। ऐसा संघर्ष सामान्यत: भावनात्मक नियन्त्रण से सम्बन्धित निम्न मस्तिष्क तथा विवेचन से सम्बन्धित उच्चतर प्रमस्तिष्कीय पक्षों के मध्य होता है। अपने विचार और भावना के मध्य इस विभाजन से हम अनुभूति क्षमता खो बैठते हैं तथा संसार में पूर्णतया बुद्धि और विचार के जगत् में जीने लगते हैं।

चिन्तन और भावना के बीच का यह विभाजन उच्च रक्तचाप और अन्य सभी मनोदैहिक एवं मानसिक बीमारियों का अग्रदूत है। जब हम सोचते हैं, पर अनुभव नहीं करते, तब हम ऐसे काम करते हैं, जिन्हें अपने लिए अच्छा समझते हैं, पर वह हमारे शरीर का लाभ के स्थान पर हानि ही करता है। हम अपने शरीर के प्रति अपनी सम्वेदनशीलता खो चुके हैं, अत: यह जानना कठिन है कि क्या स्वास्थ्यकर है और क्या विनाशकारी। जब हम ध्यान के द्वारा पुन: अनुभव करना सीखते हैं, केवल तभी हमारा अन्तर्ज्ञान और सम्वेदनशीलता प्रबल होती है एवं अपना न्यायपूर्ण स्थान प्राप्त करती है। ये ही पक्ष हमारा मार्गदर्शन करते हैं कि हमारी आवश्यकताओं, हमारे अपने विकास के सन्दर्भ में क्या उचित है, जो हमें करना चाहिए। अपना ज्ञान प्राप्त करने में ये हमारी सहायता करते हैं।

यदि हम अपनी अनुभूतियों की उपेक्षा कर देते हैं, तब हमारा जीवन एक विनाशकारी मोड़ ले लेता है। हम अधिक भोजन और उसे अधिक शीघ्रता से

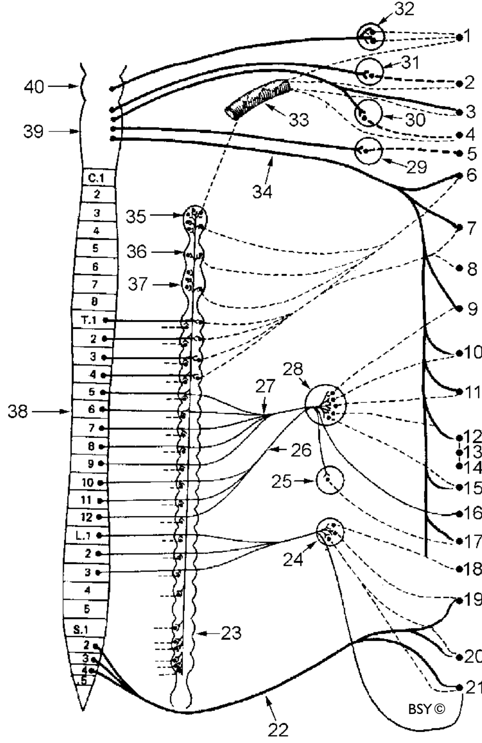
खाते हैं, धूम्रपान अधिक करते हैं। वायुमण्डल को तो प्रदूषित करते ही हैं, सामान्य रूप से अपना जीवन दुर्भाग्यपूर्ण बना लेते हैं। हम कष्ट भोगते हैं, पर यह नहीं जानते कि क्यों? इसका कारण है कि हमारे मस्तिष्क के विभिन्न भाग अधिकतम स्वास्थ्य के लिए परस्पर सम्बद्ध नहीं हैं और यही हमारे ज्ञान, विवेक और अन्तर्जात बुद्धि को सीमित कर देता है। व्यक्तिगत रूप से हम यह नहीं जानते कि क्यों और कैसे हम उच्च रक्तचाप प्रवण हो जाते हैं? सत्य तो यह है कि हम अपने उच्च रक्तचाप के लिए स्वयं उत्तरदायी हैं, तथा हममें से प्रत्येक को ध्यान के द्वारा उन कारणों का पता करना होगा।

स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र

स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र मस्तिष्क के हाइपोथैलेमस से सम्बद्ध है, जो स्वयं मध्य मस्तिष्क के सीमान्त तन्त्र से नियन्त्रित होता है, जो भावनाओं और सम्वेदनशीलता का केन्द्र है। हाइपोथैलेमस अपनी सूचनायें अन्त:स्रावी ग्रन्थियों और स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र को देता है, तथा स्वयं इन दोनों तन्त्रों के सहयोग का केन्द्र बिन्दु है। ध्यान सीधे मन-मस्तिष्क को प्रभावित करता है, हाइपोथैलेमस को शान्त करता है, अतिशय अनुकम्पी उद्‌दीपन और उच्च रक्तचाप को समाप्त करता है।

बाह्य और आन्तरिक आवश्यकताओं के अनुसार आन्तरिक परिवेश को स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र समायोजित कर सकता है। यह दो पूरक तन्त्रों से सुसज्जित है। एक है–अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र और दूसरा परानुकम्पी। ये दोनों उप विभाजन स्वचालित तन्त्र की घटनाओं को, जो सामान्यत: चेतना के स्तर के नीचे रहती हैं, नियन्त्रित करते हैं। अनुकम्पी और परानुकम्पी शाखाएँ परस्पर विरोधी हैं, अत: जब एक काम करती रहती है, तो दूसरी नहीं करती। भिन्न परिप्रेक्ष्य में देखा जाय, तो यदि एक तन्त्र सक्रिय है तो दूसरा निष्क्रिय। उदाहरणस्वरूप, परानुकम्पी तन्त्र बड़ी आँत को खाली करता है, पर अनुकम्पी मल को रोकता है। अनुकम्पी तन्त्र को प्रभावित करने से व्यक्ति चैतन्य रूप से रक्तचाप को नियन्त्रित कर सकता है। ऐसा समझा जाता है कि रक्तचाप के नियमन में परानुकम्पी तन्त्र की इतनी बड़ी भूमिका नहीं है। रक्तचाप अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र उत्तेजित करने से बढ़ता है, उसे निष्क्रिय करने से घटता है। स्वचालित तन्त्रिका के कार्यों की सूची निम्नवत् है–

स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र



1. नेत्र
2. अश्रु ग्रंथि
3. लाला ग्रंथि
4. अधोजिह्वा ग्रंथि
5. कर्ण पूर्व ग्रंथि
6. हृदय
7. स्वर यंत्र, श्वास प्रणाल, श्वसनियाँ
8. फुफ्फुस
9. आमाशय
10. क्षुद्रान्त्र
11. उदरीय रक्तवाहिकायें
12. यकृत
13. पित्ताशय
14. पित्त वाहिनी
15. अग्न्याशय (पैन्क्रियाज)
16. अधिवृक्क अंतस्था
17. वृक्क
18. बृहदान्त्र
19. मलाशय
20. मूत्राशय
21. प्रजननांग
22. श्रोणि तंत्रिका
23. अनुकम्पी तंत्र
24. निम्न आन्त्रयोजनी गंडिका
25. ऊर्ध्व आन्त्र्योजनी गंडिका
26. क्षुद्र आशयिक तंत्रिका
27. बृहदाशयिक तंत्रिका
28. कुक्षि गंडिका
29. कर्ण गंडिका
30. निम्न मैक्सिलरी गंडिका
31. जतूक तालु गंडिका
32. रोमक गंडिका
33. कैरोटिड़ धमनी एवं जालिका
34. वेगस तंत्रिका
35. ऊर्ध्व ग्रीवा गंडिका
36. मध्य ग्रीवा गंडिका
37. निम्न ग्रीवा गंडिका
38. मेरुदण्ड
39. अंतस्था
40. मध्य मस्तिष्क

परानुकम्पी अवयव– यह तन्त्र शारीरिक विश्रान्ति से सम्बद्ध है।

- नेत्र की पुतलियों को संकीर्ण करता है।
- आँसू और लार का स्राव करता है।
- हृदय वाहिकाओं और श्वास नली को संकीर्ण करता है।
- पाचन प्रक्रिया में जठर ग्रन्थियों को सक्रिय करता है।
- पित्ताशय, मूत्राशय, आमाशय, छोटी आँत और बड़ी आँत को खाली करता है।

अनुकम्पी अवयव– यह तन्त्र दबावपूर्ण स्थितियों के आपातकालों का सामना करने में शरीर की सहायता हेतु परिकल्पित है।

- अधिक प्रकाश अन्दर लाने हेतु नेत्र की पुतलियों को फैलाता है।
- पसीना निकालता है (उत्तेजना, ताप, दबावपूर्ण स्थितियों में)।
- रोमकूपों को संकुचित करता है (जैसा भय की स्थिति में होता है)।
- पाचन नली और त्वचा में रक्त ले जाने वाली रक्तवाहिकाओं को संकीर्ण कर शरीर के अधिक महत्त्वपूर्ण अंगों में रक्त को भेजता है।
- हृदय और कंकाली-पेशी-वाहिकाओं को विस्फारित करता है।
- हृदय की पम्प करने की गति को बढ़ाता है और अधिक ऑक्सीजन चाहने वाले ऊतकों को अधिक रक्त और ऑक्सीजन भेजता है।
- श्वसनियों के ऊतकों एवं पेशियों को विश्रान्त करता है तथा श्वसनियों को विस्फारित कर रक्त में अधिक ऑक्सीजन जाने देता है।
- मूत्राशय में मूत्र को जमा रखता है।
- अतिरिक्त ऊर्जा हेतु यकृत से शर्करा को गतिमान करता है।
- एड्रिनल ग्रन्थि से एड्रिनलीन स्रावित करता है।
- तनाव शरीर की अधिकतर धमनिकाओं को संकुचित कर रक्तचाप को बढ़ाता है, जिससे अधिक-से-अधिक ऑक्सीजनयुक्त रक्त हृदय, मस्तिष्क और पेशियों में पहुँचे और वे परिवेश से अच्छी तरह निपट सकें। यह इस प्रकार है, मानो मस्तिष्क में अनुकम्पी तन्त्र की दिशा में कोई स्विच स्वत: चालू कर दिया जाय, वह भी बिना हमारे नियन्त्रण के। योग की सहायता से हमें मस्तिष्क के उन स्विचों पर नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है। यह सीखी गई निपुणता है, जो विकास की प्रक्रिया में अन्ततोगत्वा भावी पीढ़ी की सहज प्रकृति हो जायेगी।

ध्यान के द्वारा मन क्रमश: शान्त होता है और ज्ञान की स्पष्टता बढ़ती है। सजगता के क्षेत्र में अनेक मानसिक स्विच आते हैं और हम उनका संचालन

सीखते हैं। कुछ समय के अभ्यास के बाद हम अपना रक्तचाप कम कर सकेंगे, आहार के पाचन में सहायक हो सकेंगे, पसीना निकलने की क्रिया को नियन्त्रित कर सकेंगे, हृदय गति, हार्मोन स्राव, शरीर का तापमान, अवरोधनियों और अनेक शारीरिक क्रियाओं को नियन्त्रित कर सकेंगे।

ध्यान मन को विश्रान्त करता है, जिसके कारण हम दबावपूर्ण परिस्थितियाँ उत्पन्न होने पर अपने आप अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र का सन्तुलन बनाये रख सकते हैं। यह आपको दबाव का उत्कृष्ट परिदृश्य प्रस्तुत करता है और सर्वोत्तम विश्रान्त भाव से उसका सामना करने में आपका सहायक होता है। तन्त्रिका तन्त्र को शासित करने का पहला चरण है– स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र को नियन्त्रित करना और इस नियन्त्रण को प्राप्त करने का उपाय है ध्यान।

ध्यान

प्रयोगों ने सिद्ध किया है कि ध्यान के निम्नांकित प्रभाव होते हैं–

चयापचय या कोशिका क्रिया कम हो जाती है। ध्यान शरीर में ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड का उपयोग कम कर देता है। साथ-ही-साथ ऑक्सीजन की आवश्यकता को भी सीमित कर देता है। शरीर के लिए वैज्ञानिक रूप से निर्धारित न्यूनतम ऑक्सीजन आवश्यकता को अपेक्षा से 50 से 75% कम स्तर तक पहुँचाया जा सकता है (आनन्द 1961 एवं 1970)। जीवन को बिना संकट में डाले यह तब तक असम्भव माना जाता था जब तक योगाचार्यों ने इसकी सम्भावना को प्रमाणित नहीं कर दिया।

वालेस और बेन्सन ने पाया कि निद्रा में ऑक्सीजन का स्तर दिन के स्तर से लगभग 10% कम हो जाता है, जबकि ध्यान में यह 20% घट जाता है, जो सूचित करता है कि ध्यान शरीर को अपेक्षाकृत अधिक विश्राम देता है।[32] उस समय कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर भी उतना ही घट जाता है, जो संकेत देता है कि ऑक्सीजन में कमी से शरीर की कोशिकायें ऑक्सीजन से वंचित नहीं हुईं। ध्यान, निद्रा की अपेक्षा अधिक स्वास्थ्यकर, अधिक ऊर्जा-संरक्षण-दक्ष शारीरिक और मानसिक स्थिति है।

बहुसंख्यक प्रयोगों द्वारा ध्यान करने वालों की मस्तिष्क तरंगें गहन विश्रान्ति प्रकट करती हुई दिखायी गई हैं। उच्च आयामी अल्फा तरंगों का वर्द्धित स्तर आँखें खुली रहने पर भी देखा गया है। औसत व्यक्ति में सामान्यत: बीटा तरंगें प्रबल रहती हैं, और इन तरंगों को स्वेच्छया घटाया-बढ़ाया नहीं जा सकता

है। उसका मन एक बहिर्मुखी, बौद्धिक, तनावपूर्ण अवस्था में टंगा रहता है। ध्यान मन को विश्रान्त और मुक्त करता है।

जे. पी. बैंक्केट ने मन्त्र जप में निम्नांकित चार अवस्थायें पायीं।[33]

प्रथम अवस्था– अल्फा तरंगों का वर्द्धित आयाम, जो सिर के पश्च भाग से अग्र भाग में जाता है और चिन्ता रचना तन्त्र की विश्रान्ति की सूचना देता है।

द्वितीय अवस्था– निद्रा काल से भिन्न थीटा आवृत्तियाँ अल्फा को प्रतिस्थापित करती हैं तथा मस्तिष्क के अग्र भाग (बौद्धिक) से पश्च भाग (चाक्षुष) में जाती हैं। यह प्रकट करता है कि ध्यानकर्त्ता जब अवचेतन मन में भी था, उस समय भी सजग था। अवचेतन मन स्वप्न आदि के लिए उत्तरदायी है। थीटा आवृत्ति का पश्च मस्तिष्क में उत्पन्न होना ध्यान में दृश्यों या अन्य आध्यात्मिक आभासों के प्रकट होने का समय बताता है।

तृतीय अवस्था– पूरे मस्तिष्क में लयबद्ध, समक्रमिक, बीटा तरंगें विद्यमान थीं, यह प्रकट करता है कि यद्यपि ध्यानकर्त्ता अन्तर्मुखी था, वह सजग एवं एकाग्र था। मस्तिष्क तरंगों का समक्रमण बता सकता है कि मस्तिष्क के सभी घटक संयुक्त और समन्वित हो रहे हैं, अशान्त और अस्तव्यस्त अनुकूलन को दूर कर रहे हैं तथा हमारे अचैतन्य अन्त:शक्तियों को चैतन्य बना रहे हैं। सहज रचनात्मकता और आनन्द का आत्मपरक सम्वेदन उच्च रक्तचाप को अवसर नहीं देता।

चतुर्थ अवस्था– अल्फा और थीटा तरंगों के स्तर के माध्यम से सामान्य जाग्रत चेतना का उदय होता है।

ध्यान की अवस्था में फुफ्फुस कम ऑक्सीजन लेता है, श्वसन गति प्रति मिनट 12 से 16 के सामान्य स्तर से प्रति मिनट 4 से 8 तक गिर जाती है।[34] अन्य शोधकर्त्ताओं की रिपोर्ट है कि श्वसन प्रति मिनट एक या उससे भी कम हो जाता है।

साथ ही वायु प्रवेश के प्रति होने वाला प्रतिरोध भी 20% कम हो जाता है, जिसका अर्थ है कि वायु फुफ्फुसों में आसानी से प्रवेश कर सकता है।[35] दमा के रोगियों के लिए, जिनको वायु प्रवेश में अत्यधिक प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है, यह लाभदायक होगा। यह ध्यान की विलक्षणता है, जो विश्राम में भी नहीं होती।

हृदय कम रक्त पम्प करता है, क्योंकि चयापचय घट जाता है, तथा शरीर ऊतकों को कम ऑक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है। ऊतकों को विश्राम

और पुनर्व्यवस्था का अवसर मिलता है तथा ऊतकीय चयापचय रोग मुक्ति पर ध्यान दे सकता है। थामस रौट ने प्रतिवेदन प्रस्तुत किया है कि हृदय गति 10 स्पन्दन प्रति मिनट कम हो जाती है।[36]

गैल्वनिक-त्वचा-प्रतिरोध त्वचा में विद्युत प्रतिरोध को मापता है, विश्रान्ति जितनी अधिक होगी यह प्रतिरोध उतना ही अधिक होगा। वालेस और बेन्सन ने पाया कि ध्यान में यह प्रतिरोध 500% बढ़ जाता है, जबकि निद्रा में केवल 250% बढ़ता है।[37]

लैक्टेट, जो तनाव सम्बन्धी रसायन है, ध्यान से घटता है। अधिक तनाव अधिक ऑक्सीजन उपयोग चाहता है। ऑक्सीजन की ऊतकीय माँग बढ़ती जाती है, अन्ततोगत्वा, आवश्यकता पूर्ति हेतु पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं रह जाती। इसका अर्थ है कि ऊतक ऊर्जा आपूर्ति के अन्य स्रोत की ओर उन्मुख हो जाते हैं तथा कम दक्षता से कार्य करते हैं। वे शीघ्र थक जाते हैं। इस दबाव रचना तन्त्र का एक अंश अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र के माध्यम से धमनिकाओं के संकीर्ण होने से सम्बन्धित है, जो रक्त की आवश्यक मात्रा को अपशिष्ट लैक्टेट को निकालने और पर्याप्त ऑक्सीजन को अन्दर लाने से रोकता है।

वालेस और बेन्सन के अध्ययन में रक्त लैक्टेट के निर्माण की दर को घटता हुआ देखा गया है। ध्यान की अवस्था में शरीर से इसका निष्कासन मात्र पीठ के बल आराम करने या केवल लेटे रहने की अवस्था की अपेक्षा चार गुना अधिक होता है तथा निद्रावस्था में निष्कासन से तीन गुणा तेज निष्कासन होता है।[38] धमनिकाओं की विश्रान्ति अपशिष्टों को धो डालती है तथा उच्च रक्तचाप पर लाभकारी प्रभाव डालती है।

ध्यान एक अनुपम स्थिति है जो सामान्य विश्राम और स्वास्थ्य लाभ देती है। "यह विश्वास करने का पर्याप्त कारण है कि बदलते परिवेशों से जो अनवरत उद्दीपन अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र को प्राप्त होता है, वह हमारे समाज में प्रचलित उच्च रक्तचाप और वैसी ही गम्भीर बीमारियों के अधिक विस्तार के लिए उत्तरदायी है।

इन परिस्थितियों में अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र की अति सक्रियता की अपेक्षा निष्क्रियता प्रकट करने वाली अल्प चयापचयी स्थिति उत्तम स्वास्थ्य के दिशा निर्देश का संकेत करती है। इस जाग्रत विश्राम और विश्रान्ति की अवस्था के चिकित्सीय उपयोग की सम्भावनाओं का अध्ययन करना सार्थक होगा।"[39]

ध्यान करने वाले व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक, दोनों स्तरों पर उन्नत स्वास्थ्य और कल्याण की रिपोर्ट देते हैं, विशेषकर जुकाम, एलर्जी और सरदर्द की संख्या में कमी की। अधिकतर व्यक्ति बताते हैं कि जब से उन्होंने ध्यान और योगाभ्यास प्रारम्भ किया उनका रक्तचाप उनके लिए कोई समस्या नहीं रहा।

केली और गेलहार्न ने पाया है कि वर्द्धित अनुकम्पी उद्‌दीपन से स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र की अस्थिरता के माध्यम से उच्च रक्तचाप उत्पन्न होता है।[40] के. के. दाँते ने दिखाया कि विश्रान्ति की विधियों, जैसे, केवल श्वसन के उपयोग से उच्च रक्तचाप का दक्षतापूर्ण उपचार हुआ तथा सफल रोगियों की औषधि आवश्यकतायें पूर्ण खुराक से 25% नीचे आ गई। रक्तचाप भी सामान्य स्तर से 20% नीचे आया।[41]

बेन्सन और वालेस ने अपने शोधकार्य द्वारा प्रमाणित किया है कि ध्यान करने वालों का रक्तचाप भिन्न रहता है।[42] 106/52 मि.मी. पारा का औसत रक्तचाप, योग मित्र मण्डल शोध समन्वय केन्द्र, मुंगेर के प्राप्त आँकड़ों द्वारा अच्छी तरह सह सम्बन्धित पाया गया। समाज में सामान्य औसत 120/80 मि.मी. पारा है। तब उन्होंने उच्च रक्तचाप के रोगियों से ध्यान कराया और पाया कि ध्यान के अभ्यास के पूर्व उनका रक्तचाप 150 (±17)/94 (±9) मि.मी. पारा था। ध्यान प्रारम्भ करने के बाद उनका रक्तचाप गिरकर 141 (±11)/88 (±7) मि.मी. पारा हो गया, जो एक स्वस्थ स्तर है तथा इससे भी निरपेक्ष है कि व्यक्ति औषधि सेवन करता है या नहीं।[43] यह सांख्यिकी की दृष्टि से रक्तचाप में सार्थक कमी है, और इसलिए भी सार्थक है कि ध्यान के पश्चात्‌ का अनुशिथिलन स्तर, उच्च रक्तचाप के लिए निर्धारित 90 मि.मी. पारा के स्तर से कम है।

अंतरराष्ट्रीय योग मित्र मण्डल शोध समन्वय केन्द्र के एक सहयोगी डॉ. श्री निवास, एम. डी., निदेशक, योग शोध संस्थान, पटना ने भी प्रमाणित किया है कि रक्तचाप कम करने में औषधि की अपेक्षा मन का यौगिक उपयोग अधिक अच्छा उपाय है।

यदृच्छया चयनित 150 पुरुष रोगियों में जिनका आयु वर्ग 15–40 वर्ष था, पाया गया कि उनका रक्तचाप सामान्य ही था जो 100–150/50–80 मि.मी. पारा के बीच था। इसका औसत था 120–130/60–70 मि.मी. पारा।

रोगियों को लेटकर विश्राम करने को कहा गया। फिर उनका रक्तचाप 10 मिनट से आधे घण्टे के अन्तराल पर लिया गया जब तक वे पूर्ण स्थिर नहीं हो गये और यही स्तर विश्रामावस्था का रक्तचाप माना गया।

इसके पश्चात रोगियों को एक प्रशान्तक (5 मि.ग्रा. सिडेटिव हिप्नोटिक डायजेपाम दिया गया)। आधा घण्टा ठहर कर उनका रक्तचाप पुनः लिया गया। इसके उपरान्त सभी व्यक्ति अपने घरों को चले गये और अपने दैनिक काम में लग गये। सामान्य खाना खाया। 48 घण्टे के बाद वे पुनः आये। तब फिर उनके रक्तचाप की जाँच की गई।

इस बार उन रोगियों ने बिहार योग विद्यालय के संस्थापक स्वामी सत्यानन्द जी की योग विधि योग-निद्रा और श्वसन का अभ्यास किया। परिणाम निम्नवत् प्राप्त हुआ–

1. डायजेपाम का रक्तचाप पर अत्यल्प प्रभाव हुआ।
2. योग निद्रा से विश्रामावस्था के रक्तचाप की अपेक्षा, रक्तचाप 10-20/0-10 मि.मी. पारा कम हुआ।

डॉ. श्री निवास ने निष्कर्ष निकाला कि रक्तचाप कम करने हेतु योग निद्रा निरापद, निर्दोष और प्रभावी ध्यान विधि है। इसका विवरण अभ्यास खण्ड में है।

योग और ध्यान के प्रभावों का, औषधि तथा नई विधियों के कूट भेषजों से रोग मुक्ति के भेद को दिखाने हेतु और अधिक प्रायोगिक प्रमाणों की आवश्यकता है। यह बात महत्त्वपूर्ण है कि योग सभी रोगों का राम बाण इलाज नहीं है। यह एक चमत्कारी उपचार नहीं है और सभी मनोदैहिक रोगों में औषधि का विकल्प भी नहीं है। यह तो उन स्वाभाविक प्रक्रियाओं को तीव्र करने की सहायक विधि है, जो पुनः स्वास्थ्य और सुव्यवस्था की ओर ले चलती हैं। उच्च रक्तचाप के अधिक प्रभावी और शीघ्र नियन्त्रण के निमित्त सभी वर्गों के चिकित्सकों द्वारा अधिकाधिक लाभ हेतु इस प्रभावी विधि का उपयोग किया जा सकता है।

समग्रात्मक चिकित्सा

स्वास्थ्य शब्द स्वस्थ में ष्यञ् प्रत्यय लगा कर बना है, जिसका अर्थ है स्वस्थ होने का भाव। स्वस्थ का अर्थ है स्वप्रतिष्ठ, अपने में स्थित, शान्त, निर्विक्षेप, नीरोग। सुश्रुत संहिता के अनुसार– *'समदोष: समाग्निश्च समधातुमलेन्द्रिय:। प्रसन्नत्मेयमना स्वस्थ इत्यभिधीयते'॥* चिकित्सा का अर्थ है शरीर को समदोष (कफ, पित्त, वायु), समाग्नि और समधातु की स्थिति में लाना, अर्थात् अपने में स्थित करना, पूर्ण सन्तुलन की अवस्था। अतएव यह एक अनवरत प्रक्रिया है, क्योंकि यह विकास एवं ज्ञान की सतत् प्रक्रिया से सम्बन्धित है। हम सही स्वास्थ्य, समग्रता और पूर्णता तभी प्राप्त करते हैं, जब हम पूर्णरूपेण विकसित हो जाते हैं तथा जीवन को उसके सभी उतार-चढ़ावों सहित स्वीकारते हुए परिपक्वता, विवेक और क्षमता प्राप्त कर लेते हैं। जब जीवन को इस समचित्तता और वैराग्य की दृष्टि से देखते हैं, तब हम उच्च रक्तचाप उत्पन्न करने वाले तनाव और दबावों से मुक्त हो जाते हैं।

वास्तविक रूप से विकास करने और अपने आपको जानने हेतु हमें अपने विशिष्ट व्यक्तित्व और आवश्यकताओं के अनुकूल विधियों का उपयोग करना चाहिए। हमें अपनी मानसिक अनम्यता के कारण स्वयं को किसी एक पद्धति में परिसीमित नहीं करना चाहिए। कोई भी एकमात्र 'उपयुक्त' पद्धति नहीं है। जो बीमारी से मुक्ति में काम कर जाय उसका उपयोग किया जाना चाहिए। सभी पद्धतियों के लिए योग के द्वार खुले हैं। किसी भी चिकित्सा पद्धति–एलोपैथी, एक्युपंक्चर या प्राकृतिक चिकित्सा को रोग उपचार के प्रांगण में स्थान प्राप्त है।

आज विश्व में प्रमुख चिकित्सा पद्धति है–एलोपैथी, अर्थात् औषधि या शल्यक्रिया द्वारा रोग को निस्तेज कर रोग मुक्ति प्राप्त कराने वाला विज्ञान।

परम्परागत विज्ञान अपने शोध का प्रकाश सीमित ज्ञान के एक छोटे क्षेत्र पर डालता है। कोई भी अनुभवी वैज्ञानिक इस तथ्य से सहमत होगा कि अभी भी ज्ञान के ऐसे क्षेत्र हैं, जिन्हें हमने अभी-अभी स्पर्श किया है तथा अन्य ऐसे भी क्षेत्र हैं, जिनसे हम अभी तक पूर्णतया अनभिज्ञ हैं। प्रत्येक पद्धति में कुछ अनुसन्धान की सम्भावना है तथा उसके पास कुछ देने योग्य ज्ञान भी है। यद्यपि वह ऐसे स्रोतों से आया है, जो हमारे लिऐ अनुभवातीत हैं, पर हैं अकाट्य। प्रत्येक पद्धति में उसके रचनात्मक और मौलिक पक्ष का मूल्यांकन होना चाहिए, जिससे कि नकारात्मक पक्ष को निकाल कर उपयोगी, व्यावहारिक पक्ष को स्वीकारा जा सके तथा अधिक पूर्ण पद्धति में समाहित किया जा सके। इस प्रकार डॉक्टर और रोगी, चिकित्सक और रोग मुक्त सभी व्यक्ति अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

योग का अर्थ है जोड़ना, मिलना, सभी वस्तुओं को उनके उचित स्थान में समस्वर और सुव्यवस्थित करना। तब न कुछ बुरा है, न अच्छा, न उत्तम न निकृष्ट। हम जिस भी चिकित्सा पद्धति को पसन्द करें, जब भी चाहें अथवा जब भी आवश्यकता पड़े उसका उपयोग कर सकते हैं। चिकित्सा व्यवसाय में न कोई निषेध है, न भ्रम, न दबाव या तनाव। उच्च रक्तचाप के मूल कारणों को व्यक्तिगत स्तर पर नहीं, विश्व स्तर पर दूर किया जाता है।

योग का तो प्रधान लाभ है कि उसका अपना चिकित्सा दर्शन भी है। एक बार आपने विधियों को किसी विशेषज्ञ से सीख लिया तो फिर आप स्वयं ही उसका अभ्यास कर सकते हैं। आपके शिक्षक तो मात्र एक मार्गदर्शक हैं, रास्ते के संकेत-स्तम्भ हैं, जो आपकी त्रुटियों और भूलों को बता कर उत्तम स्वास्थ्य की दिशा में उत्तमोत्तम दिशा निर्देश देते हैं। सब काम आप करते हैं, उससे सन्तोष प्राप्त करते हैं, साथ ही ऐसी चीज भी पाते हैं, जो अन्य कोई आपसे ले नहीं सकता– उत्तम स्वास्थ्य, आन्तरिक सुरक्षा और आनन्द। अतएव सभी पद्धतियाँ संक्षेप में योग के उपयोगी अनुबन्ध हैं। अतिपाती अवस्था या घोर संकट के समय वे रक्तचाप को कम करने में सहायता करते हैं, जब आपको सर्वप्रथम पता चलता है कि आपको उच्च रक्तचाप है। तथापि योग के अतिरिक्त कोई चिकित्सा पद्धति नहीं है जो दीर्घकाल तक रक्तचाप को नीचे रखने में सहायक हो सके, क्योंकि योग के पास ही ऐसा उपाय है, जो मूल कारण को दूर कर सके, मस्तिष्क को पुनर्व्यवस्थित कर सके, अन्त:स्रावी

ग्रन्थियों को पुनर्संतुलित कर सके, मन को शान्त, भावनाओं को प्रशमित तथा प्राणों को पुन: जाग्रत कर सके।

जिस समय हम योग की कला और उसके विज्ञान का अभ्यास करते हैं, उस समय हम अनुमानातीत शान्ति और सौन्दर्य के मार्ग पर चल रहे होते हैं। इस पुस्तक में उल्लिखित विधियों का अभ्यास करते समय अन्य चिकित्सा पद्धतियों को भी एक बार आजमा लेने की इच्छा आपको हो सकती है।

एक्युपंक्चर

एक और पद्धति है, जो इन दिनों लोकप्रियता प्राप्त कर रही है। इस चिकित्सा पद्धति का योग से पर्याप्त साम्य है, चीनी दर्शन में प्राण को 'ची' कहते हैं तथा प्रकृति के द्विविधि पक्ष को 'यिन' और 'यांग' कहते हैं, जो इड़ा और पिंगला अथवा अनुकम्पी और परानुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र के समान है। 'ची' के प्रवाह में अनियमितता एवं अधिक या कम प्रवाह को व्याधि का कारण मानते हैं।

जब शरीर में रोग प्रकट हो तो 'ची' को पुनर्व्यवस्थित करना चाहिए। यह पुनर्व्यवस्था स्थापित की जाती है एक्युपंक्चर की सूइयों से, मालिश से या मोक्सा से, जो उष्मा का उपयोग है। इन यन्त्रों का उपयोग शरीर के उन बिन्दुओं पर होता है, जो सम्पूर्ण शरीर में फैली ऊर्जा वाहिकाओं पर अवस्थित हैं। चूँकि ये ऊर्जा वाहिकायें योग की नाड़ियों के समान हैं, अत: योग और एक्युपंक्चर को परस्पर परिपूरक माना जा सकता है।

दोनों ही विज्ञान मानते हैं कि रोग असन्तुलन की प्रक्रिया है और दोनों प्रवाह को पुनर्व्यवस्थित करने की राय देते हैं। दोनों ही सृष्टि की समग्रता की अवधारणा पर आधारित हैं, जिसमें मन और शरीर को अनुभवों के स्तर पर आत्मा के उपयोग के लिए कार्यकारी घटक मानते हैं। यह समग्र का एक ही पक्ष लेता है– रोग की उत्पत्ति के लिए अव्यवस्था का होना।

एक्युपंक्चर शरीर में उष्मा के आधिक्य को उच्च रक्तचाप का कारण मानता है और उसी आधिक्य को दूर करने पर जोर देता है। इस प्रकार यह योग की विचारधारा से मेल खाता है, जो कहता है कि पिंगला की (शरीर उष्मा से सम्बन्धित सूर्य नाड़ी) अति सक्रियता ही उच्च रक्तचाप का कारण है। अग्नि जो उष्मा उत्पन्न करती है, उसकी प्रचण्डता को या तो पानी से कम किया जा सकता है या उस काष्ठ-तत्त्व को हटा कर, जो ईंधन का काम करता है। एक्युपंक्चर की सूइयों या अन्य यन्त्रों के उपयोग से काष्ठ तत्त्व कम होता है

अथवा जल तत्त्व बढ़ता है। विकल्प में शरीर के उन अंगों (बिन्दुओं) को, जो अग्नि तत्त्व के अनुरूप हैं, किसी या सभी प्रतिरोधों को हटाने के लिए उद्दीप्त किया जाता है। एक्युपंक्चर दाहिने हाथ में अधिक प्रभावी प्रतीत होता है।

व्यायाम-चिकित्सा

इस चिकित्सा वर्ग में ऑस्टियोपैथी, काइरोप्रैक्टिक, जैव ऊर्जिकी, जैव पुनर्निवेश, फेल्डेनक्रैस, रॉल्फिग तथा इन्हीं विषयों पर नवीन विकसित विधियाँ आती हैं। ये व्यक्ति को अपने शरीर तथा उसकी स्थितियों, तनावों, ऐंठनों, विरूपणों आदि के प्रति सजग करती हैं। अधिकांश का आधार तो योग ही है या वह सार्वभौम सत्य है, जिस पर स्वयं योग आधारित है। सम्भवत: सर्वाधिक लोकप्रिय पद्धतियाँ रोगोपचार के उपाय के रूप में मेरुदण्ड और शरीर के विभिन्न जोड़ों का हस्तोपचार करने पर ही आधारित हैं।

काइरोप्रैक्टिक और योग में सम्बन्ध स्पष्ट है। दोनों ही मानते हैं कि सीधा और स्वस्थ मेरुदण्ड उत्तम स्वास्थ्य में सहायक है। मेरुदण्ड की ऊर्जाओं को मुक्त करने से मस्तिष्क के उच्चतर केन्द्रों द्वारा शरीर के अंगों का अच्छा संचालन होता है। अतएव वे शरीर के अन्य अवयवों के साथ मिल-जुल कर कार्य करने तथा उनसे अपनी आन्तरिक क्रिया में अधिक सन्तुलित रहते हैं।

एक्युपंक्चर के समान ही काइरोप्रैक्टिक और ऑस्टियोपैथी भी ऊर्जा सिद्धान्त पर ही काम करते हैं और वे भी मानव शरीर रचना के अनुभवों और अन्तर्दृष्टि के ही परिणाम हैं। इन पद्धतियों के ठीक प्रयोग से प्राप्त परिणामों ने सरकारी स्वीकृति भी दिला दी है। जहाँ उच्च रक्तचाप के रोगी को चिकित्सा परिणाम से सन्तोष न हो तथा जिसके लिए स्वस्थ होना अधिक महत्त्व रखता हो, और वह व्यक्ति एलोपैथी के अतिरिक्त किसी अन्य चिकित्सा पद्धति द्वारा लाभ का इच्छुक हो, तो काइरोप्रैक्टिक उसके लिए सहायक हो सकती है। अनेक व्यक्ति अपना रक्तचाप कम करने के उपाय के रूप में काइरोप्रैक्टिक को अपना रहे हैं।

योगासनों का ऑस्टियोपैथी विधियों से निकट सम्बन्ध है। दोनों मानव शरीर के संरचनात्मक पक्ष और उसके समुचित कार्य की स्थिति में पुनर्स्थापन और परिचालन पर आधारित हैं। आसनों का अतिरिक्त लाभ भी है कि उनमें विश्रान्ति और मानसिक एकाग्रता सन्निहित है तथा वे रक्तचाप के रोगी के शारीरिक सुधार के साधन भी हैं। इस प्रकार व्यक्ति अपने शरीर के कार्यों का

पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर, सन्तोष प्राप्त कर सकता है। दूसरी ओर काइरोप्रैक्टिक शरीर के निपुण हस्तोपचार हेतु बाह्य स्रोत पर निर्भर करता है। यह पेशागत व्यवसाय तक सीमित है।

योग और ऑस्टियोपैथी उपचार को सम्मिलित करने का उत्तम उपाय है कि काइरोप्रैक्टिक चिकित्सक अपनी विधि का उपयोग तीव्र पीड़ा से उबरने हेतु करे या शरीर को आवश्यक प्रोत्साहन दे, जिससे शरीर शीघ्र उत्तम क्रियाशील स्थिति में पुन: आ जाय। इसके पश्चात् वह उस स्थिति को बनाये रखने और रोग के पुनरागमन को रोकने हेतु आसनों की अनुशंसा कर सकता है। यह संयोजन कष्ट और असुविधा से शीघ्र और दीर्घकालीन आराम देता है।

काइरोप्रैक्टिक के उपयोग में प्रयोगात्मक शोध बन्दीन जैसे कार्यकर्त्ता द्वारा किया गया है, जिन्होंने प्रदर्शित किया है कि आठवीं और नौवीं वक्ष कशेरूकाओं के स्तर पर मेरुदण्ड के हस्तोपचार से प्रकुंचन दाब 10 मि.मी. पारा गिर गया तथा अनुशिथिलन दाब 5 मि.मी. पारा गिरा।[44]

नार्थप ने कम ही रोगियों में अधिक दीर्घकालीन कमी दिखाई है।[45] 100 रोगियों में उपचार के शीघ्र बाद औसत कमी 33/9 मि.मी. पारा रही।

नॉरिस ने अल्प और उच्च रक्तचाप दोनों का अध्ययन किया।[46] उन्होंने पाया कि अल्प रक्तचाप वाले रोगी अपना रक्तचाप बढ़ाने की ओर तथा उच्च रक्तचाप वाले रोगी अपना रक्तचाप कम करने की ओर अभिमुख होते हैं। दोनों ने सामान्य स्तर की ओर सुधार दिखाया जो सूचित करता है कि मेरुदण्ड के बेहतर संरेखन के द्वारा स्वचालित तन्त्रिका तन्त्र में पुनर्व्यवस्था आई। नारिस ने दो समूहों के साथ अध्ययन किया। एक का हस्तोपचार किया गया, उसे प्रयोग-समूह कहा गया। दूसरा नियन्त्रित-समूह था। उन्हें, उनका रक्तचाप-पठन लेने के पूर्व दो घण्टे तक विश्राम करने का निर्देश दिया गया। जब तुलना की गई तो परिणामों से प्रकट हुआ कि नियन्त्रित-समूह में से केवल 26% में दाब नीचे आया, जबकि प्रयोग-समूह में से 40% का दाब नीचे आया। अत: इन्होंने हस्तोपचार का सकारात्मक लाभ पाया। यह प्रमाणित करता है कि केवल विश्राम करने वालों की अपेक्षा मेरुदण्ड-हस्तोपचार का लाभ महत्त्वपूर्ण है।

आयुर्वेद

एक्युपंक्चर में हमने चीन की देशी पद्धति और योग से उसका सम्बन्ध देखा, जबकि व्यायाम-चिकित्सा में पाया कि उच्च रक्तचाप के कारण

दबाव और तनाव को समाप्त करने हेतु ये अमेरिका और यूरोप में विकसित विधियाँ हैं। इन पद्धतियों में और योग में सम्बन्ध हैं, क्योंकि वे भी प्राकृतिक और शरीर क्रिया सम्बन्धी सिद्धान्तों पर आधारित हैं, लेकिन उनको उन्हीं सांस्कृतिक और बौद्धिक वातावरण में देखा जाता है, जिनमें वे विकसित हुई है।

उपचार की देशी भारतीय पद्धति को आयुर्वेद कहते हैं। योग की परम्परा को भारत में पाँच हजार वर्षों से भी अधिक दिनों से सुरक्षित रखा गया है। अत: योग विज्ञान के तथा भारतीय उपमहादेश में विकसित अन्य उच्च परिष्कृत दर्शनों, जैसे– वेदान्त के ही सम्पर्क में आयुर्वेद विकसित हुआ है।

आयुर्वेद के सुविख्यात ग्रन्थ हैं– 'चरक संहिता' और 'सुश्रुत संहिता'। इन ग्रन्थों में रोगोपचार के सभी पक्ष समाहित हैं तथा वे प्राकृतिक और समग्रात्मक सन्दर्भ में देखे जाते हैं। सम्भवत: आयुर्वेद की सबसे महत्त्वपूर्ण अवधारणा है 'दोषों' की। ये प्रकृति के तीन अन्तर्ग्रथित पक्ष हैं, जो कि शरीर के प्रत्येक अंग में उनके कार्यों के अनुसार विभिन्न मात्राओं और गुणों में क्रियाशील हैं। ये तीन दोष हैं– वात, पित्त और कफ।

'वात संरचना और क्रिया का स्रोत है। यही पाँच रूपों में प्रकट होता है– प्राण, उदान, समान, व्यान और अपान। यह सभी आन्तरिक प्रक्रियायें, जैसे, रक्त संचरण, चयापचय, श्वसन आदि के अधो और उर्ध्व प्रवाह को प्रारम्भ करने वाला, इन्द्रियों का नियंता, सम्वेदनाओं का सहचर, शरीर के तत्त्वों का व्यवस्थापक, संश्लेषण का सिद्धान्त, वाणी का संग्रह कोष, अनुभवों और बोध का कारक, उत्तेजना और उद्दीपन का स्रोत है। यह जठराग्नि को तीव्र करता है, हानिकारक श्लेष्मा को सुखाता है तथा मलों को निष्कासित करता है। यह शरीर के सूक्ष्म और स्थूल वाहिकाओं को परिशुद्ध करता है, भ्रूणाकृति का प्रवर्त्तक है और जीवन परिरक्षण का सिद्धान्त है। हमारे शरीर में वात के ये सब सामान्य कार्य हैं।' (चरक संहिता, 1–12:8)।

वात के क्षुब्ध होने से जो रोग उत्पन्न होते हैं, वे हैं– उच्च रक्तचाप और अन्य चयापचय और रक्तसंचरण सम्बन्धी रोग, भावनात्मक या अवसाद की स्थिति तथा तनाव, विश्रान्ति, विस्फारण एवं संकुचन आदि से सम्बन्धित सभी समस्यायें।

पित्त से उपलक्षित होती है प्रकृति, स्वभाव। यह ताप शब्द से व्युत्पन्न माना जाता है। चरक कहते हैं–

"परिणाम है पाचन या अपच, प्रत्यक्ष ज्ञान की शक्ति और उसका ह्रास, सामान्य या असामान्य शरीर तापमान, स्वस्थ या अस्वस्थ रूप, भय या साहस, हर्ष या क्रोध, स्पष्टता या भ्रम तथा ऐसे अन्य परस्पर विरोधी युगल।" (चरक संहिता 1-12:11)

इससे होने वाले रोग हैं– शोथ या प्रदाह, बुखार, मवाद, दुर्गन्ध, खुजली और दर्द।

कफ का अर्थ लगाते हैं 'क' अर्थात् 'जल', और 'फ' अर्थात् 'जैव की प्रक्रिया'। इस प्रकार यह है 'जीवन-तरल', इसे श्लेष्मा भी कहा जाता है। चरक कहते हैं–

"कफ अमृत है। जीवन क्रीड़ा हेतु यह उर्वर जल है, यह जीवित तरल है, जीवद्रव, जो सभी प्रक्रियाओं का पोषण करता है, जीवन का ढाँचा है। यह सभी अवयवों को एक साथ रखता है, सभी संयोजी, पोषक, विकास सम्बन्धी, पुष्टीकरण क्रियाओं को उत्पन्न करता है। अपनी स्नेहन क्रिया द्वारा शरीर के स्वास्थ्य को उन्नत करता है। इस प्रकार यह जीवन के मूल को जल की आपूर्ति करता है। शरीर के क्रिया-सम्बन्धी पक्ष में कफ मनुष्य की शक्ति और सुरक्षा है, यद्यपि उसका जब सन्तुलन बिगड़ जाता है, तब वह तात्कालिक रूप से क्षुब्ध करने वाली अशुद्धि रह जाती है।" (चरक संहिता 1–12:12)

रोग में यह सर्दी, तरल के कारण शोथ, कब्ज, मधुमेह और अर्बुदों के रूप में प्रकट होता है।

आयुर्वेद, स्वस्थ और रुग्ण दोनों ही स्थितियों में शरीर में चल रही जीवन प्रक्रिया का अत्यन्त सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत करता है। यह स्वास्थ्य की एक ऐसी झाँकी उपस्थापित करता है, जिसे आधुनिक एलोपैथी प्राप्त नहीं कर सकी है। उच्च रक्तचाप से रोगमुक्ति की कामना की जाती है, पर रोग मुक्ति की दिशा का ही अभाव है। 'स्वास्थ्य' क्या है, हम इसी के प्रति ठीक-ठीक आश्वस्त नहीं हैं। इस तरह एक्युपंक्चर, योग और आयुर्वेद जैसी परम्पराओं का अनुसन्धान और अपने में समावेशन से एलोपैथी को लाभ ही होगा और इस प्रकार आधुनिक मनुष्य और उसके उच्च रक्तचाप के लिए आदर्श दर्शन भी स्थापित होगा।

जिस प्रकार त्रिदोषों (कफ, पित्त एवं वात) का सन्तुलन सामान्य स्वास्थ्य और रोग दोनों को प्रभावित करता है, उसी प्रकार उच्च रक्तचाप में भी इन्हीं तीनों दोषों का असन्तुलन विभिन्न लक्षण उत्पन्न करता है। उच्च रक्तचाप के

लक्षण भी इन तीनों वात, कफ और पित्त के पृथक्-पृथक् प्रभावों के कारण भिन्न-भिन्न होते हैं। अत: विभिन्न दोषों से उत्पन्न लक्षणों हेतु औषधियाँ भी भिन्न-भिन्न हो सकती हैं।

यदि रक्तचाप अचानक बढ़ता और घटता हो तथा नाड़ी की गति अनियमित हो तो यह वात प्रकृति का रक्तचाप कहलाता है। ऐसा रक्तचाप चिन्ता, तनाव या काम के अधिक बोझ, अनिद्रा अथवा घबराहट की स्थिति में भी हो सकता है। यह प्राय: तन्त्रिका रोगों से भी सम्बद्ध रहता है। निदान हेतु सूखा, हल्का तथा अप्राकृतिक भोजन नहीं लेना चाहिए। शुद्ध सम्पूर्ण आहार और विश्राम अत्यन्त आवश्यक है। रोगी को निद्रा, ध्यान और प्राकृतिक स्थलों की सैर लाभदायक होते हैं। लहसुन का सेवन मुक्त रूप से किया जा सकता है। भोजन के उपरान्त द्राक्षासव भी लिया जा सकता है।

महत्त्वपूर्ण औषधियाँ हैं– लहसुन, अश्वगंध, अर्जुन की छाल, दालचीनी, इलायची, चन्दन, इत्यादि। सारस्वत चूर्ण या दूध में जायफल भी फायदा करता है। अश्वगंध, सुगन्ध बाला (तगर) एवं ब्राह्मी को बराबर मात्रा में घी के साथ लम्बे समय तक लिया जा सकता है।

पित्त प्रकृति के रक्तचाप के लक्षण हैं– लाल चेहरा, तीव्र सरदर्द, प्रकाश सम्वेदनशीलता, नकसीर फूटना, क्रोध आना, चिड़चिड़ापन तथा जलन। यकृत की गड़बड़ी से इसका सीधा सम्बन्ध रहता है।

इसमें कटु औषधियाँ विशेष लाभदायक होती हैं, जैसे, धृतकुमारी इत्यादि। धृतकुमारी, सनाय (स्वर्ण पिष्टी) इत्यादि औषधियों द्वारा विरेचन लाभदायक होता है। ब्राह्मी इस स्थान पर विशेष लाभदायक मानी जाती है, क्योंकि इससे मस्तिष्क ठण्ढा रहता है। ब्राह्मी चूर्ण, ब्रह्म रसायन, एवं सारस्वतचूर्ण भी उपयोगी हैं।

कफ प्रकृति का रक्तचाप स्थायी प्रकृति का होता है। इसके साथ मोटापा, थकान, सूजन तथा उच्च कोलेस्ट्रॉल इत्यादि अन्य लक्षण जुड़े रहते हैं।

मक्खन, अण्डा, दूध के पदार्थ तथा वसायुक्त भोजन से परहेज करना चाहिए। लहसुन, बोल, बनसांगली, गुम्मा इत्यादि लाभदायक औषधियाँ हैं। मुलहठी से परहेज रखें। अर्जुन की छाल के एवं त्रिकटु इत्यादि अन्य लाभदायक मिश्रण हैं। उपचार हेतु आयुर्वेद के किसी अनुभवी वैद्य की सलाह लेनी चाहिए।

अन्य पद्धतियाँ

इनके अलावा अनेक स्वास्थ्यवर्द्धक पद्धतियाँ हैं। सबका अपना-अपना दृष्टिकोण है, जो जानने योग्य है। होमियोपैथी एक अतिसूक्ष्म पर सटीक विज्ञान है, जिसे अनेक डॉक्टरों, राज्य सत्ताओं और बुद्धिजीवियों का सम्मान प्राप्त है। इसके तीन मूल सिद्धान्त हैं–

- समान समान को रोग मुक्त करता है।
- अल्पमत खुराक का चमत्कार।
- रोगी का उपचार करो रोग का नहीं।

उच्च रक्तचाप के अपने उपचार में यह अनेक सम्भावनाओं के द्वार खोलता है।

उपचार की दूसरी लोकप्रिय विधि है प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति। यह प्राकृतिक विधियों, जैसे– उपवास, आहार और विश्राम के द्वारा रोगोपचार करने का विज्ञान है। प्राकृतिक चिकित्सक मानते हैं कि रोग का कारण है, जैव विष और अपशिष्ट पदार्थ, जो विभिन्न वाहिकाओं और शरीर क्रियाओं को अवरुद्ध कर देते हैं। ये हैं गलत आहार, अति भोजन, मादक द्रव्य (जैसे, तम्बाकू, शराब), माँस, विटामिन रहित भोजन, संश्लेषित भोजन तथा गलत आहार-संयोग आदि।

प्राकृतिक चिकित्सा में उच्च रक्तचाप का उपचार निम्नवत् है–

आहार नियमित किया जाता है। आहार से सभी उद्दीपक पेय और भोजन को निकाल दिया जाता है, वैसे ही पथ्यापथ्य नियम का पालन किया जाता है जैसा इस पुस्तक में पहले बताया जा चुका है। तथापि प्राकृतिक चिकित्सा में अंकुरित अन्न, भोजन के प्रधान अंग होते हैं और उसी प्रकार कच्चा भोजन भी। फल के साथ उपवास और अल्प जल के साथ उपवास, श्वसन व्यायाम, मालिश तथा धूप स्नान का प्रयोग किया जाता है जो शरीर के विष को दूर करते हैं।

सोयाबीन, जिसमें लेसीथीन होता है, उच्च रक्तचाप के लिए अत्यन्त लाभकारी माना जाता है, तथा कोलेस्ट्रॉल निक्षेपों को समाप्त करने में भी लाभप्रद है।

जड़ी-बूटियों से समृद्ध जल से एनिमा आँतों को साफ करता है। यह हठयोग की सफाई विधि शंख-प्रक्षालन और बस्ति के समान है।

पर्याप्त मात्रा में विश्राम की अनुशंसा की जाती है। मनुष्यों को अपने कार्यों और व्यक्तिगत समस्याओं पर चिन्ता समाप्त करने की राय दी जाती है,

यद्यपि प्राकृतिक चिकित्सा में इस प्रक्रिया को वैज्ञानिक रूप से सम्वर्द्धित करने की कोई पद्धति नहीं है। प्राकृतिक चिकित्सा की इस कमी को योग की ध्यान विधियाँ स्पष्टत: पूरा कर सकती हैं, क्योंकि योग स्वयं प्राकृतिक चिकित्सा विधि है, जो प्राकृतिक जीवन को विशिष्ट विधियों के सहायक के रूप में उपयोग करती है।

उपसंहार

उल्लिखित सभी विधियों के पर्याप्त फायदे हैं, लेकिन उनमें एक कमी है। ये विधियाँ यह नहीं बताती कि हम अपने भीतर गहराई में कैसे प्रवेश कर सकते हैं तथा हमारे कष्टों और उच्च रक्तचाप का क्या कारण है। उल्टे हमें बाह्य साधनों पर निर्भर कर देती हैं, जो बहिर्मुखता और अव्यवस्था को बढ़ाते हैं। कुछ समय के लिए अन्य चिकित्सा पद्धतियों से हमें लाभ हो सकता है, पर अन्ततोगत्वा हम इसी विचार पर लौटते हैं कि केवल योग व्यवस्था और समस्वरता स्थापित कर सकता है। अत: स्थायी रूप से उच्च रक्तचाप को समाप्त करने हेतु योग को केन्द्र के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए। अन्य सारी विधियाँ, चाहे आप एक्युपंक्चर को चुने या जिस किसी अन्य को, वे प्रशमन और उपचार प्रक्रिया को सरल बनाने में सहायक हो सकती हैं। ये अल्पकालिक विधियाँ हैं, जिन्हें चिकित्सक आपके आन्तरिक कार्यप्रणाली को सूक्ष्म रूप से अनुकूल बनाने हेतु उपयोग कर सकता है, पर मुख्य कार्य तो योग का ही होगा।

उच्च रक्तचाप के महासागर में योग एक रत्न है। इसी हीरे के विभिन्न फलकों की चमक विभिन्न चिकित्सा प्रणालियों में दृष्टिगोचर होती है, पर उनमें से कोई भी उच्च रक्तचाप के कारणों का उन्मूलन करने में सक्षम नहीं है। उनके जिन लाभकारी अंगों की चर्चा की गई है वे योग में उपयुक्त विधियों के ही समान हैं, परन्तु योग की पद्धति में इन सब को एक समग्रता में संश्लेषित किया गया है और इनके संयोग से योग एक ऐसा बहुफलकीय रत्न हो गया है, जो अपने आन्तरिक प्रकाश से स्वत: द्युतिमान है। ज्ञान और उच्च चेतना के प्रकाश से पूरे रत्न का प्रत्येक अंग अन्य दूसरे अंगों को भी प्रकाशित करता है।

योग हमें उच्च रक्तचाप से मुक्ति दिलाता है, तथा हमें ऊर्जा, शान्ति, विवेक, ज्ञान और आनन्द से परिपूर्ण करता है।

अभ्यास

सम्पूर्ण प्रशिक्षण कार्यक्रम

उच्च रक्तचाप के उपचार हेतु अधोलिखित योगाभ्यास पाठ्यक्रम को किसी विशेषज्ञ के व्यक्तिगत मार्गदर्शन में सीखना और उसका अभ्यास करना आवश्यक है। उत्तम स्थान तो बिहार योग विद्यालय, मुंगेर या उससे सम्बद्ध योग विद्यालय या आश्रम होंगे, जहाँ निपुण संन्यासी शिक्षक उपलब्ध रहते हैं। चाहने पर इन संस्थाओं की सूची बिहार योग विद्यालय, मुंगेर से प्राप्त हो सकती है।

जिन अभ्यासों की सूची इसमें है, वे केवल सन्दर्भ और मार्गदर्शन हेतु हैं तथा हम जोर देकर कहेंगे कि बिना विशेषज्ञ के शिक्षण एवं मार्गदर्शन के आप इनका अभ्यास न करें। आपको यह भी परामर्श होगा कि इस कार्यक्रम के उत्तम परिणाम प्राप्ति हेतु आप डॉक्टर से भी नियमित सम्पर्क रखें। यदि सम्भव हो तो डॉक्टर और योग शिक्षक, दोनों परस्पर सहयोग में काम करें। इससे आपकी औषधि की मात्रा और पूरी स्थिति को ठीक से नियन्त्रित किया जा सकेगा।

अधिकतर व्यक्ति, जो यहाँ बताये गये अभ्यास करते हैं, उन्होंने अवश्य ही पूर्व में किसी योग्य डॉक्टर से अपने उच्च रक्तचाप का उपचार कराया होगा और औषधियाँ भी ले रहे होंगे। अत: उन्हें चालू रखना आवश्यक है, नियमित अन्तराल पर रक्तचाप की जाँच एवं औषधि-मात्रा का समन्जन उन्हें कराते रहना चाहिए–

- प्रथम दो सप्ताह तक प्रत्येक तीसरे दिन
- अगले दो मास तक प्रत्येक सप्ताह
- पुन: अगले दो माह तक प्रत्येक पक्ष में,
- उसके उपरान्त, जब तक रक्तचाप सामान्य स्थिति में न आ जाय, प्रत्येक माह।

इस प्रकार शनै:-शनै: औषधि को बिना किसी नकारात्मक पार्श्व प्रभाव के छोड़ा जायेगा। जब औषधि बन्द हो जायेगी तब योग साधना के दैनिक

अभ्यास की निरन्तरता ही सुनिश्चित करेगी कि आपका रक्तचाप सामान्य रहेगा तथा आपको पुन: औषधि सेवन नहीं करनी पड़ेगी।

योग सीखते समय अनेक महत्त्वपूर्ण तथ्यों में एक बात सदा स्मरण रखने योग्य है कि साधना का वास्तविक समय भी तन्त्रिका तन्त्र, अन्त:स्रावी ग्रन्थियों और मन पर गहरा प्रभाव डालता है। साधना का प्रभाव शेष दिनभर बना रहता है। यदि हम दो बार साधना करते हैं, तो प्रभाव में अधिक वृद्धि होती है। एक और अच्छा परामर्श, जिसे हमेशा याद रखना चाहिए कि आसनों का अभ्यास प्रात: और रात्रि भोजन से पूर्व आधा घण्टा या अधिक संभावना न हो, तो कम-से-कम 10 मिनट तक अवश्य किया जाय। आसन अच्छी मालिश के समान पेशियों को विश्रान्त कर देते हैं और भोजन के बाद थोड़ी देर तक वज्रासन करना पाचन क्रिया में सहायक होता है। ये अभ्यास तन्त्रिका तन्त्र को प्रशमित कर मन को शान्त करते हैं। प्रात: एवं सोने के पूर्व प्राणायाम दिन और रात को रूपान्तरित करते हैं तथा हमारे कार्यों और विश्राम दोनों की गुणवत्ता को उन्नत कर देते हैं।

अन्य जो बात ध्यान देने की है, वह है कि हम अपने जीवन की गुणवत्ता और अनुभूतियों को परिवर्तित करने हेतु साधना करते हैं। ये विधियाँ साध्य नहीं, साधन मात्र हैं। एक बार इन्हें सीख लेने पर ये हमारा स्वभाव ही बन जाती हैं, जिससे जिस क्षण भी हमारी चेतना में कोई तनाव आता है, हम स्वाभाविक रूप से थोड़ा मृदु श्वसन कर सकते हैं या शरीर को तान सकते हैं। कुछ दिनों के बाद तो इन विधियों का उपयोग करने के विषय में सोचने की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी, क्योंकि निरन्तर अभ्यास और पुनरावृत्ति के कारण ये सहज या चैतन्य रूप में हमारी प्रकृति बन जाती हैं।

किसी भी समय, जब भी स्मरण हो जाय, शरीर का सरल खिंचाव और श्वास-चेतना या अजपा-जप का अभ्यास करें। स्मरण करने हेतु अपनी घड़ी का उपयोग करें।

अभ्यास योजना

उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों के लिए सम्भवत: सबसे अधिक प्रभावी योजना होगी– पवनमुक्तासन भाग 1, नाड़ीशोधन, भ्रामरी प्राणायाम, अजपा-जप और योगनिद्रा। उच्च रक्तचाप की अधिक गम्भीर स्थिति में और यदि हृदय रोग आदि भी साथ में है, तो ये विशेष रूप से उपयोगी हैं। कभी-कभी

पवन मुक्तासन के गत्यात्मक अभ्यास में 'मेरुदण्ड ऐंठन' और कौआ चाल को छोड़ा जा सकता है, क्योंकि इनमें अधिक प्रयास और शक्ति लगती है।

बार-बार इस बात पर जोर दिया जा रहा है कि आप जो भी अभ्यास करने का निर्णय करें, उसमें किसी प्रकार का श्रम या प्रयास नहीं होना चाहिए। इस उक्ति को स्मरण रखें– मन्द, विश्रान्त और चैतन्य– फिर आपको निश्चित लाभ होगा। यदि आसनों का अभ्यास वेगपूर्वक तथा मन और भावनाओं की तनावपूर्ण स्थिति में किया जायेगा, तो लाभ अल्पमत होगा।

आसन और प्राणायाम का दिन में दो बार अभ्यास करें, विशेष रूप से प्राणायाम और अजपा का अभ्यास सोने के पूर्व। यह अभ्यासों के लाभ को दो गुना या तीन गुना बढ़ा देगा। संध्या में भोजन के पूर्व आसन का अभ्यास किया जा सकता है।

एक बार आधारभूत साधना में निपुणता आ जाय, तो कुछ माह पश्चात् चिकित्सा और योग के विशेषज्ञों के मार्गदर्शन में क्रमश: और अधिक अभ्यासों को जोड़ा जा सकता है। उच्च रक्तचाप उत्पन्न करने वाली गहरी अचेतन अशान्ति के समूल नाश हेतु अजपा जप का अभ्यास नितान्त आवश्यक है। दैनिक जीवन में शरीर और श्वास चेतना के साथ-साथ मन्त्र चेतना का उपयोग विद्यमान तनावों के प्रशमन में और नये तनावों के जमा नहीं होने में बहुत मदद देता है। मस्तिष्क और मन को मन्द करने में, शरीर को विश्रान्त करने में तथा अपने और अपने जीवन के प्रति दृष्टिकोण को परिवर्तित करने में उपर्युक्त अभ्यास प्राय: पर्याप्त होते हैं। इस प्रकार हम अपने को अधिक पूर्ण और यौगिक जीवन पद्धति की ओर उन्मुख करते हैं।

आठ सप्ताह का सघन कार्यक्रम

अधोलिखित आठ सप्ताहों की प्रशिक्षण योजना अपेक्षाकृत स्वस्थ या अल्प अथवा औसत उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों के उपयोग हेतु एक उदाहरणस्वरूप है। यह एकदम पूर्ण है और इसमें समय लगता है, अत: स्वयं को परिवर्तित करने की प्रबल इच्छा वाले, शारीरिक व्याधि रूपी जेल से मुक्ति के इच्छुक तथा योग की गहराइयों में उतरने वाले इच्छुक व्यक्तियों के लिए यह अधिक अनुकूल है।

यदि इस कार्यक्रम में कोई तनाव, थकान या श्रम लगे या अधिक समय या शक्ति लगे, तो इसमें संशोधन अवश्य ही किया जाय और यह निम्नांकित सुझावों के पालन से आसानी से हो सकता है।

1. योजना में सप्ताह के स्थान पर मास कर दें, आपकी प्रगति धीमी तो होगी, पर निश्चित होगी।
2. 5 सप्ताहों के पश्चात एक चक्र सूर्यनमस्कार का अभ्यास करें। अभ्यास बहुत मन्दगति से हो, परन्तु मन्त्र, मन्द श्वसन और हल्के खिंचाव पर ध्यान देते हुए। प्राणायामों में से उज्जायी को निकाल दें, इसे केवल अजपा में उपयोग करें। नाद, पवन और शब्द संचालन को छोड़ दें। अभ्यास योजना को सन्तुलित और छोटा करने के लिए इन सुझावों का पालन होना चाहिए।
3. आठवें सप्ताह तक इसके तीसरे भाग का अभ्यास प्रारम्भ न करें, जब तक नाड़ी शोधन भाग 2 में पूर्ण निपुणता न प्राप्त हो जाय तथा 25 चक्र अभ्यास में कोई श्रम, थकान, परिक्लान्ति या श्वासावरोध का अनुभव न हो। यदि तीसरे भाग के अभ्यास में कोई थकान या उत्तेजना हो, तो इसे छोड़ कर पुन: दूसरे भाग का ही अभ्यास अगले दो-तीन माह तक करें।

स्मरण रहे योग में जल्दबाजी न हो। नियमित अभ्यास के साथ धैर्यपूर्ण मन: स्थिति, भले ही अभ्यास प्रतिदिन 10 या 20 मिनट का ही क्यों न हो, अनियमित लम्बे अभ्यास या उच्च अभ्यासों की अपेक्षा अधिक लाभदायक होगा। अभ्यास से अनुशासन, संकल्प, धैर्य और आत्म-विश्वास उत्पन्न होता है तथा जीवन में सहज एवं प्राकृतिक रूप से स्थायी परिवर्तन आते हैं।

प्रथम और द्वितीय सप्ताह

आसन– इस पुस्तक में अंकित पवन मुक्तासन समूह।

भोजन के बाद 10 मिनट वज्रासन। (यह दैनिक आदत की तरह हो जाना चाहिए, अतएव एक ही बार लिखा जा रहा है।)

श्वास चेतना के साथ शवासन। (अधिकतम लाभ हेतु इसका अभ्यास अन्य आसनों के बीच-बीच में किया जा सकता है।)

प्राणायाम– लेटकर (प्रारम्भ में) या बैठ कर 1:1 के अनुपात में गहरे अभिश्वसन और अपश्वसन सहित सहज नियमित श्वसन। उदर श्वसन एवं वक्ष श्वसन बारी-बारी से हो।

शीतली 5 चक्र

शीतकारी 5 चक्र

विश्रान्ति– सोने के पूर्व कम-से-कम 10 मिनटों तक पहले और दूसरे चरण का अभ्यास होना चाहिए। घर में या कार्यस्थल पर अभ्यास के लिए इस विधि को आसानी से अनुकूलित किया जा सकता है, या काम करते समय या कभी भी जब आप थकान या तनाव अनुभव करें।

ध्यान– अजपाजप चरण 1

तीसरा और चौथा सप्ताह

आसन– पवनमुक्तासन

श्वास चेतना के साथ शवासन

पाँचवीं स्थिति तक सूर्य नमस्कार

शवासन

प्राणायाम– सामान्य श्वसन (प्रथम सप्ताह के समान)।

उज्जायी 21 चक्र

भ्रामरी 3 से 5 चक्र

शीतली 7 चक्र, शीतकारी 7 चक्र

विश्रान्ति– सोने के पूर्व अथवा अन्य सुविधाजनक समय पर चरण 1 से 4

ध्यान– अजपाजप चरण 1 एवं 2

पाँचवाँ और छठा सप्ताह

आसन– पवन मुक्तासन

सूर्य नमस्कार पूरा 1 से 3 चक्र (पाँचवें सप्ताह के बाद 3 चक्र)।

प्राणायाम– उज्जायी 49 चक्र तक

नाड़ी शोधन भाग 1

भ्रामरी 7 चक्र

शीतली 9 चक्र

शीतकारी 9 चक्र

ध्यान– पूर्ण अजपाजप (चार चरण में पूरा)।

नाद संचालन

पवन संचालन

शब्द संचालन

योगनिद्रा

सातवाँ सप्ताह

आसन– पवन मुक्तासन
शवासन
3 चक्र सूर्य नमस्कार
प्राणायाम– उज्जायी 49 बार। यदि ध्यान थोड़ी देर बाद में करना हो तो उज्जायी 108 बार करें।
नाड़ी शोधन चरण 1 और 2
भ्रामरी 9 चक्र
शीतली 9 चक्र
शीतकारी 9 चक्र
ध्यान– अजपाजप पूरा, 45 मिनट
योगनिद्रा– पूरी, 45 मिनट

आठवाँ सप्ताह

आसन– पवन मुक्तासन और शशांकासन
पद्मासन
सूर्य नमस्कार 5 चक्र
शवासन
प्राणायाम– उज्जायी 49 से 108 बार
नाड़ी शोधन चरण 1, 2 एवं 3
भ्रामरी 9 चक्र
शीतली 9 चक्र
शीतकारी 9 चक्र
ध्यान– अजपाजप पूरा, 45 मिनट
योगनिद्रा– पूरी, 45 मिनट

आठ सप्ताहों के बाद

आठवें सप्ताह के कार्यक्रम को कम-से-कम छः माह तक चलावें। योग शिक्षक से अपनी प्रगति की जाँच कराते रहें, जो आवश्यक परिवर्तन या समन्जन कर सकते हैं। रक्तचाप की जाँच या औषधि में परिवर्तन हेतु अपने डॉक्टर से भी मिलते रहें।

आसन

आसनों का अभ्यास आरम्भ करने के पूर्व निम्नलिखित अभ्यास टिप्पणियों को अच्छी तरह समझ लेना आवश्यक है। हालाँकि आसनों का अभ्यास कोई भी व्यक्ति कर सकता है, लेकिन अगर उचित तैयारी के बाद उनका अभ्यास किया जाए, तो वे अधिक लाभकारी होते हैं।

स्थान– आपके अभ्यास का स्थान स्वच्छ, शान्त एवं हवादार हो। दुर्गन्ध या नमी वहाँ न हो। अभ्यास का स्थान अन्य उपस्करों, अन्य सामानों और बाधाओं से रहित होना चाहिए। भूमि पर एक कम्बल या मोटी दरी रहनी चाहिए। फोम के गद्दे का उपयोग नहीं करें और न खाली भूमि का ही। शान्तिपूर्ण वातावरण निर्माण हेतु प्रतिदिन एक ही स्थान पर अभ्यास करें।

वस्त्र– वस्त्र यथासम्भव हल्के हों, जिससे शरीर संचालन में बाधा न आए। अभ्यास के पूर्व चश्मा, घड़ी तथा अन्य आभूषणों को उतार दें।

समय– अभ्यास के समय आँत और मूत्राशय खाली रहना उत्तम है, पर आमाशय तो निश्चित रूप से खाली रहना चाहिए। अतएव इसे सुनिश्चित करने हेतु भोजन के 3-4 घण्टे बाद ही अभ्यास करें। प्रात:काल नाश्ते के पूर्व अभ्यास करना उत्तम है। इसमें अभ्यासी को ब्रह्म-मुहूर्त का भी लाभ मिल जाता है, (अर्थात् 4 बजे से 6 बजे के बीच) जो समय योगाभ्यास हेतु उत्तम है। यद्यपि प्रात:काल शरीर में थोड़ा कड़ापन रहता है, पर विक्षेप न्यूनतम रहते हैं तथा वायु-मण्डल शुद्ध एवं शान्त रहता है। वैसे दिन में कभी भी आसन किये जा सकते हैं, केवल भोजनोपरान्त नहीं।

अवधि– उपलब्ध समय के अनुसार अभ्यास की अवधि सुनिश्चित की जा सकती है। प्रारम्भ में अति महत्त्वाकांक्षी लक्ष्य न रखें, जितना प्रतिदिन नियमित रूप से कर सकते हों उतना ही करें। प्रतिदिन 15 मिनट

का अभ्यास अच्छा है, न कि एक दिन, एक घण्टा और तीन दिनों तक एकदम नहीं।

क्रम– आसन से अभ्यास आरम्भ करें, फिर प्राणायाम और तब ध्यान। पर यदि समयाभाव हो तो प्रारम्भिक अभ्यास के बिना ही सीधे ध्यान कर सकते हैं।

सीमायें– यदि आप सर्दी, दस्त या अन्य किसी ऐसी बीमारी से पीड़ित हैं, तो अभ्यास न करें। इन परिस्थितियों में शरीर अपनी ऊर्जा को उन विशेष क्षेत्रों में बीमारी से संघर्ष करने हेतु लगाता है, अत: उसे अपना काम करने दें।

मन्द और नियन्त्रित गति– समस्वरता एवं आसनों से अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने हेतु श्वास के साथ नियन्त्रित गति से ही अभ्यास करना उत्तम है। तीव्र गति से अत्यधिक तनाव उत्पन्न होता है तथा अचानक एवं द्रुतवेग अधिक ऊर्जा का उपयोग करते हैं। ऊर्जा संरक्षण और पेशीय नियन्त्रण प्राप्त करना आसनों का उद्देश्य है। ये दोनों मन्द और सजग अभ्यास से प्राप्त होते हैं। मन्द अभ्यास की अवधि में उन अधिकतम पेशियों को भी विश्रान्त करना सम्भव है, जो किसी आसन विशेष से सीधे सम्बद्ध नहीं हैं। समन्वय एवं विश्रान्ति सुलभ करने हेतु श्वसन निर्देशों को सम्मिलित किया गया है। अत: उनका यथा सम्भव पालन करना अच्छा है। श्वास केवल नाक से लिया जाय।

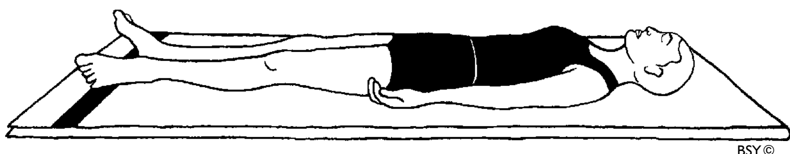
आसन की अन्तिम अवस्था में रहना– अन्तिम अवस्था अभ्यास में अधिक महत्त्वपूर्ण है। अचल अवस्था की अवधि में ही शरीर में प्रचुर और लाभदायक परिवर्तन होते हैं।

विश्रान्ति– आसन करते समय अनावश्यक बल या तनाव न लगावें। यद्यपि अधिकांश नये अभ्यासियों को प्रारम्भ में मांसपेशियों में कड़ापन अनुभव होगा, पर नियमित अभ्यास के पश्चात वे निश्चित रूप से लचीली हो जाती हैं। पेशियों को तानने हेतु उनको यथा सम्भव विश्रान्त करना आवश्यक है। यदि आपकी पेशियों में तनाव है, तो वे अभ्यास के समय तानने में प्रतिरोध उत्पन्न करेंगी।

आसनों के मध्य विश्रान्ति आसनों के समान ही महत्त्वपूर्ण है। जब व्यक्ति पूर्णत: विश्रान्त हो जाता है तो उसके अंग और पेशियाँ सामान्य आकृति ग्रहण कर लेती हैं तथा आसन के क्रम में दूषित रक्त निचुड़ जाने के बाद उनमें ऑक्सीजन युक्त शुद्ध ताजा रक्त प्रवाहित होता है। विश्राम की अवस्था में रक्त-संचरण एवं श्वसन तंत्र भी सामान्य स्थिति में आ जाते हैं।

वस्तुत: सभी आसन विश्रान्ति की भंगिमायें हैं। तथापि विश्रान्ति भंगिमाओं में शवासन की अधिक अनुशंसा की जाती है, जिसका अभ्यास आसनों के बीच-बीच में होना चाहिए। शवासन अनेक अल्प विश्रान्ति तकनीकों का एक महत्त्वपूर्ण अंग है तथा सोने की आदर्श स्थिति है। इस भंगिमा में मेरुदण्ड को पूरा सहारा मिलता है तथा निद्रा काल में पर्याप्त विश्राम प्राप्ति हेतु वैज्ञानिक रूप से अनुशंसित है।

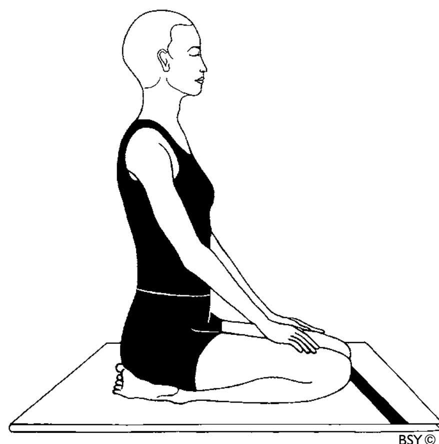
सजगता– आसन सीखते समय उसके सही निष्पादन पर ध्यान देना चाहिए। पूर्णावस्था में आप मन्त्र, श्वास या आसन विशेष से प्रभावित होने वाले शरीर के अंग के प्रति चैतन्य हो सकते हैं। ऐसी चेतना शरीर की प्राकृतिक रोगहर ऊर्जा को सही दिशा में निर्दिष्ट करने में सहायक होती है।



शवासन

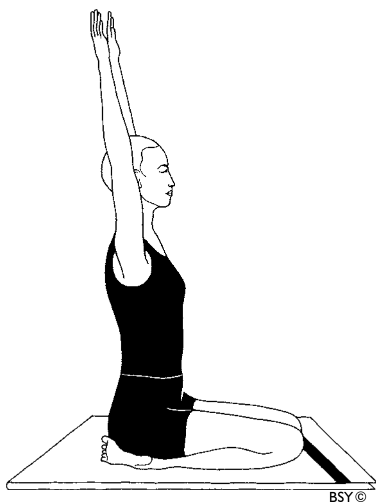
पीठ के बल लेट जाइये, हाथ को शरीर के समानान्तर सीधा रखिये और हथेलियाँ छत की ओर रहें।
पैरों के मध्य थोड़ा अन्तर रखते हुए (2 फीट) उन्हें सुविधाजनक ढंग से रखिये।
आँखें बन्द कर सम्पूर्ण शरीर को विश्रान्त कीजिये। एक बार स्थिति में आ जाने के बाद थोड़ी असुविधा होने पर भी किसी अंग को मत हिलाइये।
श्वास को सहज और लयपूर्ण होने दीजिये।
श्वास और प्रश्वास के प्रति मन को सजग होने दीजिये।
श्वास की गणना कीजिये, श्वास 1, प्रश्वास 1, श्वास 2, प्रश्वास 2 और इसी प्रकार।
कुछ मिनटों तक गिनती जारी रखिये, यदि मन भटक जाय तो पुन: गिनती प्रारम्भ कर दीजिये। जितनी देर आवश्यक समझें, इस आसन में रहिये। आपका शरीर ही बता देगा कि वह कब विश्रान्त हो गया।

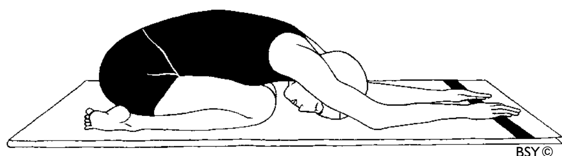
आसनों के मध्य कुछ मिनटों तक इसका अभ्यास अवश्य कीजिये। पर आसनों के अभ्यास के समापन पर थोड़ा अधिक देर तक विश्राम कीजिये।
यह भंगिमा मनो-शारीरिक तन्त्र को पूर्ण विश्रान्त कर देती है।
सोने के पूर्व, आसनों के मध्य और अन्त में, विशेषकर सूर्य नमस्कार जैसे गतिशील आसनों के अन्त में इसका अभ्यास अत्युत्तम है।



वज्रासन

घुटनों के बल खड़े हों, पैर के अँगूठे एक-दूसरे पर रहें।
घुटने साथ रहें, पर एड़ियाँ अलग रहें। अपने नितम्बों को धीरे-धीरे दोनों एड़ियों के मध्य रखें।
आपकी एड़ियाँ नितम्बों के बगल में रहें।
अपने हाथों को घुटनों पर तथा हथेलियों को शरीर के सम्पर्क में रखिये।
श्वास सहज रहे। उदर पेशियों की गति का अनुभव कीजिये तथा चेतना को निम्न उदर प्रदेश में ले जाइये।
जब भी समय मिले आप इस आसन में बैठ सकते हैं, विशेष रूप से भोजन के बाद 10–15 मिनटों तक इस प्रकार बैठिये। यह पाचन प्रक्रिया में सहायता देता है।





शशांकासन

वज्रासन में बैठ कर हाथों को घुटनों पर रखिये।
श्वास लेते हुए हाथों को उठाइये और सिर की सीध में खड़ा कीजिये।
पूरे धड़ को आगे झुकाते हुए श्वास छोड़िये, पर हाथों को धड़ की सीध में रखिये। अन्तिम अवस्था में ललाट और हथेलियाँ भूमि का स्पर्श करेंगी।
अन्तिम अवस्था में थोड़ी देर तक श्वास को रोकिये।
धीरे-धीरे वापस आते समय श्वास लीजिये और पूर्व स्थिति में आ जाइये।
धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए सामान्य स्थिति में आइये।
श्वास मन्द और शारीरिक गति से समन्वित रहे।
आसन की पूर्णावस्था में यदि देर तक उस स्थिति में रहना हो, तो श्वास रोकने के बदले मन्द श्वसन भी किया जा सकता है।



पद्मासन

पैरों को आगे फैला कर बैठिये।

एक पैर को मोड़िये और उसे दूसरी जाँघ पर रखिये।

मुड़े पैर का तलवा ऊपर की ओर रहे और एड़ी श्रोणि अस्थि के स्पर्श में रहे।

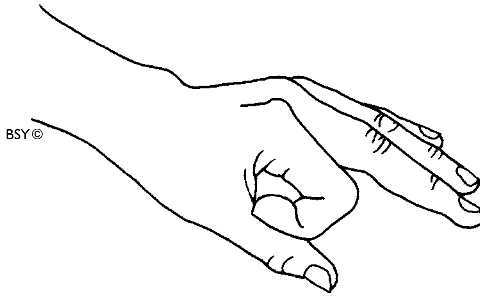
अब दूसरे पैर को भी मोड़िये और उसके तलवे को दूसरी जाँघ पर रखिये।

मेरुदण्ड सीधा स्थिर रहे, मानो भूमि में सीधा गड़ा हो।

यदि आसन करने के पूर्व नितम्बों के नीचे हल्की गद्दी रखी जाय, तो इस भंगिमा में देर तक रहा जा सकता है।

सावधानियाँ– शिक्षक से सीखकर या अभ्यास प्रकरण में वर्णित अन्य आसनों के नियमित अभ्यास द्वारा पैरों में लचीलापन लाये बिना इस आसन का अभ्यास मत कीजिये।

अभ्यास टिप्पणी– पद्मासन ज्ञान या चिन्मुद्रा के साथ किया जा सकता है। ज्ञान मुद्रा में हथेलियाँ भूमि की ओर रहती हैं, जबकि चिन्मुद्रा में हथेलियाँ छत की ओर खुली रहती हैं। दोनों ही मुद्राओं में दोनों हाथों की तर्जनियाँ इस प्रकार मुड़ी रहती हैं कि वे अँगूठों के मूल को स्पर्श करती हैं।



ज्ञान मुद्रा

यदि पद्मासन कठिन लगे तो इसके अन्य प्रकारान्तर या अर्ध पद्मासन में अभ्यास किया जा सकता है (एक पैर दूसरी जाँघ पर और दूसरा पैर नितम्ब के नीचे)। इसके पूर्ण विवरण हेतु योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट से प्रकाशित आसन प्राणायाम मुद्रा बन्ध नामक पुस्तक देख सकते हैं।

सूर्य नमस्कार

यह अभ्यास सम्पूर्ण शरीर में पुनर्जीवन का संचार कर देता है, जोड़ों को ढीला करता है, शरीर की प्रत्येक पेशी को लचीला बनाता है और रक्त परिसंचरण एवं श्वसन तन्त्र को सक्रिय बनाता है। यह इड़ा और पिंगला नाड़ियों में प्राण का प्रवाह सन्तुलित कर ध्यान की अनुकूलतम अवस्था प्रस्तुत करता है। सूर्य नमस्कार के पाँच अनिवार्य पक्ष हैं, इस अभ्यास से अधिकतम लाभ की प्राप्ति हेतु इन पाँचों का समाकलन किया जाना चाहिए।

शारीरिक पक्ष– सूर्य की बारह राशियों के अनुरूप इसकी बारह शरीर-भंगिमायें हैं।

श्वसन– प्रत्येक स्थिति पूरक (श्वास लेने), रेचक (श्वास छोड़ने) एवं अन्तर्कुम्भक (श्वास रोकने) से सम्बन्धित है, जिससे सम्पूर्ण अभ्यास क्रम श्वसन से समकालिक रहे। यह श्वसन अस्वाभाविक या प्रयासपूर्ण नहीं होना चाहिए।

मन्त्र– प्रत्येक स्थिति से सम्बद्ध एक मन्त्र है, जिसका मानसिक या वाचिक उच्चारण किया जा सकता है। ध्वनियों, अक्षरों और पदों का समुच्चय है मन्त्र, जिनका ध्यान की उच्चतम अवस्थाओं में ऋषियों और महात्माओं ने साक्षात्कार किया है। इन ध्वनियों का मन और शरीर पर अपने स्पन्दनों की शक्ति द्वारा सूक्ष्म रूप से प्रभाव होता है।

चेतना– अन्य सभी यौगिक अभ्यासों के समान ही सूर्य नमस्कार में यह अनिवार्य है। चेतना और एकाग्रता के अभाव में इस आसन के प्राप्य लाभ नहीं मिल पाते।

विश्रान्ति– अभ्यास पूर्ण हो जाने के बाद शरीर को शान्त रखने एवं इसके लाभों को आत्मसात् करने हेतु विश्रान्ति अनिवार्य है। निरन्तर श्वास चेतना के साथ शवासन विश्रान्ति की सर्वमान्य भंगिमा है।

सीखने का क्रम

प्रारम्भ में एक सप्ताह तक शारीरिक चेष्टाओं में निपुणता हेतु बारह स्थितियों से ही अवगत होना चाहिए। एक बार जब ये शारीरिक चेष्टायें थोड़े सजग निर्देशन में ही स्वचालित होने लगें, तब इन्हें श्वास से समकालित करना चाहिए। उस समय श्वास और चेष्टा, दोनों चेतना पर रहनी चाहिए। अन्त में मन्त्रों का उच्चारण सीखें और उन्हें प्रत्येक स्थिति से समकालित करें।

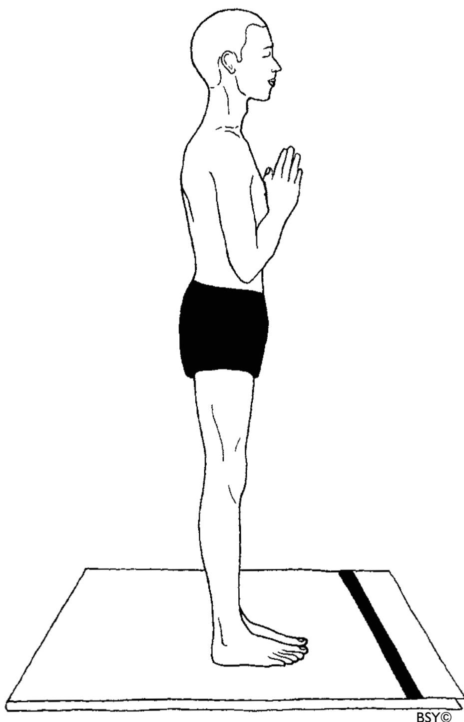
एक पूर्ण चक्र

24 स्थितियों से एक चक्र पूर्ण होता है। हमने 12 स्थितियाँ दी हैं, जिसमें दायाँ पैर आगे मोड़कर और बायाँ पैर पीछे फैलाकर अश्व संचालन भंगिमा होती है (स्थिति 4 एवं 9)। यही 12 स्थितियाँ बायाँ पैर आगे मोड़कर और दायाँ पीछे फैलाकर भी की जाती हैं।

गति और चक्र संख्या

प्रारम्भ में गति और श्वसन का सही समकालन प्राप्त करने हेतु अभ्यास धीरे-धीरे मन्द गति से करना चाहिए। तथापि नियमित अभ्यास से शरीर स्वत: सभी स्थितियों में प्रवाहित होता जायेगा और आप तेजी से अभ्यास करने लगेंगे। आप गति बढ़ा सकते हैं, परन्तु सदा सतर्क रहें कि श्वसन उथला न होने पाये और मन्त्रों का उच्चारण शुद्ध हो।

चक्रों की संख्या व्यक्तिगत स्वास्थ्य और उपलब्ध समय पर निर्भर करती है। उच्च रक्तचाप की स्थिति में पाँच चक्र अभ्यास भी कठिन है, विशेषकर प्रथम छ: महीनों में। अधिकतर व्यक्ति मन्द गति से एक या दो चक्र ही अभ्यास करें और अन्तिम अवस्था में थोड़ा विश्रान्त हो श्वास को सामान्य कर लें। थकावट खतम होने तक अभ्यास नहीं करें। हमेशा अभ्यास के अन्त में 3 से 5 मिनट तक शवासन अवश्य करें। अभ्यास के क्रम में किसी स्थिति में यदि कोई शंका या कठिनाई हो, तो अभ्यास बन्द कर विशेषज्ञ से परामर्श करें।



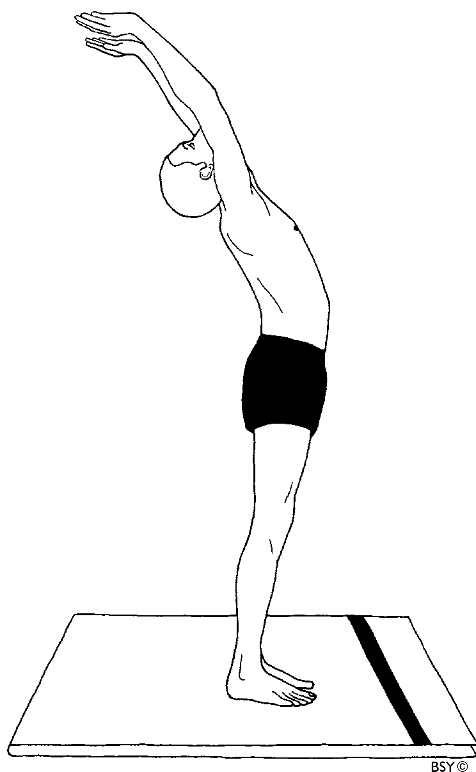
स्थिति 1– प्रणामासन

सीधे खड़े हों, दोनों पैर एक साथ रहें।
हथेलियों को छाती के सामने प्रार्थना की मुद्रा में मिला लें।
सम्पूर्ण शरीर को विश्रान्त कर लें।

श्वसन– सामान्य

एकाग्रता– अनाहत चक्र पर

मन्त्र– ॐ मित्राय नम:



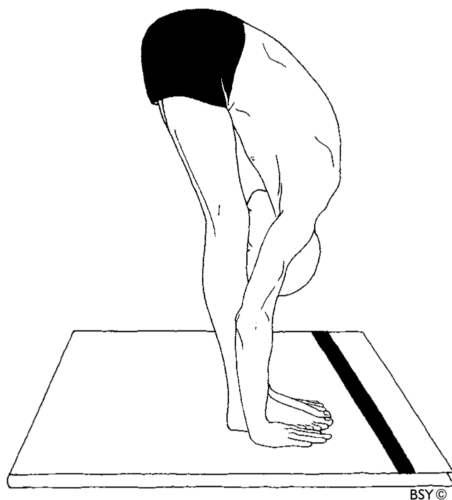
स्थिति 2–हस्त उत्तानासन

दोनों भुजाओं को सिर के ऊपर उठायें।
भुजाओं के मध्य कन्धों की चौड़ाई जितना अन्तर रखें।
सिर और शरीर के ऊपरी भाग को थोड़ा पीछे की ओर झुकावें।

श्वसन– भुजाओं को उठाते समय श्वास लें।

एकाग्रता– विशुद्धि चक्र पर

मन्त्र– ॐ रवये नम:



स्थिति 3– पाद हस्तासन

सामने की ओर झुकते जाएँ जब तक दोनों हाथों की ऊँगलियाँ या हाथ पैरों के बगल में या सामने भूमि का स्पर्श न कर लें।

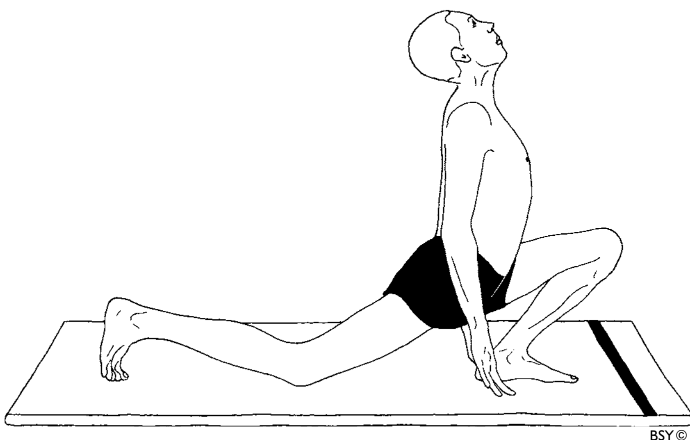
ललाट को घुटनों से स्पर्श कराने का प्रयास करें, पर जोर न लगावें।

पैरों को सीधा रखें।

श्वसन– झुकते समय श्वास छोड़ें और अन्तिम अवस्था में पेट को संकुचित करें।

एकाग्रता– स्वाधिष्ठान चक्र पर

मन्त्र– ॐ सूर्याय नमः



स्थिति 4– अश्व संचालनासन

दायें पैर को यथा सम्भव पीछे फैलायें।

साथ-ही-साथ बायें पैर को घुटने पर मोड़ें, लेकिन पंजा अपने स्थान पर ही रहे।

भुजायें अपने स्थान पर सीधी रहें।

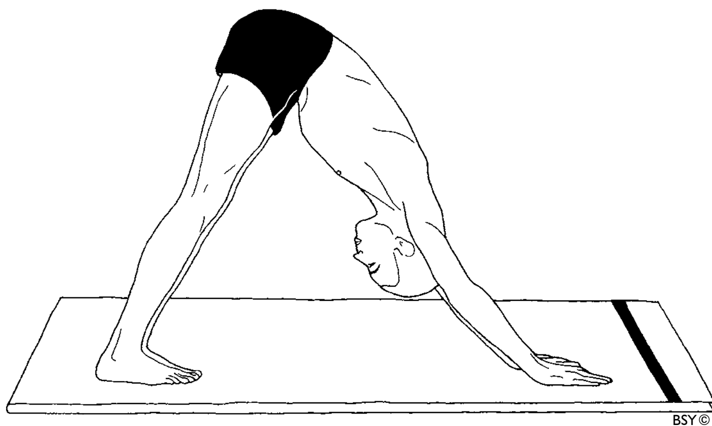
चेष्टा के अन्त में शरीर का भार दोनों हाथों बायें पैर और दायें पैर की अँगुलियों पर सधा हो।

अन्तिम अवस्था में सिर पीछे झुका हो, पीठ धनुषाकार हो और दृष्टि ऊपर की ओर हो।

श्वसन– दायाँ पैर पीछे फैलाते समय श्वास लें।

एकाग्रता– आज्ञा चक्र पर

मन्त्र– ॐ भानवे नमः



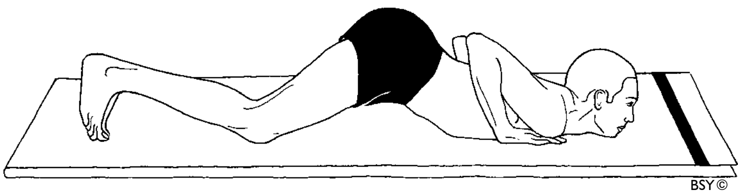
स्थिति 5– पर्वतासन

बायें पैर को सीधा कर उसे दायें पैर के पास ले जायें।
नितम्बों को ऊपर उठायें एवं मस्तक दोनों भुजाओं के मध्य नीचे करें।
तलवे भूमि पर सटे हों और हाथ-पैर सीधे रहें तथा शरीर त्रिभुज की दो भुजाओं के सदृश हो जाय।

श्वसन– बायाँ पैर सीधा करते समय श्वास छोड़ें, फिर धड़ को झुकायें।

एकाग्रता– विशुद्धि चक्र पर

मन्त्र– ॐ खगाय नमः



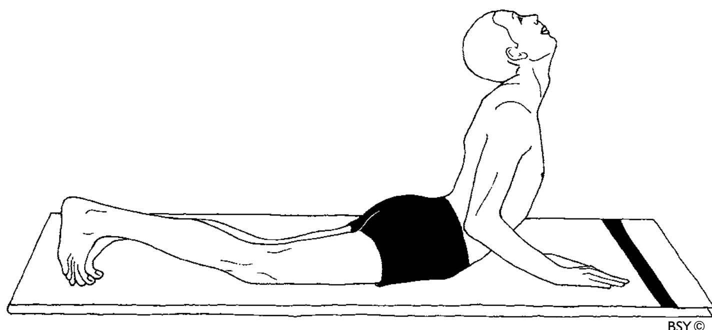
स्थिति 6– अष्टांग नमस्कार

शरीर को भूमि की ओर इस प्रकार लायें कि अन्तिम स्थिति में पैरों की उँगलियाँ, घुटने, छाती, दोनों हाथ और ठुड्ढी भूमि का स्पर्श करें। नितम्ब और उदर भूमि से थोड़ा ऊपर उठे रहें।

श्वसन– बहिर्कुम्भक। श्वास को बाहर ही रोक कर रखें।

एकाग्रता– मणिपुर चक्र पर

मन्त्र– ॐ पूष्णे नम:



स्थिति 7– भुजंगासन

कमर तक शरीर के ऊपरी भाग को ऊपर उठायें और हाथों को सीधा कर लें। सिर को पीछे की ओर झुकायें।

श्वसन– शरीर उठाते समय श्वास लें और पीठ को धनुषाकार करें।

एकाग्रता– स्वाधिष्ठान चक्र पर

मन्त्र– ॐ हिरण्यगर्भाय नम:

स्थिति 8– पर्वतासन

धनुषाकार पीठ को उठाकर स्थिति 5 के समान पर्वतासन की स्थिति में जायें।

श्वसन– नितम्बों को उठाते समय श्वास छोड़ें

एकाग्रता– विशुद्धि चक्र पर

मन्त्र– ॐ मरीचये नम:

स्थिति 9– अश्वसंचालनासन

स्थिति 4 के समान, बायें पैर को मोड़ें और उसे आगे लायें जिससे कि वह हाथों के निकट आ जाय और दायें घुटने को भूमि से स्पर्श करावें।

श्वसन– स्थिति में आते समय श्वास लें।

एकाग्रता– आज्ञा चक्र

मन्त्र– ॐ आदित्याय नम:

स्थिति 10– पादहस्तासन

यह स्थिति 3 की पुनरावृत्ति है।

दायें पैर को बायें पैर के समीप लायें।

दोनों पैरों को सीधा करें और ललाट से घुटनों का स्पर्श करें, पर जोर न लगायें।

श्वसन– चेष्टा करते समय श्वास छोड़ें।

एकाग्रता– स्वाधिष्ठान चक्र पर

मन्त्र– ॐ सवित्रे नम:

स्थिति 11– हस्त उत्तानासन

स्थिति 2 के समान शरीर को ऊपर उठायें और हाथों को सिर के ऊपर करें।

मस्तक और शरीर को पीछे झुकायें।

श्वसन– शरीर सीधा करते समय श्वास लें।

एकाग्रता– विशुद्धि चक्र

मन्त्र– ॐ अर्काय नम:

स्थिति 12– प्रणामासन

स्थिति एक के समान यह अन्तिम स्थिति है।

श्वसन– अन्तिम स्थिति में आते समय श्वास छोड़ें।

एकाग्रता– अनाहत चक्र पर

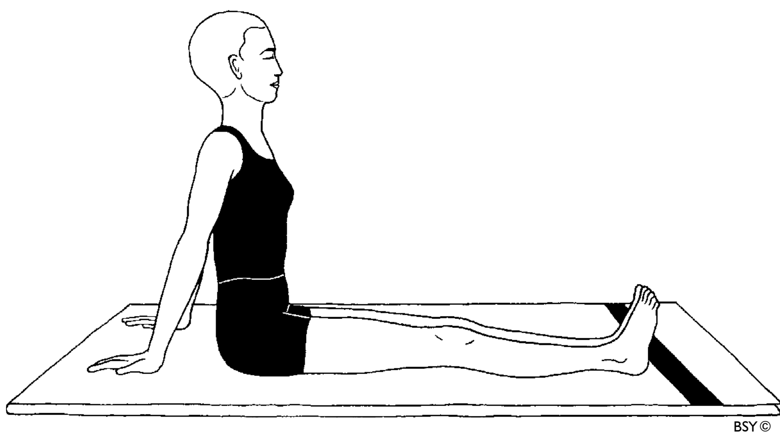
मन्त्र– ॐ भास्कराय नम:

पवन मुक्तासन

यह आसन शृंखला विशेष रूप से उन व्यक्तियों के लिए परिकल्पित है, जो उच्च रक्तचाप से पीड़ित हैं। यह सामान्य शृंखला से भिन्न है, क्योंकि जो आसन रक्त परिसंचरण तन्त्र पर अधिक दबाव और तनाव डालते हैं उन्हें हटा दिया गया है। जिन लोगों ने पहले कभी भी योगाभ्यास नहीं किया है, अथवा जिनका शरीर कड़ा है और योगाभ्यास प्रारम्भ करते ही मुख्य आसन नहीं कर सकते हैं, उनके लिए यह शृंखला अधिक उपयोगी सिद्ध होगी।

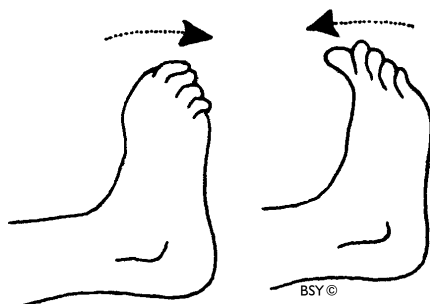
यद्यपि पवन मुक्तासन के अभ्यास जोड़ संचालन और लचीलापन उत्पन्न करने वाले अधिक प्रतीत होते हैं, पर इस शृंखला के अभ्यास शरीर के प्राणिक ऊर्जा तन्त्र पर सीधे कार्य करते हैं। ये क्रमिक रूप से पैर के अँगूठे से गर्दन तक के जोड़ों को ढीला करते हैं तथा शरीर को कड़ा बनाने वाले उन तनावों को दूर करते हैं, जो पर्याप्त ऊर्जा के प्रवाह को अवरुद्ध करते हैं। पवन मुक्तासन मस्तिष्क पर भी प्रभाव डालता है तथा सम्वेदना एवं चेष्टा के लिए क्रमिक रूप से अनुप्राणित करता है। इस प्रकार हम तन्त्रिका परिपथों को सुव्यवस्थित कर अधिक मानसिक शान्ति एवं सन्तुलन प्राप्त करते हैं।

उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों के लिए पवन मुक्तासन आसनों की आदर्श शृंखला है। यह न केवल सिर से पैर तक सुव्यवस्थित शान्ति देता है, बल्कि पूरे रक्तवाहिका तन्त्र को विश्रान्त करता है। काफी दिनों तक बिस्तर में पड़े रहने के बाद स्वास्थ्य लाभ करने हेतु इसका उपयोग किया जा सकता है। पूर्ण सजगता के साथ शरीर, श्वसन और मन को समकालित करते हुए तथा अतिरिक्त ऊर्जा और विश्रान्ति का आनन्द लेते हुए इनका अभ्यास और अनुभव करें।



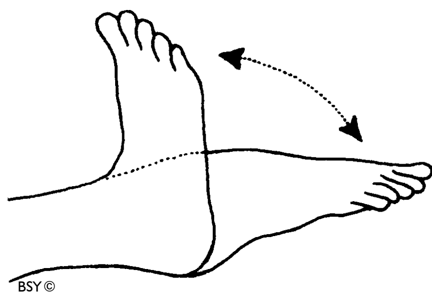
प्रारम्भिक स्थिति

पैरों को आगे फैला कर बैठ जाइये। यह प्रारम्भिक स्थिति है। हाथों को शरीर की बगल में भूमि पर रखें। अपने हाथों के सहारे थोड़ा पीछे की ओर झुक जाइये।



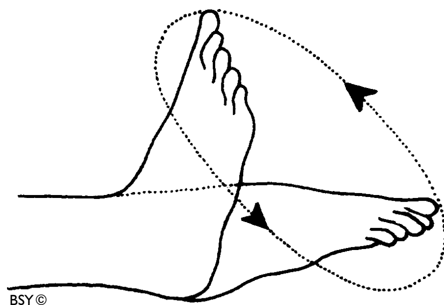
अभ्यास 1–पादांगुलि नमन

पैरों की अँगुलियों के प्रति सजग बनें।
दोनों पैरों की उँगलियों को धीरे-धीरे आगे-पीछे मोड़ें, पैरों को नहीं। 10 आवृत्तियाँ करें।



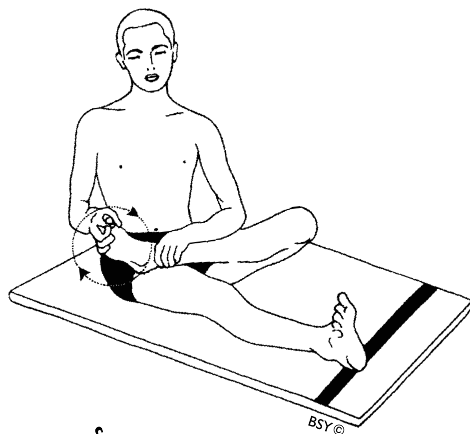
अभ्यास 2–गूल्फ नमन

प्राथमिक स्थिति में ही रहें।
टखनों को जोड़ों से झुकाते हुए दोनों पंजों को जितना सम्भव हो, उतना आगे-पीछे मोड़िये।
आगे मोड़ते समय और पीछे मोड़ते समय क्रमश: पंजों और पिण्डलियों में तनाव अनुभव करें।



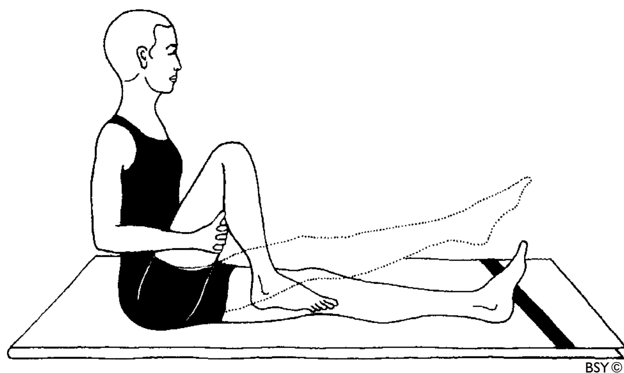
अभ्यास 3–गूल्फ चक्र

प्रारम्भिक स्थिति में रहें।
पैरों को अलग कर लें और सीधा रखें, एड़ियाँ भूमि के स्पर्श में रहें।
बायें पंजे को टखने से दायीं ओर वृत्ताकार 10 बार घुमायें।
पुन: विपरीत दिशा में भी 10 बार घुमायें।
इसी अभ्यास को दाहिने पंजे से दुहरायें। पुन: दोनों पंजों को एक साथ वृत्ताकार घुमाते हुए इसी अभ्यास को दुहरायें।



अभ्यास 4– गूल्फ घूर्णन

प्रारम्भिक स्थिति में बैठे रहें।
दायें टखने को बाँयीं जाँघ पर रखें।
हाथों की सहायता से टखने को 10 बार एक दिशा में एवं 10 बार विपरीत दिशा में घुमायें। पुनः दूसरे पैर से भी करें।



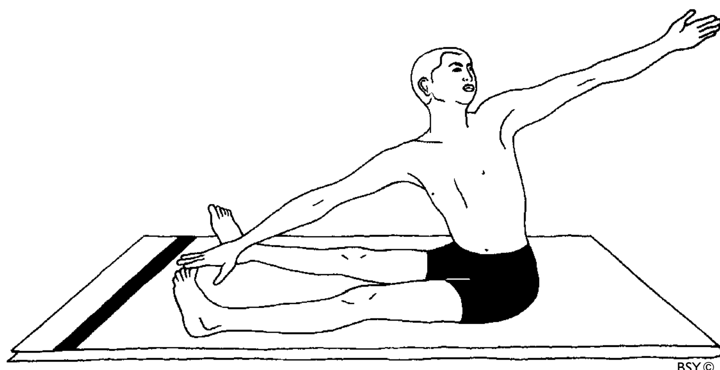
अभ्यास 5– जानु नमन

प्रारम्भिक स्थिति में रहें।
दाहिने पैर को घुटने से मोड़ें एवं दोनों हथेलियों से जाँघ को पकड़ लें।
बिना भूमि से स्पर्श किये हुए दाहिने पैर को सीधा तानें। हाथ जाँघ को पकड़े रहेंगे पर पूरा पैर सीधा हो जायेगा। फिर दाहिने पैर को यथा सम्भव

मोड़ें और जाँघ को छाती में सटायें।
10 आवृत्ति करें। फिर बायें पैर से 10 आवृत्ति करें।

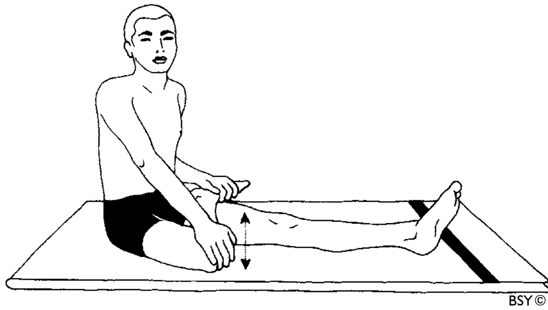
प्रकारान्तर– प्रारम्भिक स्थिति में आ जायें।

दाहिने पैर को सीधा करने के बदले जाँघ को छाती के पास लाकर अच्छी तरह दोनों हाथों से बाँध लें तथा पैर के निचले हिस्से को घुटने से वृत्ताकार रूप में घुमायें।
10 आवृत्ति करें। फिर विपरीत दिशा में 10 आवृत्ति करें।
पुन: बायें पैर से भी दुहरायें।



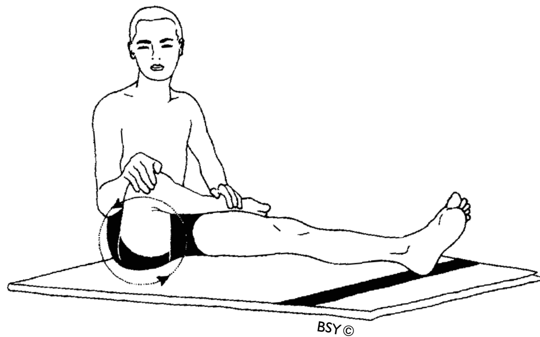
अभ्यास 6– गत्यात्मक मेरुवक्रासन

प्रारम्भिक स्थिति में आ जायें। पैरों को सुविधापूर्वक जितना फैला सकते हैं, फैला लें। हाथों को सीधा कर लें तथा बायें हाथ को दाहिने पैर के अँगूठे के पास ले आयें। दायें हाथ को पीछे की ओर इस प्रकार तानें जिससे दोनों हाथ एक सीध में हो जायें। अपनी गर्दन को पीछे मोड़ते हुए दायें हाथ की ओर दृष्टि रखें। अब धड़ को विपरीत दिशा में मोड़ें और दायें हाथ को बायें पैर के अँगूठे के पास लायें तथा बायाँ हाथ पीछे की ओर। यह एक चक्र हुआ। अधिक-से-अधिक दोनों ओर 5-5 बार मोड़ें। इसके उपरान्त थोड़े समय तक शवासन करें।



अभ्यास 7– अर्द्ध तितली आसन

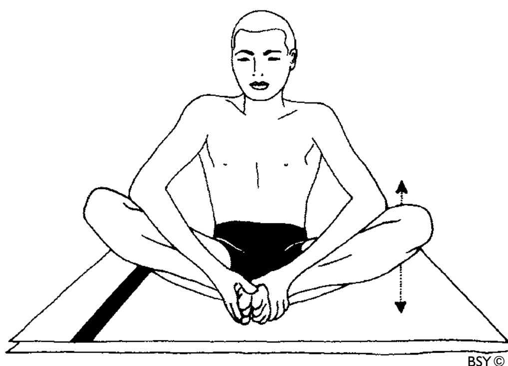
प्रारम्भिक स्थिति में बैठें। दायें पैर को मोड़ें और उसके तलवे को बायीं जाँघ पर रखें। बायें हाथ से दायाँ पैर पकड़ लें, और दायें हाथ को दायें घुटने पर रखें। मुड़े हुए पैर को दायें हाथ से धीरे-धीरे ऊपर-नीचे ले जायें। नीचे जाने में यथा सम्भव दबाव दें, ऊपर आने पर पैर को विश्राम दें। अभ्यास तब तक करें जब तक घुटना भूमि से स्पर्श करने लगे या भूमि के निकटतर होता जाय। इसी अभ्यास को बायें पैर से भी करें। कुछ दिनों/सप्ताहों के अभ्यास से घुटने आसानी से भूमि का स्पर्श करने लगेंगे।



अभ्यास 8– श्रोणि चक्र

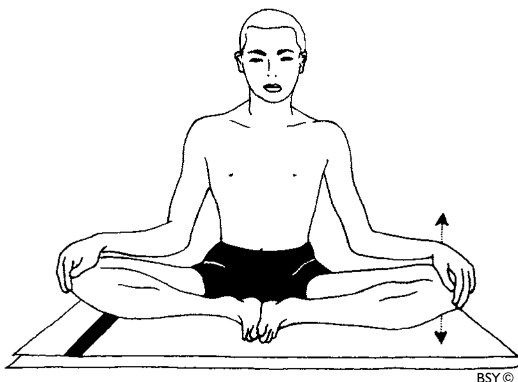
अभ्यास 7 की स्थिति में आ जायें।

अब बायें हाथ से दायें पैर की अँगुलियाँ को पकड़ लें। दायें घुटने को गोल घुमायें। 10 आवृत्ति एक दिशा में, 10 आवृत्ति विपरीत दिशा में। यही क्रिया दूसरे पैर से भी दुहरायें।

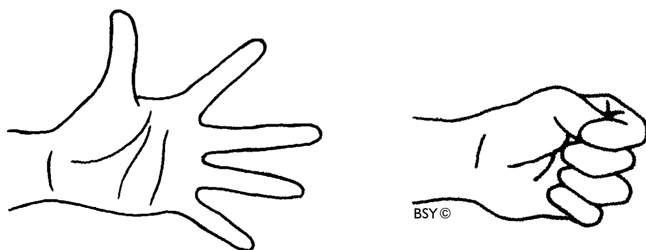


अभ्यास 9–पूर्ण तितली आसन

सीधा तनकर बैठें और दोनों पैरों के तलवों को मिला लें।
एड़ियों को शरीर के अधिक-से-अधिक निकट लायें।
हाथों की अँगुलियों को आपस में फँसा कर पंजों को पकड़ लें।
फिर धीरे-धीरे दोनों घुटनों को ऊपर-नीचे करें और केहुनियों से उन्हें दबायें।
घुटनों को नीचे दबाते समय शरीर को आगे झुका कर ललाट से भूमि का स्पर्श करने की चेष्टा करें।



पुन: दायें हाथ को दायें घुटने पर और बायें को बायें घुटने पर रखें।
हाथों के सहयोग से पैरों को नीचे दबायें और दबाव हल्का कर उन्हें स्वत: ऊपर आने दें। 20 आवृत्ति करें।

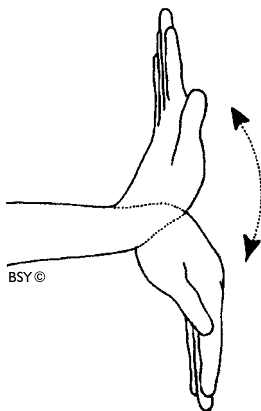


अभ्यास 10–मुष्टिका बन्धन

प्रारम्भिक स्थिति में बैठ जायें। दोनों हाथों को आगे की ओर सीधा तान लें, जिससे वे कन्धों की सीध में रहे।

दोनों ही हाथों की अँगुलियों को तानें।

मुट्ठी कसकर बाँधें, अँगूठें भीतर रहें। पुन: अँगुलियों को फैला लें और तानें। पुन: मुट्ठी बाँधें। पूर्ण सजगता के साथ 10 बार इसे दुहरायें।

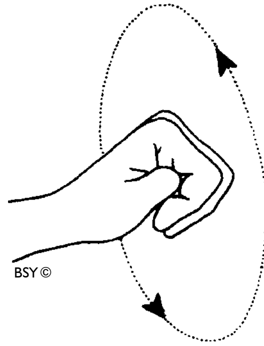


अभ्यास 11–मणिबन्ध नमन

हाथों को कलाई से ऊपर की ओर मोड़ें मानो आप हथेलियाँ दीवाल से सटा रहे हों।

पुन: नीचे की ओर मोड़ें जिससे अँगुलियाँ भूमि की दिशा में आ जायें।

10 आवृत्ति करें।



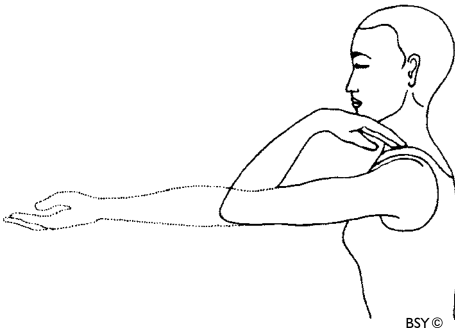
अभ्यास 12 – मणिबन्ध चक्र

अभ्यास 11 की स्थिति में रहें, पर केवल दाहिना हाथ तना रहे। मुट्ठी बाँध लें। उसे सीधी दिशा में 10 बार वृत्ताकार घुमायें। तत्पश्चात् 10 बार विपरीत दिशा में वृत्ताकार घुमायें।

यही अभ्यास बायें हाथ से 10 बार करें।

पुन: दोनों हाथों से एक साथ 10 बार करें।

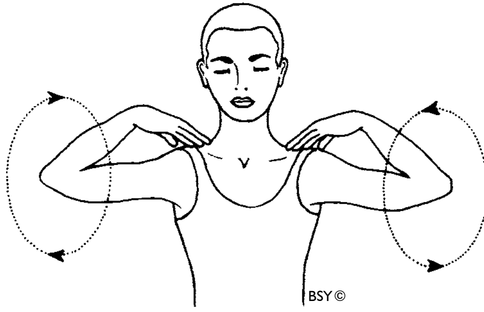
अब हाथों को नीचे कर थोड़ा विश्राम करें।



अभ्यास 13 – कोहनी नमन

हाथों को सामने सीधा फैला कर रखें और हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली हों। भुजाओं को केहुनिओं से ऊपर की ओर मोड़ें तथा अँगुलियों से कन्धों का स्पर्श करें। 10 आवृत्ति करें।

इसी अभ्यास को हाथों को बगल में फैला कर भी 10 आवृत्ति करें।



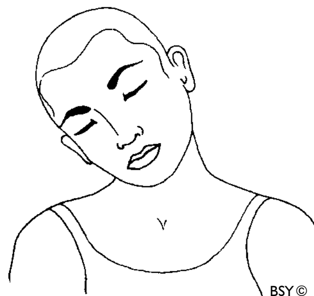
अभ्यास 14–स्कन्ध चक्र

पूर्व की स्थिति में रहें।
अँगुलियाँ कन्धों को स्पर्श करती रहें और कन्धे के जोड़ को गोल घुमायें।
सामने आने पर दोनों केहुनियाँ एक-दूसरे का स्पर्श करें।
10 आवृत्ति एक दिशा में और फिर 10 आवृत्ति विपरीत दिशा में गोल घुमायें।



अभ्यास 15(क)–ग्रीवा संचालन

अपने हाथों को नितम्बों के बगल में भूमि पर रखें।
पैर को सीधा रखें।
अब सिर को अत्यन्त धीरे-धीरे आगे और पीछे ले जाइये।
10 आवृत्ति करें।



अभ्यास 15(ख)

धीरे-धीरे सिर को पहले बायीं ओर से दायीं ओर झुकायें, परन्तु चेहरा सामने की ओर रहे।

पुनः दायीं ओर से बायीं ओर झुकायें।

दोनों ओर 10-10 बार दुहरायें।

प्राणायाम

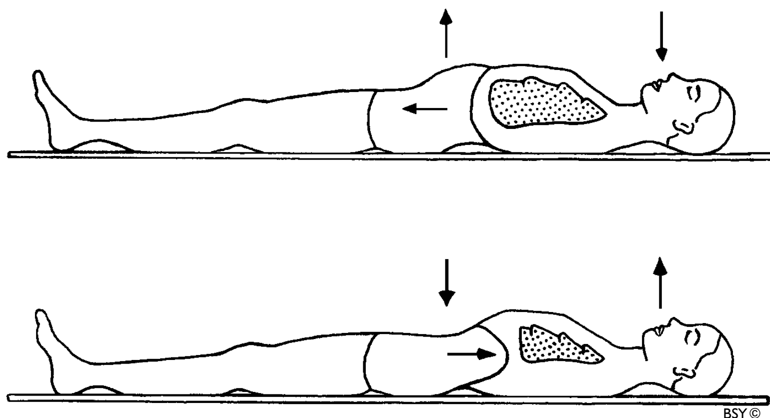
प्राणायाम का सही अभ्यास शरीर और मन के मध्य एक सेतु है। इसे पूर्ण सजगता के साथ धीरे-धीरे करना चाहिए। अधिक लाभ प्राप्त करने की भावना से इसमें जोर कभी भी नहीं लगाना चाहिए। इससे लाभ में बाधा आती है। प्रारम्भ में अपनी अधिकतम क्षमता से थोड़ा कम ही अभ्यास करना चाहिए, जिससे आपको थकावट नहीं हो।

प्राणायाम से शान्ति प्राप्त होती है तथा यह चिन्तन प्रक्रिया के हस्तक्षेप को भी रोकता है। मन की उद्विग्नता को शान्त करता है, जिससे हम अपने अस्तित्व के सूक्ष्मतर पक्षों को समस्वरित कर सकें। अत: जो भी आध्यात्मिक पथ पर चलते हैं, उनके लिए प्राणायाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

निम्नांकित बिन्दुओं को प्राणायाम का अभ्यास प्रारम्भ करने के पूर्व ध्यान से पढ़ लेना और पालन करना चाहिए–

- मूत्राशय और आँते प्राणायाम के पूर्व खाली रहें। भोजन के चार घण्टे बाद तक अभ्यास न करें, अभ्यास के पूर्व शवासन कर लें।
- आसनों के बाद परन्तु ध्यान के पूर्व प्राणायाम करें।
- प्राणायाम करते समय शरीर यथासम्भव विश्रान्त रहे, मेरुदण्ड, गर्दन और सिर सीधे और मध्य में रहें।
- प्राणायाम की अवधि में थकावट न हो। सुविधा से अधिक समय तक कुम्भक न करें। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि फुफ्फुस अत्यन्त कोमल अवयव है, थोड़े भी दुरुपयोग से वह आसानी से क्षतिग्रस्त हो सकता है।
- अभ्यास हवादार (झोंके वाली हवा नहीं), स्वच्छ एवं मनोरम वातावरण में करें।

- प्राणायाम का अभ्यास प्रारम्भ करने के बाद थोड़ा कब्ज और मूत्र की मात्रा में कमी आ सकती है। मल कड़ा होने पर नमक और मसाले न लें। यदि पतले दस्त हों, तो थोड़े दिनों के लिए अभ्यास रोक दें तथा भोजन में चावल और दही लें।
- अभ्यास के समय शरीर को सुविधाजनक चादर या कम्बल से ढक कर रखें, जिससे अभ्यास में बाह्य व्यवधान या मच्छर आदि से असुविधा न हो।



यौगक श्वसन

पहले उदर को फैलाकर तथा बाद में छाती को फैलाकर शनैः-शनैः शान्त भाव से फुफ्फुसों में यथासम्भव अधिकतम वायु भर जाने तक श्वास लें। इसके बाद श्वास छोड़ें और वायु को फुफ्फुसों से स्वतः निकलने दें। इसके साथ-साथ विश्रान्ति और निश्चिन्ता का भाव आने दें। पूरक सक्रिय हो और रेचक स्वतः (निष्क्रिय) हो। परन्तु सम्पूर्ण क्रिया बिना झटके के उदर से छाती की ओर एक शान्त लहर के समान हो।

दिनभर श्वास लेते और छोड़ते समय यह प्रक्रिया दुहराई जानी चाहिए।



भ्रामरी प्राणायाम

ध्यान के किसी सुविधाजनक आसन में बैठें।
मेरुदण्ड सीधा हो और चेहरा सामने।
आँखें बन्द कर सम्पूर्ण शरीर को विश्रान्त करें।
पूरे अभ्यास की अवधि में मुँह बन्द रखें। नासिकाओं से पूरी श्वास लें।
श्वास को भीतर में थोड़ी देर रोकें, पर बिना तनाव के।
दोनों कानों में तर्जनी अँगुलियाँ डालकर कान बन्द कर दें।
मुँह बन्द रहे, पर दाँत सटे न हों। अब मधुमक्खी के समान गुँजार करते हुए नासिकाओं से श्वास छोड़ें। रेचक मन्द और एक समान रहे।
मस्तिष्क में स्पन्दन का अनुभव करें और ध्वनि के प्रति चैतन्य रहें।
यह एक चक्र हुआ।
पाँच चक्र से प्रारम्भ करें और चक्रों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ायें।
अभ्यास अधोमुख स्थिति में न करें, इससे स्वर यन्त्र पर दबाव पड़ेगा।
फुफ्फुसों में किसी भी प्रकार का तनाव न हो।



हाथ की स्थिति– नासाग्र मुद्रा

दाहिने हाथ की उँगलियों को मुँह के सामने लायें। तर्जनी और मध्यमा को धीरे से भ्रू-मध्य पर रखें। दोनों उँगलियाँ तनावमुक्त रहें।

अँगूठा दाहिने नासिकाछिद्र के ऊपर और अनामिका बायें नासिकाछिद्र के ऊपर रहे। ये दोनों (अँगूठा एवं अनामिका) बारी-बारी से नासिकाओं को दबाकर उनके श्वास-प्रवाह को नियन्त्रित करते हैं। पहले एक नासिकाछिद्र को दबाकर दूसरे से श्वास प्रवाहित करते हैं और उसके बाद दूसरे नासिकाछिद्र को दबाकर, पहले नासिकाछिद्र को खोलकर उससे श्वास प्रवाहित करते हैं।

कनिष्ठा उँगली को आराम से मोड़ लिया जाता है। लम्बे समय तक अभ्यास करने के लिए कोहनी को बायें हाथ का सहारा दिया जा सकता है। किन्तु यह सावधानी बरतने की आवश्यकता है कि छाती न जकड़े।

नाड़ी शोधन प्राणायाम

विधि 1: प्रारम्भिक अभ्यास

ध्यान के किसी सुविधाजनक आसन में बैठ जायें, जैसे, सिद्धासन/सिद्ध योनि आसन या पद्मासन। (जो लोग किसी कारण से ध्यान के किसी आसन में नहीं बैठ सकते हों, वे पैरों को फैलाकर दीवार के सहारे बैठें या ऐसी कुर्सी पर बैठें, जिसमें पीठ सीधी रहे।) सिर और मेरुदण्ड को सीधा रखें। पूरे शरीर को शिथिल करें और आँखों को बन्द कर लें।

कुछ समय तक यौगिक श्वसन करें।
दाहिने हाथ को नासाग्र मुद्रा में रखें और बायें हाथ को घुटने पर चिन् या ज्ञान मुद्रा में रखें।
अँगूठे से दाहिनी नासिका को बन्द करें।
बायीं नासिका से 5 बार श्वास लें और छोड़ें।
श्वास-प्रश्वास की गति सामान्य रहे।
प्रत्येक श्वास के प्रति सजग रहें।
5 बार श्वास-प्रश्वास करने के बाद दाहिनी नासिका से अँगूठा हटा लें और बायीं नासिका को अनामिका से दबा कर श्वास-प्रवाह को रोकें।
श्वास-प्रश्वास की गति को सामान्य रखते हुए, दाहिनी नासिका से 5 बार श्वास लें और छोड़ें।
हाथ नीचे कर लें और दोनों नासिकाछिद्रों से एक साथ 5 बार श्वसन करें।
यह एक चक्र हुआ।
5 चक्र या 3 से 5 मिनट तक अभ्यास करें। यह सुनिश्चित करें कि नासिकाछिद्रों से श्वास-प्रवाह के समय कोई आवाज न हो।
15 दिनों तक अभ्यास करने के बाद विधि 2 का अभ्यास प्रारम्भ करें।

विधि 2: एकान्तर नासिका श्वसन

इस विधि में श्वास-प्रश्वास के समय को नियंत्रित किया जाता है।
अँगूठे से दाहिनी नासिका को बन्द करें और बायीं नासिका से श्वास लें।
साथ-साथ मानसिक गिनती करें, "1, ॐ; 2, ॐ; 3, ॐ", आराम से पूरक की समाप्ति तक। यह मौलिक गिनती है।
यौगिक श्वसन-विधि से गहरा श्वसन करें। अधिक जोर न लगायें।
अब बायीं नासिका को अनामिका से बन्द कर लें, दाहिनी नासिका से अँगूठा हटायें और श्वास छोड़ते हुए, साथ-साथ पुनः गिनती करें, "1, ॐ; 2, ॐ; 3, ॐ।" श्वास और प्रश्वास का समय बराबर रहना चाहिए।
उसके बाद, दाहिनी नासिका से श्वास लें, उतनी ही गिनती तक उसी प्रकार श्वास लें। पूरक के अन्त में दाहिनी नासिका बन्द कर लें, बायीं नासिका खोल दें और बायीं नासिका से ही, पहले की तरह गिनती करते हुए श्वास छोड़ें।
यह एक चक्र पूरा हुआ। 10 चक्र अभ्यास करें।

अनुपात और समयः कुछ दिनों के अभ्यास के बाद यदि ऐसा अनुभव हो कि कठिनाई नहीं है, तो श्वास-प्रश्वास की लम्बाई को बढ़ाकर उसमें एक गिनती और जोड़ दें। इस प्रकार अभ्यास करते जायें और जब सुविधाजनक लगे श्वास-प्रश्वास की लम्बाई को एक-एक की गिनती से बढ़ाते जायें, जब तक 24:24 के अनुपात तक न पहुँच जायें।

श्वसन में किसी प्रकार जोर न लगायें और यह सावधानी रखें कि श्वास की कमी को पूरा करने के लिए श्वास छोड़ते समय गिनती को तेज न करें। थोड़ी भी बेचैनी महसूस होने पर गिनती को घटा दें।

ऊपर के अनुपात में दक्षता प्राप्त हो जाने पर, उसे 1:2 में बदला जा सकता है। उदाहरण के लिए, 4 की गिनती तक श्वास लें और 8 की गिनती तक श्वास छोड़ें या 5 की गिनती तक श्वास लें और 10 की गिनती तक श्वास छोड़ें। इस अनुपात से मस्तिष्क और हृदय में एक शान्तिकारक लय स्थापित होती है, जो विशेष रूप से हृद्वाहिका एवं तन्त्रिका-तन्त्र सम्बन्धी रोगों, और सामान्य रूप से तनाव सम्बन्धी समस्याओं के निवारण में सहायक है।

जब इस विधि का अभ्यास पूर्ण सहजता से होने लगे, तब विधि 3 का अभ्यास शुरू कर सकते हैं।

विधि 3: अंतर्कुम्भक के साथ

इस विधि में अन्तर्कुम्भक जोड़ा जाता है।

दाहिने नासिकाछिद्र को बन्द करें और बायें नासिकाछिद्र से धीरे-धीरे 5 की गिनती तक पूरक करें।

पूरक के अन्त में दोनों नासिकाछिद्रों को बन्द कर लें और 5 की गिनती तक श्वास को फेफड़ों में रोके रखें। फेफड़ों में वायु को रोके रखने के लिए कण्ठद्वार को थोड़ा संकुचित किया जा सकता है।

दाहिने नासिकाछिद्र को खोल दें, दाहिने नासिकाछिद्र से थोड़ी श्वास लें और फिर धीरे-धीरे उसी नासिकाछिद्र से 5 की गिनती तक रेचक करें। अन्तर्कुम्भक के बाद थोड़ी-सी श्वास लेने से, श्वसन-पेशियों को पुनः क्रियाशील बनाने में सहायता मिलती है और कण्ठद्वार की बँधी हुई स्थिति को थोड़ा आराम मिलता है।

रेचक सहज और नियन्त्रित होना चाहिए और उसकी लम्बाई पूरक के बराबर ही होनी चाहिए।

रेचक के अन्त में, बायें नासिकाछिद्र को बन्द रखते हुए, तुरन्त 5 की गिनती तक दाहिने नासिकाछिद्र से पूरक करें।

पुन: दोनों नासिकाछिद्रों को बन्द कर 5 की गिनती तक अन्तर्कुम्भक करें। बायें नासिकाछिद्र को खोलें, बायें नासिकाछिद्र से ही थोड़ा पूरक करें और तब उसी नासिकाछिद्र से 5 की गिनती तक रेचक करें।

यह एक चक्र हुआ।

गिनती और श्वास-प्रश्वास के प्रति निरन्तर सजगता बनाये रखें।

10 चक्र अभ्यास करें।

अनुपात और समय: पूरक, कुम्भक और रेचक के बीच निर्धारित अनुपात को बनाये रखना सबसे महत्त्वपूर्ण है। जैसे-जैसे श्वास को लम्बे समय तक रोकने की क्षमता बढ़ेगी, वैसे-वैसे अनुपात में परिवर्तन होता जायेगा। 1:1:1 के अनुपात में दक्षता प्राप्त हो जाने पर इस अनुपात को बढ़ाकर 1:1:2 किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, 5 की गिनती तक पूरक, 5 की गिनती तक अन्तर्कुम्भक और 10 की गिनती तक रेचक करें। कुछ सप्ताहों के अभ्यास के पश्चात् जब इस अनुपात में दक्षता प्राप्त हो जाय, तब अनुपात को बढ़ा कर 1:2:2 कर दें। 5 की गिनती तक पूरक, 10 की गिनती तक अन्तर्कुम्भक और 10 की गिनती तक रेचक करें।

1:2:2 के अनुपात में दक्षता प्राप्त हो जाने पर धीरे-धीरे गिनती को बढ़ायें, पूरक में 1 (उदाहरण के लिए, 5 के स्थान पर 6), कुम्भक में 2 और रेचक में 2 गिनती बढ़ायें (जिससे कुम्भक और रेचक, दोनों 12 की गिनती तक हों)। तब एक चक्र की गिनती 6:12:12 होगी। इस अनुपात में दक्षता प्राप्त होने तक इसका अभ्यास करें।



शीतली प्राणायाम

ध्यान के किसी आसन में बैठें। हथेलियाँ घुटनों पर रखें।

जिह्वा बाहर निकाल कर उसके दोनों किनारों को इस प्रकार मोड़ें कि उसकी आकृति नली की सी हो जाए।

उस जिह्वा नली के माध्यम से धीरे-धीरे श्वास लें।

कुछ क्षणों तक श्वास को रोकें।

तत्पश्चात् धीरे-धीरे नासिका से यथासाध्य सुविधापूर्वक श्वास छोड़ें।

पुन: नलिकाकार जिह्वा के माध्यम से श्वास लें और नासिका से श्वास छोड़ें।



शीतकारी प्राणायाम

यह शीतली प्राणायाम के समान ही है और उसी प्रकार किया भी जाता है, पर जिह्वा की स्थिति इसमें भिन्न होती है।

जिह्वा पीछे की ओर मोड़ लें, जिससे उसकी निचली सतह तालु को स्पर्श करें। दाँतों को एक-दूसरे पर जमा लें और ओठों को खुला रखें।

दाँतों के मध्य से श्वास लें।

उज्जायी प्राणायाम

ध्यान के आसन में बैठें।

विश्रान्त हो आँखें बन्द कर लें।

गले में स्वरयन्त्र को थोड़ा संकुचित करें।

खेचरी मुद्रा लगायें, अर्थात् जिह्वा को इस प्रकार उलट कर मोड़ें कि उसकी निचली सतह तालू के पिछले भाग में जा लगे।

स्वाभाविक ढंग से श्वास लें और गले में श्वास के पथ के प्रति सजग रहें। यदि स्वरयन्त्र समुचित रूप से संकुचित है, तो आपको धीमी, कोमल खर्राटे की आवाज सुनाई पड़ेगी। मानो दूर से किसी झरने की ध्वनि या सोये हुए शिशु की श्वसन ध्वनि सुनाई पड़ती है।

श्वसन ध्वनि और गले में श्वसन पथ की सजगता के साथ स्वाभाविक ढंग से श्वास छोड़ें।

जोर न लगायें, केवल आपको सुनाई पड़े उतनी ही श्वसन ध्वनि होनी चाहिए।

इसी प्रकार अभ्यास करते जायें, स्वाभाविक, स्वस्फूर्त्त श्वसन, जो संकुचित कण्ठ और मुद्रा सहित हो।

यह अनुभव करने का प्रयास करें कि आप श्वास नासिका से नहीं सीधे कण्ठ से ले रहे हैं।

कुछ देर बाद आप पायेंगे कि स्वस्फूर्त्त ढंग से श्वसन धीमा और गहरा होता जा रहा है।

यह आध्यात्मिक अभ्यास आप जितनी देर चाहें कर सकते हैं तथा इसे मुद्राओं और ध्यान की विधियों से समन्वित किया जा सकता है।

ध्यान के अभ्यास

प्रथम स्थिति– सुविधाजनक स्थिति में लेट जायें।

यदि आवश्यकता हो तो अपनी शारीरिक स्थिति को एक बार व्यवस्थित कर लें।

आँखें बन्द कर लें और पूर्णतया विश्रान्त हो जायें।

अपने पूरे शरीर के प्रति सजग हो जायें।

ऐसा अनुभव करें मानो आपका शरीर भूमि का ही अंश हो।

अपने शरीर में उठने वाली सभी सम्वेदनाओं का अनुभव करें और यथासम्भव अपने पूरे शरीर को मानसिक रूप से देखने का प्रयास करें।

शरीर में हो रही किसी पीड़ा या दर्द के प्रति सजग रहें।

अपनी चेतना को इस असुविधा की ओर ले जायें तथा अन्य किसी चीज के प्रति ध्यान नहीं दें।

इस पीड़ा को ही अपनी सजगता का केन्द्र बना लें।

यदि मन अन्यत्र भटके तो भटकने दें। पर साथ-ही-साथ शरीर की उस पीड़ा के प्रति सजग रहें।

कुछ मिनटों तक इस प्रकार अभ्यास जारी रखें।

तब अपनी चेतना को दायें पैर के पंजे में ले जायें।

दायें पंजे के अतिरिक्त अन्य कुछ भी ध्यान में न रहे।

थोड़ी देर बाद अपनी चेतना बायें पंजे पर ले जायें।

आप अपने बायें पंजे का मानसिक चित्र बना सकते हैं तथा उससे सम्बन्धित सम्वेदना का अनुभव करें।

केवल उन सम्वेदनाओं के प्रति सजग रहें।

अपनी चेतना को दायें पैर में ले जायें एवं उपर्युक्त प्रक्रिया को दुहरायें।

पुन: इसी प्रक्रिया को बायें पैर, उदर, छाती, दायीं भुजा, बायीं भुजा, गर्दन, सिर और अन्त में सम्पूर्ण शरीर में दुहरायें।

यह एक चक्र हुआ।

अपनी सजगता को अधिक से अधिक बढ़ायें।

यद्यपि आपकी सजगता कभी भटक जाती है, फिर भी अपनी शरीर की सजगता को बनाये रखें।

एक चक्र और दुहरायें।

सजग रहें।

अपनी चेतना को शरीर के विभिन्न अंगों में ले जायें।

अपने शरीर के विभिन्न अंगों को इस प्रकार अनुभव करें, जैसे कभी पहले अनुभव न किया हो।

इस प्रकार अभ्यास करते जायें।

द्वितीय स्थिति– आँखें बन्द कर लें।

अपनी श्वास क्रिया के प्रति सजग हो जायें।

कल्पना करें कि आप हृदय से श्वास ले और छोड़ रहे हैं। सीधा हृदय से श्वसन करें।

अपनी प्रत्येक श्वास-प्रश्वास की गणना करें। पचास से शून्य तक उल्टी गिनती।

श्वास लेते हुए, गिनिए पचास।

श्वास छोड़ते हुए, गिनिए उनचास।

फिर श्वास लेते हुए, गिनिए अड़तालीस।

श्वसन प्रक्रिया और मानसिक गिनती के प्रति सजग रहते हुए शून्य तक गिनती करें।

आपका श्वसन स्वाभाविक हो।

यदि गिनती में भूल हो जायें, तो पुन: पचास से प्रारम्भ करें।

जितना समय आपको उपलब्ध हो, उतनी देर तक करें।

तृतीय स्थिति– अभ्यास द्वितीय स्थिति के समान ही हो, परन्तु अनुभव करें कि श्वास और प्रश्वास कण्ठ (विशुद्धि चक्र) से हो रहा है।

चतुर्थ स्थिति– अपने नासिका रन्ध्रों से हो रहे श्वास प्रवाह के प्रति सजग रहें तथा सभी सम्वेदनाओं को ध्यान में रखें।

श्वास अन्दर लेते समय गिनें, पचास।

श्वास छोड़ते समय गिनें, उनचास।
इसी प्रकार गिनते जायें और शून्य तक पहुँचें।
नासिका रन्ध्रों, श्वसन और मानसिक गिनती के प्रति पूर्ण सजगता बनाये रखें।

अजपा जप

अनवरत मन्त्र दुहराना अजपा जप है। जब बिना किसी सजग प्रयास के जप स्वचालित रूप से चले, तो वह अजपा (स्वस्फूर्त्त) हो जाता है। इस विधि में श्वास के स्वस्फूर्त्त मन्त्र सोऽहं का उपयोग मन को शान्त करने एवं इस मानसिक शान्ति को शरीर में स्थानान्तरित करने हेतु किया जाता है। इससे व्यक्ति के अस्तित्व के गहरे स्तरों पर स्वास्थ्य लाभ होता है।

अजपा जप के प्रारम्भिक अभ्यास की अवधि में अभ्यासी को नाभि से कण्ठ के मध्य सम्मुख अतीन्द्रिय पथ में प्राण के प्रवाह को अनुभव करने का प्रयास करना चाहिए। आपके अनुदेशक इस सूक्ष्मपथ का स्थान सुनिश्चित करने में सहायता देंगे। प्रारम्भ में तो आपको कल्पना की सहायता लेनी होगी, परन्तु बाद में यह सूक्ष्म पथ आपके लिए एक स्पष्ट वास्तविकता बन जायेगी।

सम्मुख अतीन्द्रिय पथ और मेरुरज्जु में प्राण के जागरण से शरीर पुनर्सन्तुलित होता है, ऊर्जा में वृद्धि होती है और मन शुद्ध होता है, जिससे सम्पूर्ण अवयव अधिक स्वस्थ और अधिक दक्षता-पूर्वक क्रियाशील होते हैं। आपकी रुग्णता शीघ्र आनन्द और ओजस्विता में बदल जायेगी।

प्रथम चरण– सुविधापूर्ण स्थिति में बैठ जायें।
आँखें बन्द कर लें और पूरे शरीर को विश्रान्त कर लें।
मेरुदण्ड को सीधा रखें, पर अधिक तनाव न हो।
अपने आप को सुझाव दें कि अभ्यास की अवधि में सभी समस्यायें और चिन्तायें नहीं आयेंगी, सारा ध्यान अजपा-जप के अभ्यास में लगा रहेगा।
जब आप तैयार हो जायें, तब अभ्यास प्रारम्भ करें।
उज्जायी प्राणायाम प्रारम्भ करें एवं खेचरी मुद्रा लगावें। (जिह्वा को उलट कर, सामान्य रूप से जिह्वा की निचली सतह से ऊपर तालु में स्पर्श करें, बिना तनाव के जिह्वा को यथासम्भव पीछे ले जायें।)
अपनी श्वसन प्रक्रिया के प्रति सजग हो जायें।

जब श्वास अन्दर लें, तब सजग रहें कि आप श्वास ले रहे हैं।
जब श्वास बाहर करें तब जानें कि आप श्वास छोड़ रहे हैं।
प्रत्येक आने-जाने वाली श्वास के प्रति पूर्ण एकाग्र रहें एवं श्वास की लय का अनुभव करें।
कुछ मिनटों तक इसी प्रकार अभ्यास करें।
अब कल्पना करें कि श्वास नाभि और कण्ठ के मध्य चल रही है।
श्वास लेने के साथ श्वास नाभि से कण्ठ की ओर आरोहण करती है।
श्वास छोड़ने के साथ कण्ठ से नाभि की ओर उतरती है।
प्रारम्भ में कल्पना करने में इस प्रक्रिया में कठिनाई हो सकती है, पर चिन्ता न करें, प्रयास करते जायें।
महत्त्वपूर्ण बात है कि अपनी श्वास के प्रति पूर्ण सजग एवं चैतन्य रहें, श्वास को लयपूर्ण, गहरा और लम्बा होने दें, पर जोर नहीं लगायें।
जैसे-जैसे आप विश्रान्त होते जायेंगे, श्वास स्वत: मन्द और गहरी होती जायेगी।
इस प्रकार कम-से-कम पाँच मिनट अभ्यास करें।
सजगता बनाये रखें।
मन यदि इधर-उधर भागे, (स्वाभाविक रूप से भागेगा ही) तो इससे संघर्ष न करें, केवल श्वास के प्रति सजगता बनाये रखें।
अब श्वास के आने-जाने के साथ सोऽहम् मंत्र को मिलायें और उससे एकरस कर दें।
एक ही साथ आप श्वास के आने और जाने, दोनों के प्रति सजग रहें और कण्ठ में सोऽहम् मन्त्र की ध्वनि के प्रति भी सजग रहें।
मन्त्र और श्वसन निश्चित रूप से समकालित (एक साथ) रहें, जिससे श्वास 'सो' की ध्वनि के साथ ऊपर की ओर चले।
'हम्' ध्वनि प्रश्वास के साथ नीचे की ओर चले।
जैसे आप नाभि से कण्ठ के मध्य श्वसन करते हैं, वैसे ही उसके साथ 'सोऽहम्' मन्त्र अविरल रूप से चलता रहे।
मन भागे तो भागने दें, पर इतना ज्ञान रहे कि वह भाग रहा है।
आप मन्त्र और श्वास की चेतना बनाये रखें।
आपने इस अभ्यास हेतु जितना समय निर्धारित कर रखा है, उतनी देर तक इसी प्रकार अभ्यास करते रहें।

द्वितीय चरण– अभ्यास पूर्णतया प्रथम चरण के समान हो, पर ध्यान 'हंऽसो' पर रहे।

श्वास छोड़ते हुए 'हम्' से प्रारम्भ करें और श्वास लेते हुए 'सो' पर समाप्त करें। 'हम्' और 'सो' के बीच अन्तराल न हो, पर 'हंऽसो' के एक चक्र के बाद क्षणिक विश्राम रहे। इसका तात्पर्य है प्रश्वास और श्वास के मध्य विराम न हो, पर श्वास के अन्त में एवं प्रश्वास के ठीक पूर्व क्षणिक विराम हो।

तृतीय चरण– अब सोऽहं का ऐसा विभाजन करें कि श्वास में 'सो' सुनाई पड़े और प्रश्वास में 'हम्', अर्थात् 'सो' और 'हम्' में नैरन्तर्य न रहे। बिना एक दूसरे में मिलायें, उन्हें अलग मन्त्र माने। श्वास और प्रश्वास के साथ क्रमश: 'सो' 'हं' की लगातार आवृत्ति न हो।

चतुर्थ चरण– तृतीय चरण के समान, परन्तु अब सोऽहं की अनवरत आवृत्ति हो। अर्थात् श्वास और प्रश्वास के साथ सोऽहम्, सोऽहम्, सोऽहम् की अखण्ड और अनन्त आवृत्ति होती रहे। अन्य रूपान्तर– श्वास की ऊर्ध्व गति नाभि से हृदय तक 'सो' के साथ हो, पर जब श्वास हृदय से ऊपर कण्ठ तक जायेगा तब यहाँ मन्त्र रहेगा 'हम्'। प्रश्वास कण्ठ से प्रारम्भ हो नीचे की ओर 'हम्' मंत्र के साथ चलेगा, पर हृदय से नीचे जाते समय मंत्र 'सो' साथ चलेगा नाभि तक। यह एक अखण्ड वृत्त होगा, बिना प्रारम्भ और अन्त के। 'सोऽहं', 'हंऽसो' में मिल जायेगा।

कुण्डलिनी क्रिया

निम्नांकित विधियाँ क्रिया योग के अभ्यास हैं, जिसका शक्तिशाली प्रभाव प्राण-शरीर पर तो पड़ता ही है, स्थूल और मानसिक शरीरों पर भी पड़ता है। ये प्राण को जाग्रत करती हैं तथा प्राण शरीर और स्थूल शरीर में पुन: सामंजस्य भी उत्पन्न करती हैं। ये काइरोप्रैक्टिक के परिचालन के समान ही काम करती हैं, पर मानव अस्तित्व के मानसिक और प्राणिक स्तरों पर। इनके विस्तृत ज्ञान हेतु स्वामी सत्यानन्द सरस्वती द्वारा लिखित पुस्तक 'ध्यान-तंत्र के आलोक में' पढ़नी चाहिए, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर से प्रकाशित है।

नाद संचालन

सुविधापूर्वक बैठें या लेट जायें।

आँखें बन्द कर अपनी श्वसन क्रिया के प्रति सजग हो जायें।

उज्जायी प्राणायाम करें।
कुछ मिनटों तक श्वसन चेतना बनाये रखें।
कल्पना करें कि आप जैसे श्वास लेना प्रारम्भ करते हैं, श्वास मूलाधार से सहस्रार चक्र की ओर चलता है।
श्वास छोड़ते समय विस्फोट के साथ जोर से ॐ का उच्चारण करें।
श्वास और ॐ, सहस्रार से मूलाधार चक्र तक मेरुदण्ड में एक साथ उतरते हैं।
यह एक चक्र हुआ। 13 आवृत्ति करें।

टिप्पणी– ॐ का 'ओ' सहस्रार से प्रारम्भ हो और 'म्' से मूलाधार में अन्त हो।

पवन संचालन

यह अभ्यास भी नाद संचालन के ही समान है।
सुविधापूर्वक बैठें या लेट जायें।
आँखें बन्द कर लें।
श्वास लेते समय अनुभव करें कि श्वास मेरुदण्ड में मूलाधार से सहस्रार की ओर ऊपर जाता है। श्वास छोड़ते समय श्वास मेरुदण्ड में सहस्रार से मूलाधार की ओर नीचे जाता है।
पूरे अभ्यास में उज्जायी प्राणायाम करें।
49 आवृत्ति पूरी करें।

शब्द संचालन

यह पवन संचालन के समान ही है, परन्तु आप श्वास लेते समय मेरुदण्ड में श्वास के साथ मन्त्र 'सो' को उठता हुआ अनुभव करें तथा श्वास छोड़ते समय मन्त्र 'हम्' को श्वास के साथ मेरुदण्ड में नीचे उतरता हुआ अनुभव करें।
पूरे अभ्यास में उज्जायी प्राणायाम करें।
59 चक्र पूरा करें।

योगनिद्रा

पूर्ण शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक विश्रान्ति प्राप्त करने हेतु योगनिद्रा एक सुसंगत उपाय है। निद्रा और जागृति की देहरी पर विश्रान्त चेतना की अवस्था है यह, जो अवचेतन और अचेतन मनों से सम्पर्क का अवसर प्रदान करती है।

योगनिद्रा यौगिक प्रशामक है, सम्पूर्ण शरीर तन्त्र के माध्यम से समस्वरता और सुखानुभूति उत्पन्न करने वाला प्राकृतिक साधन है। यह ध्यान की अत्युत्तम प्रभावी विधि है। बीमार और अशक्त व्यक्तियों में प्राण की जागृति करने वाली, तन्त्रिका तन्त्र को पुनर्यौवन प्रदान करने वाली और अत्युच्च रोगहर शक्ति देने वाली है। मनोदैहिक रोगों को दूर करने के निमित्त यह विशेष रूप से उपयोगी है। विश्व भर के अस्पतालों और उपचार गृहों में इससे मिलती-जुलती विधियों का उपयोग होता है।

इस विधि का उपयोग कहीं भी और कभी भी किया जा सकता है। तथापि उत्तम स्थान होगा– एक हवादार कक्ष, जहाँ हल्का प्रकाश और सुविधाजनक तापमान हो। शरीर पर हल्के और ढीले कपड़े हों, ऊपर से एक पतली चादर रहे जो मच्छर, मक्खियों और ठण्ढक से अभ्यासी को सुरक्षा दे सके। एकान्त आवश्यक है तथा यथासंभव व्यवधान नहीं होना चाहिए।

योगनिद्रा के अभ्यास का उत्तम समय प्रात:काल है, 4 से 6 बजे के बीच या फिर जब आप सोने जाते हैं। आपने एक बार जो समय चुन लिया, उसी समय पर अभ्यास करने का प्रयास करें। भोजन के तुरन्त बाद अभ्यास न करें, भोजन के पचने के लिए कम-से-कम दो घण्टे का समय दें।

योगनिद्रा का अभ्यास शवासन की भंगिमा में करते हैं, जिसमें सिर, धड़ और सभी अंग सीधी रेखा में रहते हैं। कुछ लोग सिर या कमर के

नीचे एक पतले तकिये की आवश्यकता अनुभव कर सकते हैं, जो उन्हें दिया जा सकता है।

अभ्यास के क्रम में इसकी विधि पर ठीक से पकड़ प्राप्त करने का लक्ष्य रखना चाहिए, जिससे आप सारे अनुदेशों को बिना प्रयास के ही स्मरण कर सकें। हमारा परामर्श है कि इसे किसी योग शिक्षक से सीखना चाहिए, परन्तु यदि किसी कारणवश ऐसा सम्भव न हो, तो अनुदेशों को किसी कैसेट में बोल कर भर दें या अभ्यास के समय कोई उन्हें आपके लिए पढ़ दें। (बिहार योग विद्यालय में इसका तैयार कैसेट भी रहता है।)

संकल्प

संकल्प एक सकारात्मक लघु शब्दावली है, जिसे योगनिद्रा के अभ्यास के प्रारम्भ और अन्त में मानसिक रूप में दुहराया जाता है। यह बीज रूप में होता है, जो अवचेतन मन की गहराइयों में आरोपित हो जाता है तथा यदि निष्ठा और भावना के साथ उपयोग किया जाय, तो आश्चर्यजनक परिणाम देता है। इस संकल्प में महति उपचारात्मक सम्भावनायें हैं, यदि मन की अत्युच्च ग्रहणशील अवस्था में एक सकारात्मक संकल्प को आरोपित किया जाय। यह लघु हो, सटीक हो, और गहन रूप से अनुभूत हो। निम्नांकित संकल्प बड़े उपयोगी हैं–

- मैं पूर्वस्वास्थ्य लाभ करूँगा।
- मैं पूर्ण स्वस्थ हो जाऊँगा।
- मैं व्याधियों से परे अपरिवर्तनशील चेतना हूँ।

आपको अपना संकल्प उन्हीं शब्दों और उसी क्रम में पूर्ण विश्वास और दृढ़ उत्साह के साथ तब तक दुहराना चाहिए, जब तक वह आपके जीवन की वास्तविकता न बन जाये।

मानस दर्शन

मस्तिष्क के अति सक्रिय क्षेत्रों में एक है दृश्य-प्रान्तस्था, जो संकेत है कि मस्तिष्क चाक्षुष बिम्ब योजना के प्रति अति ग्रहणशील है। इसका तात्पर्य है कि आन्तरिक या मानसिक कल्पना का मस्तिष्क और इस प्रकार पूरे अवयव-संस्थान पर अत्यधिक शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है। योगनिद्रा के निम्नांकित अभ्यास में उच्च रक्तचाप के लिए विशिष्ट मानस-दर्शन समाविष्ट कर हम आत्मोपचार हेतु इसी तथ्य का उपयोग करते हैं।

प्रारम्भ में तो इन मानस दर्शनों में काफी कल्पना की आवश्यकता पड़ती है, परन्तु अभ्यास करते-करते उनमें स्पष्टता और स्थूलता आती है। जैसे-जैसे चेतना का विस्तार होगा, आप उसे केवल स्वास्थ्य की ही दिशा में नहीं ले जा सकते, वरन् उच्चतर चेतना के क्षेत्रों में भी ले जा सकते हैं।

अभ्यास

योगनिद्रा के लिए तैयार हो जाइये। शवासन में लेट जाइये एवं अपने को अधिक-से-अधिक सुविधाजनक स्थिति में ले आइये। दोनों पैरों को अलग रखें और उन्हें बाहर की ओर झूलने दीजिये। भुजायें शरीर की बगल में रहें और हथेलियाँ ऊपर की ओर खुली हुई...*विराम*...अपने कम्बल, कपड़ों और स्थिति को पुनर्व्यवस्थित कर लें, जिससे आप बिना किसी शारीरिक असुविधा या बिना हिले योगनिद्रा का अभ्यास पूरा कर सकें। आँखें बन्द कर लें और उन्हें अभ्यास की समाप्ति तक बन्द ही रखें। ...*दीर्घ विराम* ...योग निद्रा का अभ्यास केवल सुनने और अनुभव करने की क्रिया है। ये ही महत्त्वपूर्ण बातें हैं।...*विराम*...योगनिद्रा के अभ्यास में आप चेतना के स्तर पर कार्य करते हैं...और श्रवण के स्तर पर। स्वप्न में आपका नियंत्रण नहीं रहता, पर योगनिद्रा में आप ही स्वप्न के निर्माता होते हैं...*विराम*...अपने को मानसिक रूप से कहिये– 'मैं सोऊँगा नहीं'...'मैं सो नहीं सकता'।...*विराम*... थोड़ी देर तक आप शान्त और स्थिर होते जायें...लम्बी श्वास लें। श्वास लेते समय सम्पूर्ण शरीर में शान्ति व्याप्त होने दें। श्वास छोड़ते समय मानसिक रूप से कहिये– *विश्रान्त।*

दूर की आवाजों के प्रति सजग बनें, अतिदूरस्थ ध्वनियों के प्रति, जिन्हें आप सुन पायें, सजग बनें। अपनी श्रवणेन्द्रिय को रडार की तरह सक्रिय बना लें, जो दूर से दूर की ध्वनियों को खोज ले, कुछ क्षणों तक उन्हें सुनें।... *विराम*...अपनी चेतना को एक ध्वनि से दूसरी ध्वनि पर घुमाते जायें। उनके उद्गम पर विचार न करें।...*विराम*...क्रमशः समीपस्थ ध्वनियों की ओर अपनी चेतना को ले चलें। पहले भवन से बाहर की ध्वनि, पुनः भवन के अन्दर की ध्वनि पर।...*विराम*...अब अपनी चेतना को कमरे के अन्दर लायें। बिना आँखें खोले कमरे की दीवारें, छत, फर्श, फर्श पर लेटे अपने शरीर के प्रति सजग होते जायें...*विराम*...भूमि पर लेटे अपने स्थूल शरीर के अस्तित्व के प्रति सजग हों। पूरी तरह निश्चल पड़े अपने शरीर के प्रति

पूर्ण सजग हो जायें...*विराम*...आपका शरीर जो भूमि पर पड़ा है...उसके भूमि से स्पर्श बिन्दुओं के प्रति सजग हो जायें...*विराम*...

अपने सहज श्वास के प्रति सजग हो जायें...अपने गहरे, सहज, स्वाभाविक श्वास के प्रति सजग हों। इन पर एकाग्र न हों, क्योंकि इससे अभ्यास में बाधा होगी...*विराम*...आप अनुभव करते जायें और जानें कि श्वास चल रही है...*विराम*...अब योगनिद्रा का अभ्यास प्रारम्भ होता है ...मानसिक रूप से अपने को कहें– "मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ। मैं सोऊँगा नहीं। मैं सोऊँगा नहीं। मैं योगनिद्रा का अभ्यास करने जा रहा हूँ।"

संकल्प– यही समय संकल्प करने का है...*विराम*...एक सरल संकल्प। पूरी भावना और निष्ठा से अपने संकल्प को तीन बार दुहरायें। कुछ साधारण नहीं, अपने सम्पूर्ण अस्तित्व हेतु एक सकारात्मक लक्ष्य... *विराम*।

चेतना को घुमाना– शरीर के विभिन्न बिन्दुओं पर चेतना को शीघ्रता से भ्रमण कराना...जितना शीघ्र हो सके...चेतना एक से दूसरे बिन्दु पर घुमाते जायें। शरीर के अंगों के नाम मानसिक रूप से दुहराते जायें और उनके प्रति सजग होते चलें। यह अभ्यास दाहिने हाथ से प्रारम्भ होता है...*विराम*...

दाहिनी ओर– दायें हाथ का अँगूठा, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली, पाँचवीं अँगुली, हथेली, कलाई, केहुनी, कन्धा, काँख, कमर, नितम्ब, दायीं जाँघ, घुटना, पिण्डली, टखना, एड़ी, तलवा, दायें पैर का अँगूठा, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली, पाँचवीं अँगुली।

बायीं ओर– बायें हाथ का अँगूठा, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली, पाँचवीं अँगुली, हथेली, कलाई, केहुनी, कन्धा, काँख, कमर, नितम्ब, बायीं जाँघ, घुटना, पिण्डली, टखना, एड़ी, तलवा, बायें पैर का अँगूठा, दूसरी अँगुली, तीसरी अँगुली, चौथी अँगुली, पाँचवीं अँगुली...

पीठ– दायाँ कन्धा, बायाँ कन्धा, दायें कन्धे की हड्डी, बायें कन्धे की हड्डी, दायाँ कुल्हा, बायाँ कुल्हा, मेरुदण्ड, पूरी पीठ...

सामने– सिर का शीर्ष भाग, ललाट, दायीं भौंह, बायीं भौंह, भ्रूमध्य, दायीं आँख, बायीं आँख, दायाँ कान, बायाँ कान, दायाँ गाल, बायाँ गाल, नाक, नासिकाग्र, निचला ओंठ, ऊपर का ओंठ, ठुड्ढी, कण्ठ, गले की दायीं हड्डी, बायीं हड्डी, दायीं छाती, बायीं छाती, मध्य भाग, नाभि, उदर, निम्न उदर...

मुख्य अंग– पूरा दायाँ पैर, पूरा बायाँ पैर, दोनों पैर एक साथ...पूरा दायाँ हाथ, पूरा बायाँ हाथ, दोनों हाथ एक साथ...पूरी पीठ, पूरा सामने का हिस्सा, पूरा सिर, पूरा शरीर, पूरा शरीर, पूरा शरीर...*दीर्घ विराम...*

श्वसन– अपना ध्यान श्वास और प्रश्वास की ओर ले चलें...*विराम...*नाभि से कण्ठ के मध्य के पथ में श्वास का आना-जाना अनुभव करें...श्वास लेते समय नाभि से कण्ठ तक ऊपर आती है, श्वास छोड़ते समय कण्ठ से नीचे नाभि की ओर जाती है...प्रयास नहीं करें...केवल सजग हो जायें ...*विराम...*अनुभव करें श्वास लेते समय शरीर फैलता है...श्वास छोड़ते समय शरीर विश्रान्त होता है...श्वास और विश्रान्ति के साथ शरीर में ऊर्जा को भरने दें। प्रश्वास के साथ शरीर को संकुचित होने दें, जिससे सभी विकार बाहर निकल जाएँ...*विराम...*श्वास और प्रसार के साथ ऊर्जा को शरीर की प्रत्येक कोशिका और प्रत्येक ऊतक में प्रवाहित होने दें। प्रश्वास और संकुचन के साथ शरीर के सभी मल और नकारात्मकता को निकल जाने दें। सोयें नहीं, अभ्यास करते रहें...*दीर्घ विराम...*

मानस दर्शन– आप जगे हैं या सोये हैं, जाँच कर अपने से कहें– मैं जगा हूँ। मणिपुर चक्र के प्रति सजग बनें, जो सौर जालक क्षेत्र (सोलर प्लेक्सस) का आध्यात्मिक केन्द्र है। नाभि के ठीक पीछे मेरुदण्ड में मणिपुर चक्र के प्रति सजग बनें...जैसे-जैसे आप श्वास छोड़ते हैं, अनुभव करें कि आपके शरीर में प्राण शक्ति मणिपुर में एकत्र हो रही है...*विराम...*

श्वास छोड़ें और अपने सम्पूर्ण प्राण को, अपनी समस्त रोगहर जीवनी शक्ति को एकत्र कर मणिपुर चक्र में केन्द्रित करें...*विराम...*फिर श्वास लें और अनुभव करें कि यह रोगहर जीवनी शक्ति सम्पूर्ण शरीर के सभी अंगों की ओर प्रवाहित हो रही है...*विराम...*श्वास छोड़ते समय प्राण को मणिपुर चक्र की ओर प्रकाश शलाकाओं के रूप में केन्द्रित होते अनुभव करें...*विराम...*पुन: श्वास लेते समय अनुभव करें कि यह रोगहर प्राण मणिपुर से शरीर के सभी अंगों में सुनहरी रोगहर सूर्य रश्मियों के समान फैल रहा है...*विराम...*

अपनी नाभि में एक सूर्य को, स्वर्णिम प्रज्वलित सूर्य को देखें...जो स्वास्थ्य प्रदायी किरणें विकीर्ण कर रहा है...*विराम...*जैसे जलते कोयले से चिनगारियाँ चारों ओर चटखती हैं, अनुभव करें कि उसी प्रकार रोगहर ऊर्जा आपके शरीर में विकीर्ण हो रही है...ऊर्जा की प्रकाशमय शलाकाओं

को स्पष्ट रूप से देखें...मानो आतिशबाजी की फुलझड़ियाँ, सतरंगी प्रकाश रेखायें चारों ओर उड़ रही हैं...*विराम...*

मणिपुर की अजस्र प्रकाश शलाकाओं के भण्डार के रूप में कल्पना करें, मानो कोई ज्वालामुखी हो, जिससे प्रकाश स्फुल्लिंग, विद्युत वेग से उड़ रहे हैं...वे समस्त शरीर में व्याप्त होते जा रहे हैं...*विराम...* अब विस्फोट ठहर गया है और प्रकाश शलाकायें केन्द्र की ओर सिमट रही हैं...जो पुन: अगले विस्फोट में उड़ेंगी रोगहर प्राण के प्रज्वलित ज्वालामुखी में...*दीर्घ विराम...*

रोगहर प्रतीक– अब अपनी चेतना को चिदाकाश में ले चलें–अपनी बन्द आँखों के सम्मुख दिखाई पड़ने वाले आकाश में चेतना को एकाग्र करें। शून्य में आप नीला आसमान देखते हैं–एक विशाल स्वर्णिम सूर्य देखते हैं...उस सूर्य की गर्मी और ऊर्जा का अनुभव करते हैं...प्रकाश का विस्फोट...नीला आसमान...एक त्रिशूल...एक षट्कोण तारा...एक बगीचे के मध्य एक गोलाकार तालाब...उस तालाब के मध्य एक फौव्वारा... उस फौव्वारे से स्वर्णिम जीवनदायी तरल की फुहार... नीला कमल... उजला कमल...लाल कमल...शिवलिंग...मोमबत्ती की लौ...एक सोने का अण्डा...तारों से भरा आकाश...सुनहरा चन्द्रमा... सुनहरी नदी... सुनहरे जल का समुद्र...असीम सुनहरा सागर...अपने को सागर तट पर खड़ा देखें...आप सागर में कूद पड़ते हैं...अनुभव करें आप चारों ओर से जल में घिरे हैं–स्फूर्तिदायक लग रहा है... आपके सम्पूर्ण अस्तित्व का रेशा-रेशा भींग रहा है...आप में ऊर्जा का संचार हो रहा है...शान्त... सागर की गहराई में उतरते जाइये...और गहरा...एक हरे चमकदार रत्न के पास...सागर के उस पन्ने के टुकड़े को हाथ में पकड़िये...उस हरे पन्ने को ध्यान से देखिये...वह प्रकाश के रूप में विस्फोट करता है...और आप अपने को सागर के तट पर पाते हैं...*दीर्घ विराम...*

चिदाकाश– अपनी चेतना को चिदाकाश में लाइये, अपनी बन्द आँखों के सामने के अंधेरे आकाश में वापस आइये...*विराम...*सामने के अंधेरे को ध्यान से देखें अनासक्त भाव से...उसमें आसक्त न हों...*विराम...*इस अन्धेरी हितैषी उष्मा में विश्राम करें...यदि कोई रंग या आकृति दिखाई पड़े, तो उसे केवल देख भर लें...फिर अपनी चेतना के प्रति सजग हो जायें...*विराम....*विचार आयें तो उन्हें भी आने-जाने दें...उनमें उलझें

नहीं...मानसिक रूप से विक्षुब्ध न हों...केवल अंधेरे में आकाश को देखते जायें...पूरी सजगता के साथ... *दीर्घ विराम*...

संकल्प– अपने संकल्प का स्मरण करें। प्रारम्भ में जो संकल्प किया था, उसे उन्हीं शब्दों में, उसी क्रम में, उसी भाव से तीन बार दुहरायें। उसी भाव और निष्ठा के साथ...*विराम*...

समाप्ति– अपनी श्वसन क्रिया के प्रति सजग हो जायें, अपने सहज श्वास के प्रति सजग हो जायें...*विराम*...श्वसन सजगता...विश्रान्त सजगता... *विराम*...विश्रान्ति के प्रति सजग हों, अपने भौतिक अस्तित्व के प्रति सजग हों...*विराम*...अपने हाथों, पैरों, भूमि पर लेटे अपने शरीर के प्रति सजग हों...*विराम*...कमरे के प्रति सजग हों, इसकी दीवारें, छत...कमरे में हो रही ध्वनि...बाहर में हो रहे शोर के प्रति सजग हों...*विराम*...आँखें बन्द ही रहें और कुछ देर शान्त पड़े रहें। पैरों की अँगुलियाँ हिलायें, हाथों की अँगुलियाँ हिलायें, पूरे शरीर को तानें और लम्बी श्वास लें। शीघ्रता नहीं करें। धीरे-धीरे आराम से उठकर बैठ जायें, हथेलियों को आपस में रगड़ कर बन्द आँखों पर रखें। अब आँखें धीरे-धीरे खोलें। योगनिद्रा का अभ्यास पूरा हुआ।

ॐ तत्सत्

अन्य मानस दर्शन

रोगहर प्रतीक के स्थान पर निम्नलिखित मानस दर्शन को रखा जा सकता है। रक्तवाहिकाओं की दुर्बलता को दूर करने तथा शरीर की रोगहर ऊर्जा को प्रवाहमान करने हेतु यह विशेष रूप से निर्दिष्ट है।

अब मणिपुर से स्वर्ण ज्योति को हृदय की ओर भेजें। नाभि से हृदय की ओर जाती हुई ऊर्जा को आप अनुभव कर सकते हैं...उसकी उष्मा को अनुभव करें...*विराम*...स्वर्ण-ज्योति से हृदय चमकने लगता है, हृदय के प्रत्येक स्पन्द के साथ प्रकाश और तीव्रतर होता जाता है, प्रत्येक स्पन्द के साथ ऊर्जा प्रकाश क्षेत्र में एकत्र होती जाती है...हृदय में आप प्रकाश को अधिक तीव्र, सुनहरा होते देख सकते हैं– और अपने शरीर के केन्द्र, जहाँ हृदय है वहाँ से उष्मा का अनुभव कर सकते हैं...*विराम*...आप हृदय से ऊर्जा को एक पुच्छल तारा के समान चलता हुआ देख सकते हैं, जिसकी पूँछ सुनहरे प्रकाश की है...*विराम*...पहले सिर की ओर...प्रत्येक

रक्तवाहिनी गर्म सुनहरे प्रकाश से भर गयी है...जो रक्त को बदलता जा रहा है...रक्त सुनहरा होता जा रहा है...*विराम*...यह स्वर्णिम ऊर्जा पूरी रक्तवाहिनियों में व्याप्त हो गयी है...उनके चारों ओर की पेशियों में भी व्याप्त हो रही है...सभी कोशिकाओं में भी...वे भी स्वर्णिम ऊर्जा से दमक रही हैं...*विराम*...अब देखिये स्वर्णिम प्रकाश की गर्मी से सिर की सभी रक्तवाहिनियाँ धीरे-धीरे पिघलती जा रही हैं। अब रक्तवाहिकायें केवल स्वर्णिम प्रकाश की डोरी के रूप में हैं। उन पर कोई झिल्ली या आवरण नहीं है...उन में रक्त अभी भी प्रवाहित हो रहा है...*विराम*...जैसे-जैसे रक्त वाहिकायें सुनहरी बनती जा रही हैं, सारे विकार, तनाव भी घुल गये हैं और शरीर से बाहर निकल गये हैं। प्राण ने सभी विकारों को गला दिया है...अब केवल शुद्ध, गर्म एवं स्पन्दनपूर्ण ऊर्जा रह गई है...*विराम*... और अब स्वर्णिम प्रकाश मन्द होता जा रहा है...रक्तवाहिकायें अपने स्वरूप में आती जा रही हैं...अब नई रक्तवाहिकाओं में रक्त प्रवाहित हो रहा है...*विराम*...प्राण के साथ हृदय में वापस चलिए...यह हृदय से दोनों हाथों में जा रहा है...वहाँ भी उसी प्रकार पिघलना प्रारम्भ होता है। इस प्रक्रिया को देखिये...*विराम*...प्रकाश रक्त वाहिकाओं में चला जा रहा है रक्त को ऊर्जान्वित करते हुए, शुद्ध करते हुए...पुनः ऊतकों में...वहाँ भी पिघलना...केवल स्वर्णिम रूप रह जाता है...*विराम*...अब प्राण को रक्त अपने साथ लेता चल रहा है...धड़ में...पैरों में...पूरे शरीर में...सम्पूर्ण शरीर विशुद्ध हो गया और सुनहरे प्रकाश से दमक रहा है। पूरा शरीर...पूरा शरीर...पूरा शरीर सोने की तरह दमक रहा है...रोगहर स्वर्णिम प्रकाश निकल रहा है...*दीर्घ विराम*...

इन अभ्यासों के सम्बन्ध में पूर्ण विवरण के लिए योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित पुस्तकों, आसन प्राणायाम मुद्रा बंध एवं योगनिद्रा का अध्ययन करें।

परिशिष्ट

निम्न रक्तचाप

इस अध्याय का समावेश उन सभी समस्याओं या कारकों की सूची को पूरा करने के लिए किया गया है, जो रक्तचाप नियमन प्रक्रिया में अव्यवस्था उत्पन्न कर सकते हैं। अधिकतर व्यक्ति भ्रमित रहते हैं कि निम्न रक्तचाप है क्या, विशेषकर तब जब इसके उपचार पर ध्यान दिया जाता है।

निम्न रक्तचाप क्या है?

जब रक्तचाप एक उम्र विशेष के लिए निर्धारित रक्तचाप के स्तर से नीचे गिर जाता है, तो इस अवस्था को निम्न रक्तचाप कहते हैं। पुन: उच्च रक्तचाप के समान ही निम्न रक्तचाप की सीमा निर्धारित करना कठिन है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से भिन्न होता है और हममें से प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न परिस्थितियों में अलग-अलग प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। दो मुख्य परिस्थितियाँ हैं, जिनके कारण निम्न रक्तचाप प्रकाश में आता है।

1. पहली स्थिति का नियमित शारीरिक परीक्षण द्वारा पता चलता है, जिसमें किसी स्वस्थ वयस्क व्यक्ति का रक्तचाप 100/60 मि.मी. या कम पाया जाता है। इस स्थिति में डॉक्टर प्राय: रोगी की खड़ी और लेटी हुई अवस्था में लिये गये रक्तचाप की तुलना करेगा। इन दोनों के बीच कोई भी अन्तर स्वसंचालित तन्त्रिका तन्त्र की अस्थिरता तथा सामान्य या तनावपूर्ण परिस्थिति में शरीर को समायोजित करने में इसकी अक्षमता को प्रदर्शित करता है। जिन लोगों का रक्तचाप खड़ी और लेटी हुई स्थिति में बराबर आता है, वे प्राय: ऐसे व्यक्ति होते हैं जिनका रक्तचाप निर्धारित सामान्य रक्तचाप परास की निम्न सीमा को स्पर्श करता है तथा जो बिना किसी समस्या के अपना जीवन गुजारते हैं। एक दृष्टि में वे

भाग्यशाली हैं, क्योंकि निम्न रक्तचाप शरीर के आन्तरिक अंगों पर कम दबाव और तनाव डालता है।

2. दूसरा समूह उन लोगों का है, जो निम्न रक्तचाप के लक्षणों से पीड़ित हैं। ये लक्षण प्राय: लेटी या बैठी हुई अवस्था से अचानक खड़े होने पर परिलक्षित होते हैं। इन लक्षणों में कमजोरी, सिर में हल्केपन का अनुभव, ऊबकाई, उदर के ऊपरी भाग का अन्दर घसकने का अनुभव और बेहोशी शामिल हैं।

इन रोग लक्षणों का कारण क्या है?

यौगिक दृष्टि से निम्न रक्तचाप के लक्षण मानसिक तनाव तथा अनुपयुक्त जीवन शैली से दुर्बल हुए स्वसंचालित तन्त्रिका तन्त्र में असन्तुलन के कारण परिलक्षित होते हैं। यह प्राणशक्ति को घटाता है, जिससे हमारे शरीर के कार्यकलाप बुरी तरह प्रभावित हो जाते हैं।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के अनुसार बेहोशी या मूर्च्छा के दो मुख्य कारण होते हैं, ये दोनों ही त्वचा और आमाशय की रक्त वाहिकाओं के प्रतिवर्त्त परिसरीय विस्फारणों से होते हैं, जिससे रक्त अग्रांग पर एकत्र होने लगता है और परिणामत: मस्तिष्क को पहुँचने वाले रक्त की मात्रा में कमी हो जाती है।

1. वाहिका दौरा– ये प्राय: भावनात्मक विक्षुब्धता, जैसे, भय, घृणा और आश्चर्य के कारण उत्पन्न होते हैं, उदाहरणार्थ– किसी दुर्घटनास्थल या रक्तरंजित घटनास्थल पर। दर्द, भोजन का अभाव, गर्मी और घुटन भरा माहौल तथा दीर्घ काल तक खड़े रहना सामान्यत: निम्न रक्तचाप प्रवण बना देते हैं। दौरे से रोगी निस्तेज हो जाता है तथा उसका रक्तचाप और हृदय गति घट जाती है। इस स्थिति में रोगी को आरामदायक स्थिति में लिटा देना चाहिए, ताकि रक्त मस्तिष्क की ओर प्रवाहित हो और दौरा स्वयं ही शान्त हो जाये।
2. संस्थितिक निम्न रक्तचाप– सामान्यत: ऐसे वृद्ध व्यक्तियों को होता है, जो किसी रोग से पीड़ित हैं या स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं। कुछ दवाएँ भी अवांछित पार्श्व प्रभाव के रूप में इसका कारण हो सकती हैं। यह प्राय: अचानक खड़े होने या बहुत देर तक खड़े रहने से, विशेषकर उष्ण वातावरण में होता है। परेड में खड़े हुए सैनिक प्राय: इसके कारण बेहोश हो जाते हैं।

उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्तियों में भी निम्न रक्तचाप के लक्षण पाये जा सकते हैं। हो सकता है उन्होंने अत्यधिक मात्रा में उच्च रक्तचाप निरोधी दवायें ले ली हों या वे गंभीर व्याधि के पश्चात् अत्यधिक दुर्बल हो गये हों या फिर अत्यधिक गर्मी और घुटन भरे माहौल के कारण भी ऐसा हो सकता है। सामान्यत: बढ़े हुए रक्तचाप (220/110 या 160/110 भी) के रोगी (सामान्य रक्तचाप 120/80) पर भी निम्न रक्तचाप के लक्षणों का अनुभव कर सकते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि 120/80 उनके लिए निम्न रक्तचाप है। उनका शरीर सामान्य से उच्च रक्तचाप का अभ्यस्त हो गया है, विशेषकर यदि वे धमनी काठिन्य से पीड़ित हैं, तो उन्हें अपने ऊतकों में पोषक तत्त्व और ऑक्सीजन भरने के लिए उच्च रक्तचाप की आवश्यकता होती है।

रक्तचाप का कम होना विपत्तिकर भी हो सकता है, इससे हल्का या गम्भीर दौरा भी पड़ सकता है। अत: जब हम निम्न रक्तचाप की चर्चा करते हैं, तो हमें व्यक्ति की उम्र, उसके स्वास्थ्य और शारीरिक स्थिति के सन्दर्भ में देखना चाहिए।

निम्न रक्तचाप के अन्य गम्भीर कारण भी हैं, जैसे, हृदय की कुछ समस्याएँ, रक्ताल्पता, आदि। ऐसे सभी लोगों को जो सामान्य निदान रहित लक्षणों से पीड़ित हैं, सलाह दी जाती है कि वे किसी योग्य चिकित्सक से अपना समुचित शारीरिक परीक्षण करवा लें।

निम्न रक्तचाप का उपचार कैसे करना चाहिए?

उच्च रक्तचाप के समान ही निम्न रक्तचाप के लिए भी कोई विश्वसनीय चिकित्सा विधि उपलब्ध नहीं है। निश्चय ही किसी भी व्याधि या दुर्बलता का चिकित्सीय उपचार किया जाना चाहिए तथा शरीर को समुचित आहार और विश्राम के द्वारा सबल बनाना चाहिए। फिर भी प्राय: रोग के लक्षण बने रहते हैं, इन्हें कुछ सरल योगाभ्यासों, जैसे–सूर्यनमस्कार, नाड़ीशोधन एवं भस्त्रिका प्राणायाम द्वारा अच्छी तरह दूर किया जा सकता है। सर्वोत्तम लाभ प्राप्त करने के लिए आसन एवं प्राणायाम का अभ्यास दिन में दो बार करना चाहिए। प्रात: आसन एवं प्राणायाम, शाम के भोजन के पूर्व कुछ सरल अभ्यास तथा सोने के पूर्व नाड़ीशोधन एवं योगनिद्रा। निम्न रक्तचाप के उपचार के लिए यौगिक अभ्यास, पवन मुक्तासन भाग 1, नाड़ीशोधन एवं

भस्त्रिका प्राणायाम तथा योगनिद्रा से प्रारम्भ होता है। यह शरीर को धीरे-धीरे सबल बनाने, स्वसंचालित तन्त्रिका-तन्त्र में निहित असन्तुलन को दूर करने (विशेषत: नाड़ीशोधन से) तथा स्वास्थ्य-लाभ में भी सहायक होगा।

कुछ सप्ताह तक उपर्युक्त अभ्यासों को करने के पश्चात् पवनमुक्तासन भाग 2, शक्तिबन्ध के आसन, सूर्यनमस्कार तथा मुख्य गत्यात्मक आसनों को, जैसे, पश्चिमोत्तानासन, धनुरासन एवं अर्ध मत्स्येन्द्रासन को शामिल किया जा सकता है। कुछ समय के बाद जैसे-जैसे व्यक्ति अधिक निपुण होता जाता है, अन्य शक्तिशाली आसन, जैसे, मयूरासन, योगमुद्रा और चक्रासन को शामिल किया जा सकता है।

भस्त्रिका प्राणायाम दुर्बल हो चुके स्वसंचालित तन्त्रिका तन्त्र को प्रभावशाली ढंग से सबल और सन्तुलित बनाता है। योग्य प्रशिक्षक की देखरेख में कभी-कभी सूर्यभेद प्राणायाम का अभ्यास भी किया जा सकता है। शरीर को शुद्ध करने और तन्त्रिका तन्त्र को सबल बनाने के लिए प्राय: कुंजल और नेति का प्रयोग भी किया जा सकता है।

उल्टे होकर या सिर के बल किये जाने वाले अभ्यासों और स्थिर आसनों से बचना चाहिए। निश्चित रूप से सभी अभ्यास योग प्रशिक्षक के मार्गदर्शन में सीखे जाने चाहिए ताकि तन्त्रिका-तन्त्र प्रारम्भिक रूप से विश्रान्त हो जाये और उसके पश्चात् धीरे-धीरे सुव्यवस्थित ढंग से सन्तुलित और सबल हो जाये। इस प्रकार निम्न रक्तचाप या उससे सम्बद्ध अन्य किसी रोग से पीड़ित व्यक्ति धीरे-धीरे निश्चित रूप से अच्छा स्वास्थ्य और सक्रिय, प्रफुल्ल जीवन का जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त कर लेते हैं।

आहार सम्बन्धी परामर्श

उच्च रक्तचाप के उपशमन में आहार महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। चिकित्सीय एवं यौगिक उपचार रक्तचाप को कम करने में सहायता ही करेंगे; इस स्तर को बनाये रखने के लिए आपको अपने भोजन में सुधार अवश्य करना चाहिए। अपने रक्तचाप को वांछित स्तर तक घटाने के लिए आपको भोजन सम्बन्धी उस आधारभूत पथ्यापथ्य का पालन करना चाहिए जिसकी अनुशंसा नीचे की गई है।

इस पथ्यापथ्य का आधार है अल्प लवण तथा नियन्त्रित कैलोरी युक्त शाकाहारी भोजन। इसका विविध प्रभाव होता है– रक्तचाप और भार में कमी तथा समग्र स्वास्थ्य में सुधार। यह स्मरण रखें कि हम आपको अच्छे स्वास्थ्य के लिए केवल परामर्श दे रहे हैं, किन्तु आपको उन्हें अपनी परिस्थितियों के अनुसार सामान्य ज्ञान के आधार पर स्वयं लागू करना चाहिए। अपने भोजन के सन्दर्भ में कट्टर मत बनिये, क्योंकि यह केवल आपके तनाव को ही बढ़ायेगा। क्रमश: अपनी जीवन शैली में यौगिक विधि से खान-पान के तरीके का धीरे-धीरे सजग और विश्रान्त ढंग से समावेश कीजिये। आप एक सिद्धान्त को अन्धाधुन्ध स्वीकार नहीं कर रहे हैं, बल्कि इससे आप ज्ञान प्राप्त करेंगे, जो आपकी शारीरिक सजगता और स्वास्थ्य को उन्नत करेगा।

हमने अपने अनुभवों से पाया है कि शाकाहारी आहार अच्छे स्वास्थ्य एवं यौगिक रीति से रहन-सहन में सबसे अधिक सहायक होता है। अनुसन्धानों के परिणाम दिखाते हैं कि मांसाहार उच्च रक्तचाप, दीर्घकालिक कैंसर, हृदयाघात और कुछ जोड़ों के रोग आदि व्याधियों की उत्पत्ति में सहायक है। माँस संतृप्तवसीय अम्लों एवं कोलेस्ट्रॉल का मुख्य स्रोत भी है, ऐसा माना जाता है कि धमनियों के कठोर होने और परिणामत: रक्तचाप वृद्धि में भी

इसकी भूमिका है। शाकाहारी आहार के पक्ष में अनेक तर्क संगत दलीलें हैं, किन्तु फिर भी हर व्यक्ति तो माँस का सेवन छोड़ना नहीं चाहता। कुछ विशेष प्रकार के माँस, अन्य की अपेक्षा आपके लिए अधिक अच्छे पाये गये हैं। ये तथाकथित 'सफेद' माँस हैं, रक्ताभाव के कारण इन्हें सफेद माँस कहा जाता है। इनमें चूजे का कलेजा और वसारहित मछली शामिल हैं। यदि शाकाहारी भोजन आपके लिए अधिक महँगा है, तो इस माँस को कम-से-कम खाने का प्रयास कीजिये।

कभी ऐसा समय भी आता है, जब हमें अपना शाकाहारी भोजन का नियम तोड़ना पड़ सकता है, भले ही हमने स्वयं के लिए चुना हो। कुछ सामाजिक अवसरों की माँग होती है कि हम वह भोजन भी खायें जो हमें पसंद नहीं है, ताकि हमारा आतिथेय अप्रसन्न न हों। फिर भी हमें यह बात ध्यान रखनी चाहिए कि यदि हमारी जीवन शैली में मूलत: स्वास्थ्यकर आदतें शामिल हैं, तो यदाकदा व्यतिरेक नुकसान नहीं पहुँचायेगी, पर संयम उत्तम होगा। हम प्रतिदिन जो आहार लेते हैं, वही निर्धारित करता है कि हम बीमार होंगे या स्वस्थ रहेंगे।

उच्च रक्तचाप के लिए आहार

सम्भवत: उच्च रक्तचाप से पीड़ित व्यक्ति के लिए आहार का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष है– अल्प लवण और वसा की अल्प मात्रा। कम नमक का सेवन दोनों में से अधिक महत्त्वपूर्ण है और यह आपके रक्तचाप को कम करने में सहायक होगा। इसका अर्थ यह हुआ कि भोजन पकाते समय नमक नहीं डालना चाहिए और न ही पकने के पश्चात् डालना चाहिए।

अपने भोजन में नमक डालने के स्थान पर अन्य मसालों या जड़ी-बूटियों का उपयोग करें। वे स्वाद और सुगन्ध को आश्चर्यजनक रूप से बढ़ाते हैं। स्वाद को बढ़ाने के लिए वह विधि अपनायें जो हम बिहार योग विद्यालय, मुंगेर (भारत) में अपनाते हैं। भोजन को पहले कम वनस्पति तेल में हल्का-हल्का भून लिया जाता है और उसके बाद पानी मिलाया जाता है। इस ढंग से आप असंतृप्त वसीय अम्लों का सही सन्तुलन प्राप्त कर लेते हैं, जो अच्छे स्वास्थ्य के लिए अत्यावश्यक है, और कोलेस्ट्रॉल भी सही मात्रा में मिलता है। भोजन न तो चिकनाई से भरा हुआ होता है और न ही स्वाद रहित। विशेषत: जब जड़ी-बूटियों को मिलाया जाता है, तो स्वाद बढ़ जाता है और स्वास्थ्य भी उत्तम बना रहता है।

भोजन को अधिक तलना छोड़कर उसे पकाने की पर्याप्त वैकल्पिक विधियाँ होनी चाहिए, ताकि आप अपने भोजन से नमक और वसा को अलग कर सकें। पूर्ण आहार कच्चा, भूना हुआ, सेंका हुआ या भाप में पका होना चाहिए; तला हुआ नहीं होना चाहिए।

आप बिना नाश्ता किये भी रह सकते हैं और यह आपके लिए सहायक होगा। नियमित समय पर भोजन कीजिये और अतिभोजन की अपेक्षा अल्प मात्रा में खाइये। आश्रम का भोजन व्यक्ति के भार को सन्तुलित करता है, इसमें वसा और लवण की मात्रा न्यूनतम होती है। इसमें मुख्य घटक हैं–

- सब्जियाँ (पहले हल्का तलकर फिर उबाली गई)
- मूँग, मसूर, चना दाल
- चपाती
- चावल
- कुछ फल और कच्ची सब्जियाँ, सलाद

यह आहार स्वास्थ्य को उन्नत बनाये रखने के लिए विटामिन, खनिज, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा की आवश्यक मात्रा की पूर्ति करता है। न तो यह भोजन पचने के लिए अतिरिक्त ऊर्जा की माँग करता है और न जैव-विष उत्पन्न करता है। वस्तुत: यह शुद्धिकारक आहार है, जो हमें तृप्ति और अच्छे पोषाहार की अनुभूति देता है। आप यदा-कदा थोड़ा अधिक खा सकते हैं, जैसे– मिठाइयाँ आदि, किन्तु इसे अपनी आदत मत बनाइये।

उन सभी भोजनों से परहेज कीजिये जिनमें–

1. नमक, जैसे, टीन या बोतल में बंद माँस, भोजन जिनमें परिरक्षक पदार्थ मिलाये गये हों तथा चटनी आदि।
2. सोडाबाईकार्बोनेट, जैसे, बिस्कुट और केक।
3. अत्यधिक वसा, जैसे, तला हुआ भोजन, मक्खन, मार्जरीन, माँस सूप, चर्बी, सूअर की चर्बी, वसीय माँस-मछली (बत्तख, सार्डीन, साल्मन आदि) अण्डे की जरदी, मलाई, आइसक्रीम, पेस्ट्री, चॉकलेट आदि।

मोटापा एवं चर्बी को कम करना

यह एक सामान्य तथ्य है कि जिन व्यक्तियों का चयापचय मन्द होता है, वे अपेक्षाकृत जल्दी मोटे होते हैं। फिर भी हम केवल तभी मोटे होते हैं, जब हम अति भोजन करते हैं। पूर्व के परिच्छेदों में दिये गये परामर्शों के पालन द्वारा

अतिरिक्त चर्बी और कोलेस्ट्रॉल तथा शरीर के भार को कम करना सम्भव है। जब हम योग के नियमों का पालन करते हैं तो यह स्वाभाविक रूप से होता है।

भार कम करने की प्रक्रिया में सहायक बनने के लिए मुख्यत: कच्चे फलों, सब्जियों और दाल का सेवन कीजिये। कार्बोहाइड्रेट, शक्कर (किसी भी रूप में) और वसा, उदाहरणार्थ–ब्रेड, केक, दूध, मलाई, पनीर (कम वसीय पनीर को छोड़कर), मुरब्बा, सूखे फल (मेवा), मदिरा आदि के अत्यधिक सेवन से बचिये।

आहार को सन्तुलित करना

जब आप अन्तिम रूप से स्वयं के लिए 'क्या खाना चाहिए' और 'क्या नहीं' का चयन कर लेते हैं, तब आप स्वचयनित पथ्यापथ्य पर चलना प्रारम्भ कर सकते हैं। जब आप भोजन पकायें, तो उसे सावधानी और सजगता से पकायें, इससे आप स्वयं स्वाद में अन्तर का अनुभव करेंगे। इसके बाद यदि आप विश्रान्त एवं आरामदायक वातावरण में अच्छे साथियों के साथ खाते हैं, तो स्वाद और प्राण की मात्रा और भी अधिक बढ़ जाती है। जल्दी-जल्दी और अपर्याप्त भोजन करना केवल अनुकम्पी उद्दीपन को और अधिक बढ़ायेगा ही। विश्रान्ति के द्वारा हम परानुकम्पी तन्त्र को क्रियाशील बनाते हैं, पाचक रस सन्तुलित होते हैं और सजगता बढ़ जाती है। यह स्वाभाविक रूप से अनुकम्पी तन्त्र के अति उद्दीपन को मन्द करता है तथा रक्तचाप को घटाता है।

जीवन के स्तम्भ

अतीन्द्रियदर्शी प्राणिक शरीर को भौतिक शरीर के चारों ओर एक रंगीन ज्योतिर्मयी आभा या प्रभामण्डल के रूप में देखते हैं, जैसे सूर्य ग्रहणग्रस्त चन्द्रमा के पीछे से चमक रहा हो। किर्लियन फोटोग्राफी ने शायद इस प्रभाव का अभिग्रहण किया है और हमारे जीवन के सामान्य रूप से अदृश्य पक्ष को हम सभी के लिए प्रत्यक्ष बना दिया है। प्राणिक शरीर ऊर्जावाही नाड़ियों से मिलकर बना है। ये नाड़ियाँ सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण या केन्द्रीय नाड़ियों– इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना के चारों ओर व्यवस्थित हैं। भौतिक शरीर इस अभिविन्यास के अनुरूप होता है, क्योंकि वह जैविक रूप से प्राणिक शरीर से, जो इस शरीर-यन्त्र को क्रियाशील बनाने के लिए धारा और शक्ति की आपूर्ति करता है, अन्तर्सम्बन्धित होता है। प्राण ही मन के प्रत्येक पक्ष, चयापचय और इन्द्रिय कर्मों में व्याप्त है और उन्हें ऊर्जान्वित करता है।

जब ऑपरेशन टेबल पर व्यक्ति के आमाशय को चीरा जाता है, तब रक्तवाहिकाओं के स्पन्दन को देखना सम्भव है। धमनियों और शिराओं को एक-दूसरे से अलग-अलग स्पष्टता से देखा जा सकता है, हालाँकि वे पास-पास अवस्थित होती हैं। मेरुदण्ड की बगल में मुख्य वाहिकायें हृदय से रक्त लाते, ले जाती दिखाई देती हैं। मेरुदण्ड के बायीं ओर स्थित महाधमनी हृदय से रक्त को नीचे की ओर ले जाती है, जबकि दायीं ओर स्थित निम्न महाशिरा रक्त को हृदय की ओर ले जाती है। ठीक इसी प्रकार इड़ा नाड़ी प्राणिक शरीर के बायीं ओर तथा पिंगला नाड़ी दायीं ओर प्रवाहित होती है। इन दोनों के मध्य सुषुम्ना नाड़ी (आध्यात्मिक प्रवाहमार्ग या मध्य मार्ग) प्रवाहित होती है। इड़ा और पिंगला प्रकृति के द्वैत सिद्धान्त को प्रस्तुत करती हैं। इड़ा स्त्री शक्ति, यिन, शीत, निष्क्रिय, पदार्थ, चन्द्रमा, कल्पना शक्ति, ऋणात्मकता और

रजत धातु को प्रस्तुत करती है। पिंगला पुरुष शक्ति, यांग उष्मा, सक्रियता, ऊर्जा, सूर्य, गतिशीलता, धनात्मकता और स्वर्ण धातु को प्रस्तुत करती है। सुषुम्ना, सन्तुलन और संश्लेषण दोनों की आदर्श स्थिति है, मध्य मार्ग या 'उत्कृष्ट पथ'।

योग से प्राप्त अन्तदृष्टि से परिसंचरण तन्त्र प्राणिक शरीर में स्थित नाड़ियों के जाल के प्रतिबिम्ब के सदृश दिखाई देता है। इसमें पिंगला से संगत जो धमनियाँ हैं, वे हैं हृदय से बाहर की ओर जाने वाली धमनियाँ, लाल, गतिशील, शरीर को रक्त की आपूर्ति करने वाली और उसकी गर्माहट का नियमन करने वाली। इड़ा से संगत वे शिरायें हैं, जो हृदय की ओर जाती हैं, वे नीली एवं निष्क्रिय हैं, शरीर की कोशिकाओं से अपशिष्ट पदार्थों को दूर ले जाती हैं तथा शरीर में उष्णता के नियमन से सम्बद्ध नहीं हैं। धमनियों और शिराओं के ध्रुवत्व के मध्य सम्पर्क सूत्र के रूप में हृदय और कोशिकायें सुषुम्ना को प्रदर्शित करते हैं, जो मध्य मार्ग है।

शारीरिक स्तर पर परिसंचरण तन्त्र का सक्रिय, गतिशील घटक-धमनियाँ-मेरुदण्ड के बायीं ओर स्थित हैं जबकि शिरायें-निष्क्रिय और ग्रहणशील घटक-दायीं ओर स्थित हैं। सुषुम्ना नाड़ी धमनी और शिराजाल के मध्य मेरुदण्ड में स्थित है।

इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध को पूर्ण रूप से समझने के लिए हमें एक बिन्दु की कल्पना करनी चाहिए। यह सृष्टि की उत्पत्ति के पूर्व का बिन्दु है। कल्पना कीजिये कि आपने इस बिन्दु को दो भागों में विभाजित कर दिया है और ध्रुवों को एक-दूसरे से दूर कर दिया है। अब यहाँ तीन घटक हैं– एक छोर पर इड़ा, दूसरे पर पिंगला और दोनों के मध्य सुषुम्ना। यह प्रतीकात्मक निरूपण ब्रह्माण्ड के स्थूल स्तर तथा हमारे शरीर के सूक्ष्म स्तर दोनों पर सही बैठता है। पृथ्वी के चौबीस घण्टे के दैनिक गति से दिन और रात होते हैं। सूर्य के 12 महीनों के परिक्रमण से सर्दी और गर्मी का मौसम आता है। भौतिक शरीर में धमनियाँ और शिरायें अवस्थित हैं, जो परिसंचरण तन्त्र निर्मित करती हैं। यह द्वैत तन्त्र सभी वस्तुओं में एक ही ईकाई के दो विपरीत ध्रुवों के रूप में देखा जाता है।

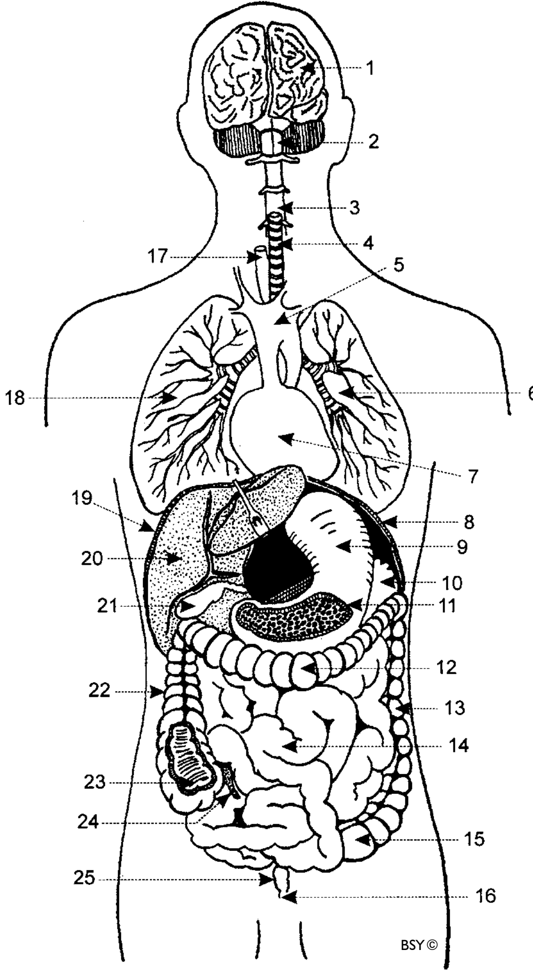
योग दर्शन में यह कहा जाता है कि सुषुम्ना को जागृत करने और उच्च चेतना की अवस्था में पहुँचने के लिए हमें इड़ा और पिंगला को सन्तुलित करना चाहिए। अर्थात् हमें मन और शरीर, कार्य और विश्राम, आन्तरिक सजगता

और बाह्य सजगता के बीच तथा अपने जीवन के सभी पक्षों में सन्तुलन स्थापित करना चाहिए। इससे हम अपने स्थूल और सूक्ष्म अस्तित्व के बीच सामन्जस्य और सन्तुलन स्थापित करते हैं और वास्तविक गूढ़ ज्ञान के क्षेत्र में कदम रखते हैं।

यह ज्ञान ध्यान में प्राप्त होता है तथा व्यष्टि से समष्टि की ओर विकास प्रक्रिया आगे बढ़ती है। हृदय से रक्त का आवागमन आध्यात्मिक यात्रा में प्रतिबिम्बित होता है। स्थूल जगत् में मनुष्य अहं-चेतना युक्त मन और उसकी असंख्य व्यष्टियों में विभक्तिकरण की प्रक्रिया द्वारा ब्रह्माण्ड से एकत्व की स्थिति से दूर होता है, और फिर पुनः मूल सायुज्य की ओर वापस आता है। प्रत्येक धमनी का लघु जगत् एक ही स्थान से आरम्भ होता है, वह है हृदय। फिर यह असंख्य शाखाओं, प्रशाखाओं में विभाजित हो जाती है तथा छोटी होती जाती है और अपनी मूल ईकाई एवं हृदय से विलग होती जाती है। यदि हम अपने ध्यान को अपनी सृष्टि के मूल स्रोत की ओर केन्द्रित करें, तो हम सब उस दैवी ऊर्जा की कोशिकाओं के सदृश हैं।

जब हम अपनी चेतना को सुषुम्ना के स्तर तक विस्तारित कर लेते हैं, तो हम इस एकत्व की भावना के प्रति सजग हो जाते हैं कि द्वैत भी अद्वैत है। यह अवस्था इड़ा और पिंगला के सन्तुलन से प्राप्त होती है और यह हमारे स्वसंचालित तन्त्रिका-तन्त्र को सन्तुलित कर उच्च रक्तचाप का निवारण करती है।

आंतरिक अंग



1. मस्तिष्क
2. अनुमस्तिष्क
3. मेरुदण्ड
4. श्वास प्रणाल
5. महाधमनी
6. बायाँ फुफ्फुस
7. हृदय
8. मध्यच्छद
9. आमाशय
10. प्लीहा
11. अग्न्याशय
12. अनुप्रस्थ बृहदान्त्र
13. अवरोही बृहदान्त्र
14. क्षुद्रान्त्र
15. अवग्रह बृहदान्त्र
16. गुदा
17. ग्रासनली
18. दाहिना फुफ्फुस
19. मध्यच्छद
20. यकृत
21. पित्ताशय
22. आरोही बृहदान्त्र
23. उण्डुक
24. उण्डुक पुच्छ
25. मलाशय

ग्रन्थ-सूची

कारण

[1] आर. के. वालेस एवं एच. बेन्सन, 'फिजियोलॉजी ऑफ मेडिटेशन', अमेरिका वैज्ञानिक अंक 226, सं. 2, फरवरी 1972, पृष्ठ सं. 84-90.
आर. के. वालेस, एच बेन्सन, ए. एफ. विल्सन, एम. गैरेट, 'डिक्रीज्ड लेक्टेट ड्यूरिंग ट्रान्सन्डेन्टल मेडिटेशन', प्रायोगिक जीव विज्ञान पर अमेरिका समाज-संघ द्वारा किये गये कार्य, अंक 30, सं. 2, मार्च-अप्रैल 1971, पृष्ठ 376.
डब्लू. ई. हकबी, 'रिलेशनशिप ऑफ पायरूवेट एण्ड लेक्टेट ड्यूरिंग एनारोबिक मेटाबोलिज्म' चिकित्सीय अनुसन्धान दैनिक-पत्र, अंक 37, 1958, पृष्ठ सं. 244-254.

[2] एम. फ्राइडमैन एवं आर. एच. रोजनमैन, 'टाइप ए बिहेवियर एण्ड यूअर हर्ट, नॉफ, न्यूयार्क, 1974.

[3] पूर्वांकित

[4] इ. गेलहार्न एवं डब्ल्यु, एफ. कैलि, 'आटोनॉमिक नर्वस सिस्टम इन साइकियाट्रिक डिसार्डर', जीव वैज्ञानिक मनोविकार-जोसेफ मेन्डल्स (सं) न्यूयार्क, जॉन विले एन्ड सन्स, 1973, अ. 11 पृष्ठ सं. 235-263.

[5] डी. औरमे-जॉनसन, 'आटोनॉमिक स्टेबिलिटी एण्ड ट्रान्सडेन्टल मेडिटेशन', मनोकायिक चिकित्सा, अंक 35, सं. 4, जुलाई-अगस्त 1973, पृष्ठ सं. 341-9.

[6] डी. फन्केन्स्टीन, 'द फिजियोलॉजी ऑफ फीयर एण्ड एन्गर', अमेरिकी वैज्ञानिक, मई 1955.

[7] डब्ल्यु, टिलर पी. एच. डी., 'कान्शसनेस, रेडिएशन एण्ड द डेवलेपमेन्ट ऑफ सेन्सरी सिस्टम', उपचार के आयाम, एक निबन्ध संग्रह (पैरासाइकोलॉजी एवं मेडिसिन अकादमी से प्राप्त प्रतिलिपि), 1972, पृष्ठ 61-85.

[8] ई. ई. वान बाउण्ट तथा अन्य, 'पेनेट्रेशन ऑफ लाइट इन टू द ब्रेन्स ऑफ मैम्यल्स', न्यूयार्क विज्ञान अकादमी के आख्यान, 117, 1964, पृष्ठ 217-224.

[9] के. एस. गोपाल, वी. अनन्तरामन, एस. डी. निशीथ, ओ. पी. भटनागर, 'द इफेक्ट ऑफ योगासन ऑन मस्क्यूलर टोन एण्ड कार्डियो रेस्पिरेटरी एडजेस्टमन्ट', योगा लाइफ, मई 1975, पृष्ठ 3-11.

उपचार

[10] प्रो. एल. के. ह्वाइट, 'इन्टरनेशनल कम्पेरिजन ऑफ मेडिकल केयर' साइन्टिफिक अमेरिकन, अंक 233, सं. 2, अगस्त 1975.

[11] टी. पासेक डब्लू रोमनोवस्की तथा अन्य, 'स्टडीज ऑन साइकोलॉजिकल एण्ड फिजिओलॉजिकल इवोल्यूशन ऑफ द योग सिस्टम ऑफ एक्सरसाइजेज इन करेन्ट फिजिकल एजुकेशन' एफ. आई. ई. पी बुलेटिन ग्रन्थ 41, सं. 3, जुलाई-सितम्बर 1971, पृष्ठ 90-92.

[12] पूर्वांकित पृष्ठ 91.

[13] टी. पासेक, डब्ल्यु. रोमनोवस्की तथा अन्य, 'स्टडीज ऑन फिजिओ-लॉजिकल एण्ड साइकोलॉजिकल इवोल्यूएशन ऑफ द योग सिस्टम ऑफ एक्सरसाइजेस', वाइक फिज-स्पोर्ट, 1967, 3, पृष्ठ 139-170.

[14] वाइनेकर कुवल्यानन्द, 'यौगिक थेरापी– इट्स बेसिक प्रिंसिपल एण्ड मैथड्स', स्वास्थ्य मंत्रालय भारत सरकार, नयी दिल्ली 1963.

[15] के. एस. गोपाल तथा सहयोगियों द्वारा किये गये कार्य से उद्धृत, पृष्ठ 9.

[16] आर. के. वालेस एण्ड एच. बेन्सन के कार्यों से उद्धृत, पृष्ठ 81.

[17] के. एस. गोपाल तथा सहयोगियों के कार्य से उद्धृत, पृष्ठ 9.

[18] 'इलेक्ट्रॉनिक एविडेन्स ऑफ और, चक्र इन यू. सी. एल. ए. स्टडी' ब्रेन माइण्ड बुलेटिन, अंक 3, सं. 9, 20 मार्च 1978.

[19] 'रूमेनियन्स डेवलेप डॉयनामिक किर्लिंयन टाइप प्रोसेस', ब्रेन माइण्ड बुलेटिन, अंक 3, सं. 10, 3 अप्रैल 1978.

[20] एच. मोटोयामा, 'हाइप्नोसिस, साइकोसिस एण्ड रिलिजियस एक्सपीरीएन्स', आई. ए. आर. पी., रिसर्च फॉर रिलिजन एण्ड पैरासाइकोलॉजी, दिसम्बर 1976, ग्रन्थ 2, सं. पृष्ठ।

[21] पतंजलि योग संस्थान, हैदराबाद, भारत, 30 सितम्बर 1972 को समाप्त होने वाले सप्ताह का साप्ताहिक प्रगति प्रतिवेदन।

[22] के. के. दाँते, एस. एन. देशमुख, सी. पी. डालबो, (स्व.) एस. एल. विनेकर, 'शवासन– ए यौगिक एक्सरसाइज इन द मैनेजमेन्ट ऑफ हाइपर-टेन्शन', एन्जिओलॉजी, पृष्ठ सं. 325-333, 1969.

[23] पूर्वांकित पृष्ठ 333.

[24] डॉ. डी. डेबिड नेशनल टेटलर, 24 जून 1963.

[25] डॉ. डी. शपिरो तथा सहयोगी, 'इफेक्ट ऑफ फीडबैक एण्ड रीइन्फोर्समेन्ट ऑन द कन्ट्रोल ऑफ ह्यूमन सिस्टोलिक ब्लड प्रेशर', साइन्स, 1960, 163, पृष्ठ 588-90.

[26] जे. ब्रेनर एण्ड आर. क्लेमैन, 'लर्नड कन्ट्रोल ऑफ डिक्रीज इन सिस्टोलिक ब्लड प्रेशर', नेचर, 1970, 226 पृष्ठ 1063.

[27] ए. क्रिस्टी तथा जे. वाइटल, 'एपरेन्ट कन्डीशनिंग ऑफ हाई ब्लडप्रेशर एक प्रायोगिक अध्ययन। (एम. करलाइन्स तथा एल. एम. एन्ड्रयूज एबाकस द्वारा लिखित पुस्तक 'बायोफीडबैक-टर्निंग ऑन द पावर्स ऑफ यूअर माइण्ड' से अप्रकाशित हस्त प्रतिलिपि 1973, पृष्ठ 28 सेन फ्राँसिस्को, वेटेरन एडमिन, हॉस्पिटल 1971)

[28] जी. ल्यूस ई. पेपर, 'बायोफीड बैक– माइण्ड ओवर बॉडी, माइण्ड ओवर माइण्ड' न्यूयार्क टाइम्स मैगेजिन, 12-9-71, पृष्ठ 136.

[29] टी. विस तथा बी. एन्जल, 'एपरेन्ट कन्डीशनिंग ऑफ हार्ट रेट इन प्रीमैच्योर वेन्ट्रीकुलर कॉन्ट्रैक्शन' साइकोसोमेटिक मेडिसिन, 1971, 33, पृष्ठ 391.

[30] जी. ल्यूस तथा ई. पेपर के कार्य से उद्धृत, पृष्ठ 134.

[31] डॉ. एच. सी. पटेल 'द लनसेट, नव 10, 1973, अंक 2, पृष्ठ 1053-5.

[32] आर. के. वालेस, 'द फिजियोलॉजिकल इफेक्ट्स ऑफ ट्रान्सन्डेन्टल मेडिटेशन' पी-एच. डी. शोध प्रबन्ध, शरीर-विज्ञान विभाग, कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय लॉस एन्जिल्स 1970.

[33] जे. पी. बनक्वेट, 'स्पेक्ट्रल एनालिसिस ऑफ द ई. ई. जी. इन मेडिटेशन', इलेक्ट्रोइन्सेफ्लोग्राफ एण्ड क्लिनिकल न्यूरो फिजिक्स, 35:143-151, 1973.

[34] जे. एलिसन, 'रेस्पीरेटरी चेन्जेस ड्यूरिंग द प्रैक्टिस ऑफ द टेकनिक ऑफ ट्रान्सेन्डेन्टल मेडिटेशन', लेनसेट सं. 7651. लन्दन, 18 अप्रैल 1970 पृष्ठ 833-34.

[35] डॉ. पी. कोरी, 'एयर वे कण्डक्टेन्स ऑफ ऑक्सीजन कन्जप्शन इन ह्यूमन सब्जेक्ट्स वाया ए वेकफुल हाइपोमेटाबॉलिक टेकनिक', नेशनल जेविश हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च हॉस्पिटल, डेनवर, कोलोरेडो, अप्रैल 1973, एच. एच.ब्लूमफील्ड (एम. डी), एम. पी. कैन, डी. टी. जेफ, आर. बी. कोरी, द्वारा लिखित पुस्तक– टी. एम.– डिस्कवरिंग इनर एनर्जी एण्ड ओवर कमिंग स्ट्रेस, पृष्ठ 70-71, अनविन 1075.

[36] टी. राउट, 'ट्रान्सेन्डेन्टल मेडिटेशन एण्ड रिलेक्सड स्टेट्स– ए पाइलट स्टडी कम्पेयरिंग फिजियोलॉजिकल पैरामीटर्स', पूर्वांकित, पृष्ठ 82.

[37] आर. के. वालेस तथा एच. बेन्सन, 'फिजियोलॉजी ऑफ मेडिटेशन', साइन्टिफिक अमेरिकन, अंक 226, सं. 2, फरवरी 1972, पृष्ठ 88.

[38] आर. के. वालेस तथा एच बेन्सन के कार्यों से उद्धृत, पृष्ठ 87.

[39] पूर्वांकित पृष्ठ 90.

[40] इ. गेलहॉर्न तथा डब्ल्यू, एफ. केलि के कार्यों से उद्धृत, पृष्ठ 235-6.

[41] के. के. दाँते तथा सहयोगियों के कार्यों से उद्धृत, पृष्ठ 325-333

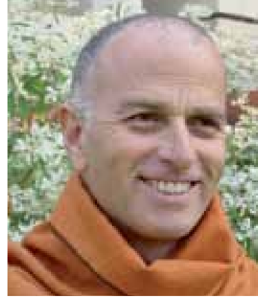
[42] आर. के. वालेस एच. बेन्सन ए. एफ. विल्सन, 'ए वेकफुल हाइपोमेटाबॉलिक फिजियोलॉजिक स्टेट' अमेरिकन जनरल ऑफ फिजियोलॉजी, अंक 2221, नं 3 सितम्बर 1971 पृष्ठ 795-9.

[43] एच. बेन्सन तथा आर. के. वालेस, 'डिक्रीज्ड प्रेशर इन सब्जेक्ट्स हू प्रैक्टिस मेडिटेशन' सरकुलेशन अंक अक्टूबर 1972 (सप्लीमेन्ट 11). पैतालीसवीं वैज्ञानिक सभा का सारांश।

[44] एस. जी. बन्डीन, 1948 वीर्षिक पुस्तक एकेडमी ऑफ एप्लाइड ऑस्टियोपैथी।

[45] टी. एल. नार्थप, 'मैनीपुलेटिव मैनेजमेन्ट ऑफ हाइपर टेन्शन' 1957 वार्षिक पुस्तक (एकेडेमी ऑफ एप्लाइड ऑस्टियोपैथी पृष्ठ 43).

[46] टी. नोरिस, 'ए स्टडी ऑफ द इफेक्ट ऑफ मैनीपुलेशन ऑन ब्लड प्रेशर' 1964 वार्षिक पुस्तक एकेडमी ऑफ एप्लाइड ऑस्टियोपैथी पृष्ठ 184.



डॉ. स्वामी शंकरदेवानन्द का जन्म सन् 1952 में सिडनी, ऑस्ट्रेलिया में हुआ और सन् 1977 में उनकी चिकित्सा-शिक्षा पूर्ण हुई।

सन् 1974 में स्वामी सत्यानन्द सरस्वती से उनकी भेंट हुई, जिसके फलस्वरूप वे योग और चिकित्सा-शास्त्र को एक समन्वित प्रणाली के रूप में संयोजित कर पाए। सन् 1977 में वे अन्तरराष्ट्रीय योग मित्रमण्डल अनुसंधान केन्द्र के प्रमुख संयोजक के रूप में मुंगेर आए।

सन् 1990 में उन्होंने न्यू साउथ वेल्स विश्वविद्यालय से एम.एससी. की डिग्री प्राप्त की तथा सन् 1990 से 2001 तक सिडनी योग अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्र का निर्देशन किया।

वर्त्तमान में डॉ. स्वामी शंकर-देवानन्द विश्वभर में योग का प्रचार-प्रसार करते हुए अपने गुरु के मिशन में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।



उच्च रक्तचाप पर योग का प्रभाव में उच्च रक्तचाप को योग द्वारा नियंत्रित करने सम्बन्धी उपयोगी परामर्श दिये गये हैं। प्रथम भाग में चिकित्सात्मक और यौगिक, दानों पक्षों के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक और प्राणिक प्रभावों, जीवन-पद्धति, तनाव और आनुवंशिक दृष्टिकोणों से उच्च रक्तचाप के कारणों की विवेचना की गयी है। दूसरे भाग में योगाभ्यासों के साथ-साथ जीवन-शैली, विश्रान्ति और ध्यान द्वारा उच्च रक्तचाप के नियंत्रण एवं उपचार की चर्चा है। तीसरे भाग में उच्च रक्तचाप को ठीक करने तथा सतत् स्वास्थ्य की देखभाल हेतु विशेष यौगिक विधियों का सुव्यवस्थित अभ्यास कार्यक्रम दिया गया है।



[bar code here]

ISBN : 978-81-85787-99-2